सरल रेडियो विज्ञान

351

एरियल

रेडियो लहर वर्धक — डिटेक्टर — ध्वनि वर्धक — आउट पुट भाग — लाउड स्पीकर

200 मील

150 मील

100 मील

50 मील

पृथ्वी (दिन)

आर. सी. विजय

आत्माराम एण्ड संस, दिल्ली-६

सरल रेडियो विज्ञान

सरल रेडियो विज्ञान

लेखक

रमेशचन्द विजय

B. Sc. Graduate I. E. E.

Graduate British I. R. E.

बी. एस-सी. ग्रेजुएट इन्स्टीट्यूट ऑफ इलैक्ट्रीकल इंजीनियर्स इंग्लैण्ड

ग्रेजुएट ब्रिटिश इन्स्टीट्यूट ऑफ रेडियो इंजीनियर्स

१९५७

आत्माराम एण्ड संस

प्रकाशक तथा पुस्तक-विक्रेता

काश्मीरी गेट

दिल्ली-६

प्रकाशक
रामलाल पुरी
आत्माराम एण्ड संस
काश्मीरी गेट, दिल्ली-६

मूल्य ५)

मुद्रक
श्यामकुमार गर्ग
हिन्दी प्रिन्टिंग प्रैस
क्वीन्स रोड, दिल्ली-६

भूमिका

आज के समय में किसी भी भाषा का साहित्य प्राविधिक (टैक्नीकल) साहित्य के बगैर अधूरा है । हिन्दी के राष्ट्रभाषा निश्चित हो जाने के बाद तो यह अत्यन्त आवश्यक हो गया है कि इसमें प्रचुर प्राविधिक साहित्य हो। प्रस्तुत पुस्तक इसी दिशा में एक प्रयास है ।

आज के युग में जिन अनेकों आविष्कारों ने जन-जीवन में विशिष्ट स्थान प्राप्त किया है रेडियो उनमें प्रमुख स्थान रखता है । मनोरंजन, ज्ञान, संदेश प्रसारण एवं दूरस्थ स्थानों के बीच संदेश आदान-प्रदान के लिये रेडियो का माध्यम अत्यन्त उपयोगी है। आज वह प्रस्तुत जन-जीवन का अंग बनता जा रहा है। प्रस्तुत पुस्तक में इसी विषय का सरल भाषा में वर्णन किया गया है। पुस्तक को सरल एवं संक्षिप्त बनाये रखते हुए भी यह ध्यान रखा गया है कि आवश्यक जानकारी रहने न पाये । इसके साथ-साथ विषय की जानकारी वैज्ञानिक रूप में देने का व पुस्तक का आगे ज्ञान प्राप्त करने में सहायक और रुचि उत्पन्न करने योग्य बनाने का भी प्रयास किया गया है। इस स्तर की पुस्तक में यह आवश्यक भी है।

प्रथम प्रकरण में रेडियो के कार्य का आभास दिया गया है। रेडियो के कार्य के लिये विद्युत का ज्ञान आवश्यक होने के कारण आगे के पाँच प्रकरणों में विद्युत के सिद्धान्तों एवं उपयोगों का वर्णन किया गया है । आगे के प्रकरणों में रेडियो के विभिन्न भागों एवं उनसे रेडियो किस प्रकार बनता है, यह बताया गया है । प्रकरण अठारह में एक व्यवहारिक रेडियो के वर्णन से पिछले प्रकरणों में वर्णित सिद्धान्तों को दर्शाया गया है । अंतिम दो प्रकरणों में प्रेषक के सिद्धान्त, रेडियो लहरों का एक स्थान से दूसरे स्थान तक पहुँचना और रेडियो के लिये सामान्यत: प्रयुक्त एरियलों का वर्णन किया गया है । यद्यपि प्रस्तुत पुस्तक में रेडियो सर्विसिंग का वर्णन नहीं किया गया है फिर भी सर्विसिंग में रुचि रखने वालों के लिये यह पुस्तक उपयोगी सिद्ध होगी क्योंकि सर्विसिंग के लिये भी रेडियो के सिद्धान्तों की जानकारी आवश्यक है।

भूमिका

पुस्तक में अधिकांश अँग्रेज़ी के ही प्राविधिक शब्दों का देवनागरी लिपि में प्रयोग किया गया है । अधिकतर टैक्नीकल साहित्य अँग्रेज़ी में ही उपलब्ध होने के कारण यह आगे ज्ञान प्राप्त करने में सहायक रहेगा व शिक्षक भी इसे उपयुक्त पायेंगे ।

अन्त में उन अनेकों अँग्रेज़ी पुस्तकों के लेखकों के प्रति आभार प्रदर्शित करना चाहता हूँ जिनकी पुस्तकों से प्रस्तुत पुस्तक के कुछ अंश लिखने में यथेष्ट सहायता मिली । साथ ही मैं अपने मित्र श्री माधव गणेश परांजपे M. Sc. का भी धन्यवाद देता हूँ जिन्होंने पुस्तक के लिये अनेकों सुझाव दिये व सुलेखन में सहायता दी ।

किसी भी पुस्तक में त्रुटियों की सम्भावना रहती है अतः मैं पाठकों से निवेदन करता हूँ कि वे इस पुस्तक की त्रुटियों एवं अपने सुझावों से (प्रकाशक की मार्फत) मुझे अवगत करें जिससे भविष्य में पुस्तक और भी उपयोगी बनाई जा सके ।

रमेशचन्द विजय

विषय-सूची

सरल रेडियो विज्ञान

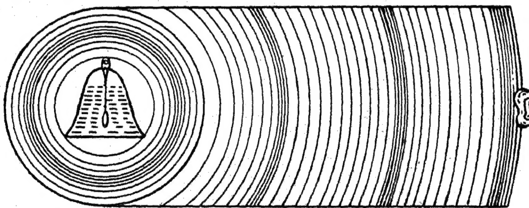
पहला प्रकरण

प्रेषक तथा ग्राहक का सिद्धान्त

(Principle of Transmitter and Receiver)

बेतार के तार द्वारा समाचार भेजने तथा प्राप्त करने के लिए दो यन्त्रों की आवश्यकता होती है। एक समाचार भेजने वाला प्रेषक (transmitter) और दूसरा समाचार प्राप्त करने वाला ग्राहक (receiver)। प्रस्तुत प्रकरण में इन दोनों यन्त्रों का कार्य समझाया गया है। साधारणत: समाचार भेजने, पाने और परिप्रेषण (broadcasting) के लिए ध्वनि (sound) का प्रयोग होता है। अतः पहले ध्वनि के बारे में कुछ जान लेना आवश्यक है।

ध्वनि—जब हम कुछ बोलते हैं तो हमारी आवाज़ वायु की लहरों द्वारा एक स्थान से दूसरे स्थान तक पहुँचती है। हमारे मुख के अन्दर के ध्वनि उत्पन्न



चित्र 1. ध्वनि का एक स्थान से दूसरे स्थान तक पहुँचना.

करने वाले भाग—जब हम कुछ बोलते हैं तो उसके अनुसार—हवा में लहरें उत्पन्न करते हैं। यह लहरें वहाँ उत्पन्न होकर चारों ओर फैलती हैं। जब ये लहरें कान के पर्दे पर टकराती हैं तो हमें ध्वनि का आभास होता है। चित्र 1 में ध्वनि का एक स्थान से दूसरे स्थान तक पहुँचना दिखाया गया है।

प्रत्येक वस्तु जो ध्वनि उत्पन्न करती है कम्पन करती है। ये कम्पन वायु में कम्पन पैदा करते हैं। इन कम्पनों की तुलना किसी तालाब में पत्थर फेंकने से उत्पन्न हुए कम्पनों से की जा सकती है। पानी के तालाब में यदि कोई पत्थर फेंका जाये तो जहाँ वह गिरता है वहाँ पानी में लहरें पैदा होती हैं। वे लहरें उस स्थान से पानी में चारों ओर फैलती हैं। ठीक इसी प्रकार कोई भी कम्पन करती हुई वस्तु वायु में कम्पन करती है। यह कम्पन वहाँ से चारों ओर फैलते हैं। यदि कम्पन

करती हुई वस्तु के चारों ओर वायु न हो अर्थात् वह किसी ऐसे बर्तन में बन्द कर दी जाये जिसमें से वायु निकाल दी गई है तो उस वस्तु की आवाज़ नहीं सुनाई देगी। वायु में उत्पन्न प्रत्येक लहर ध्वनि का आभास नहीं देती। साधारणतः हमारा कान एक सीमित कम्पन-संख्या की लहरों द्वारा ही ध्वनि का आभास पाता है। आगे इसका विस्तृत वर्णन है।

लहरें—प्रत्येक प्रकार की लहर किसी न किसी माध्यम (medium) में होकर निश्चित गति से चलती है। प्रत्येक लहर की एक निश्चित लम्बाई होती है जो कि लहर-लम्बाई (wave-length) कहलाती है। यदि कोई कम्पन करती हुई वस्तु हवा में एक फुट लम्बी लहर उत्पन्न करती है तो वायु में ध्वनि की गति लगभग 1,200 फुट प्रति सैकिण्ड होने के कारण एक सैकिण्ड बाद पहिली लहर उस वस्तु से 1,200 फुट दूर पहुँच जायेगी। उस समय पहिली लहर और कम्पन करती हुई वस्तु के बीच 1,199 लहरें और होंगी। इस प्रकार एक फुट लम्बी लहरें उत्पन्न करने के लिए उस वस्तु को एक सैकिण्ड में 1,200 कम्पन करने पड़ेंगे (प्रत्येक पूर्ण कम्पन पर एक लहर पैदा होती है)। कम्पन करती हुई वस्तु एक सैकिण्ड में जितने कम्पन करती है वह इसकी कम्पन-संख्या (frequency) कहलाती है। जब कम्पन करती हुई वस्तु की कम्पन-संख्या 20 सा. प्रति सैकिण्ड से 20,000 सा. प्रति सैकिण्ड तक होती है तो वह ध्वनि का आभास कराती है। किसी भी लहर की लम्बाई (wave-length), गति (velocity) तथा कम्पन-संख्या एक दूसरे से सम्बन्धित हैं और निम्न गुर से निकाली जा सकती हैं:—

गति = लहर-लम्बाई × कम्पन-संख्या

Velocity = wave-length × frequency

अथवा $V = n\ L$

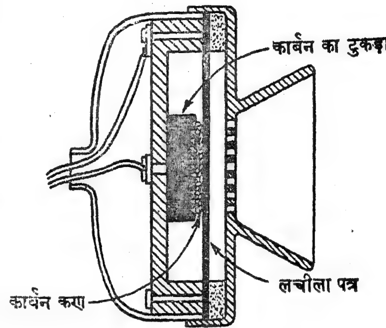
जबकि V = गति (velocity)

n = कम्पन-संख्या (frequency)

L = लहर-लम्बाई (wave-length)

ऊपर ध्वनि की लहरों का वर्णन किया जा चुका है परन्तु वायु में ध्वनि की लहरें दूर तक भेजना सम्भव नहीं है। यदि किसी बहुत ज़ोर से बोलने वाले यन्त्र द्वारा वायु म ध्वनि की लहरों को अधिक दूर भेजने का प्रयत्न भी किया जाये तो उसकी आवाज़ के कारण और कुछ सुनाई नहीं देगा। यदि वायु में उत्पन्न ध्वनि की लहरें विद्युत की लहरों में बदल दी जायें तो तार द्वारा यह विद्युत की लहरें पर्याप्त दूर भेजी जा सकती हैं। सूक्ष्म ध्वनि-ग्राहक (microphone) नामक यन्त्र द्वारा वायु में उत्पन्न ध्वनि की लहरें विद्युत की लहरों में बदली जा सकती हैं।

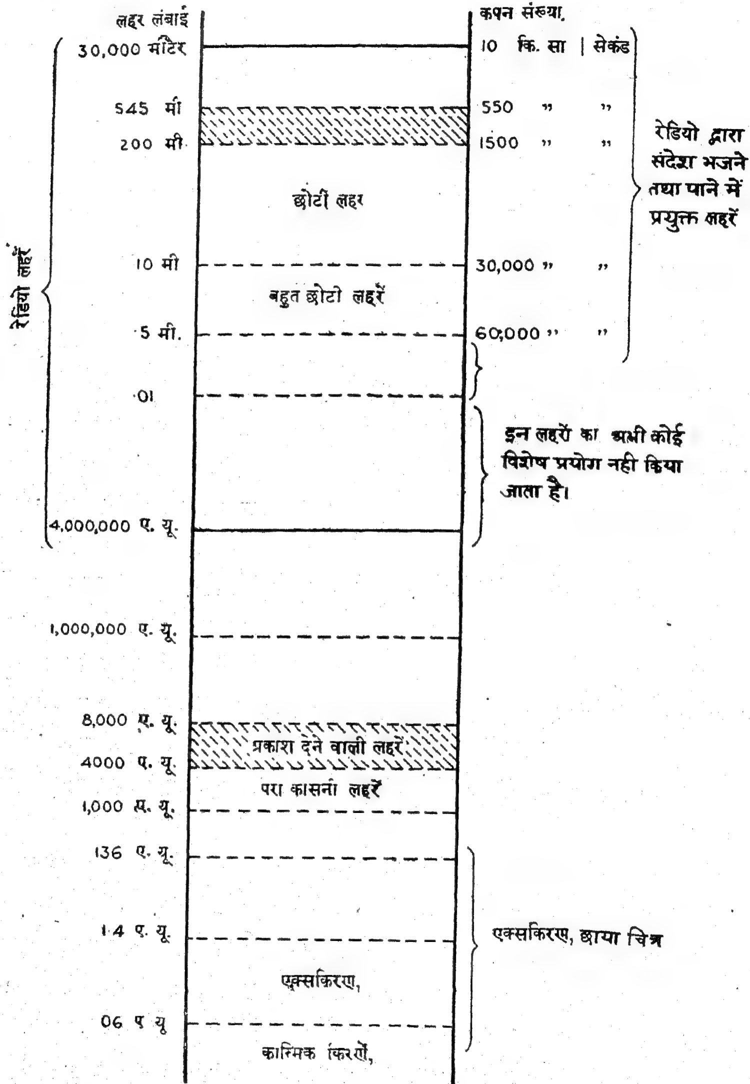
सूक्ष्म ध्वनि-ग्राहक—चित्र 2 में एक सूक्ष्म ध्वनि-ग्राहक (माइक्रोफोन) की रचना दिखाई गई है। इस प्रकार का सूक्ष्म ध्वनि-ग्राहक कार्बन कणों के प्रयोग के कारण कार्बन-कण सूक्ष्म ध्वनि-ग्राहक कहलाता है। इस सूक्ष्म ध्वनि-ग्राहक में धातु के लचीले पत्र (diaphragm) के पीछे कुछ कार्बन-कण लगे रहते हैं तथा उसमें एक बिजली की बैटरी लगी रहती है। जब हम बोलते हैं अथवा कोई अन्य यन्त्र-वाद्य यन्त्रादि—ध्वनि उत्पन्न करता है तो वायु में लहरें उत्पन्न होती हैं। जब यह लहरें धातु-पत्र (डायफ्राम) से टकराती हैं तो वह पत्र ध्वनि की लहरों के अनुसार आगे-पीछे हटता है। जब वह पत्र पीछे हटता है तो कार्बन-कण पास आते हैं और जब आगे बढ़ता है तो कार्बन-कण दूर हटते हैं। जब कार्बन के कण पास-पास होते हैं तो बैटरी से अधिक विद्युत-धारा (current) बहती है और जब वे दूर होते हैं तो कम। इस प्रकार बिजली की धारा घटती-बढ़ती है और विद्युत की लहरें पैदा हो जाती हैं। विद्युत की यह लहरें ध्वनि की लहरों के समान होती हैं। इस प्रकार उत्पन्न हुई विद्युत की लहरें तार द्वारा एक स्थान से दूसरे स्थान पर भेजी जा सकती हैं। दूसरे स्थान पर पहुँचने पर सूक्ष्म ध्वनि-ग्राहक की ठीक विपरीत क्रिया द्वारा विद्युत की लहरें ध्वनि की लहरों में बदली जा सकती हैं। उपर्युक्त सिद्धान्त टेलीफोन में प्रयुक्त होता है। बिना तार के तार द्वारा संदेश भेजने के लिए ईथर नामक पदार्थ में उत्पन्न लहरें प्रयुक्त की जाती हैं।



चित्र 2. कार्बन-कण सूक्ष्म ध्वनि-ग्राहक की रचना.

ईथर (Ether)—जिस प्रकार ध्वनि की लहरें वायु में उत्पन्न होती हैं उसी प्रकार रेडियो की लहरें ईथर में उत्पन्न होती हैं। ईथर साधारण पदार्थों से सर्वथा भिन्न है। यह न तो ठोस है, न द्रव और ना ही गैस (यहाँ ईथर रासायनिक पदार्थ ईथर से सर्वथा भिन्न है)। जहाँ तक खोज हो पाई है यह पदार्थ सर्वव्यापी है तथा अनेक वैज्ञानिक इसके अस्तित्व में पूर्ण विश्वास रखते हैं। ईथर किसी भी स्थान से निकाला नहीं जा सकता। रेडियो की लहरें, प्रकाश की लहरें तथा अन्य कई लहरें इसी माध्यम में उत्पन्न होती हैं और एक स्थान से दूसरे स्थान तक पहुँचती हैं। रेडियो एवं प्रकाश की लहरें एक जैसी ही होती हैं। उनमें केवल उनकी लहर-लम्बाई (wave-length) का ही अन्तर होता है। रेडियो की लहरें प्रकाश की लहरों की अपेक्षा अधिक लम्बी

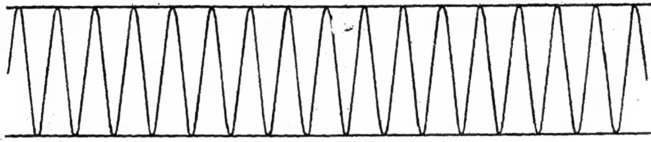
होती हैं। ईथर में उत्पन्न लहरें अत्यन्त तीव्र गति से चलती हैं। शून्य में इन लहरों

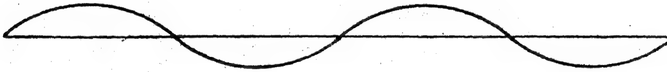


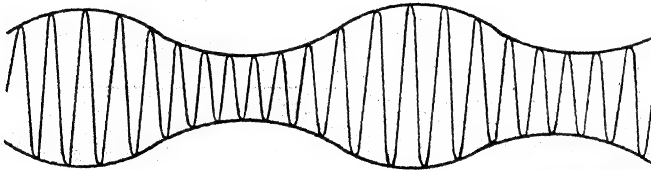
चित्र 3. ईथर में उत्पन्न लहरें और उनके उपयोग.

की गति 186,000 मील प्रति सैकिण्ड है। चित्र 3 में ईथर में उत्पन्न विभिन्न लहरें और उनके उपयोग दिये हुए हैं।

प्रेषक (Transmitter)—रेडियो तथा ध्वनि की लहरों का वर्णन ऊपर किया जा चुका है। इनमें से ध्वनि की लहरें अधिक दूर नहीं भेजी जा सकतीं और यद्यपि रेडियो की लहरों को दूर भेजना सम्भव है परन्तु वे सुनाई नहीं देतीं। परिप्रेषक में ऐसा उपाय किया गया है कि रेडियो तथा ध्वनि की लहरें इस प्रकार मिलाई जायें कि मिली हुई लहरें भेजना सम्भव हो सके। इस मिलाने की क्रिया को समन्वीकरण (modulation) कहते हैं। चित्र 4 में रेडियो लहरें, ध्वनि-लहरें तथा समन्वित लहरें (modulated waves) दिखाई गई हैं।



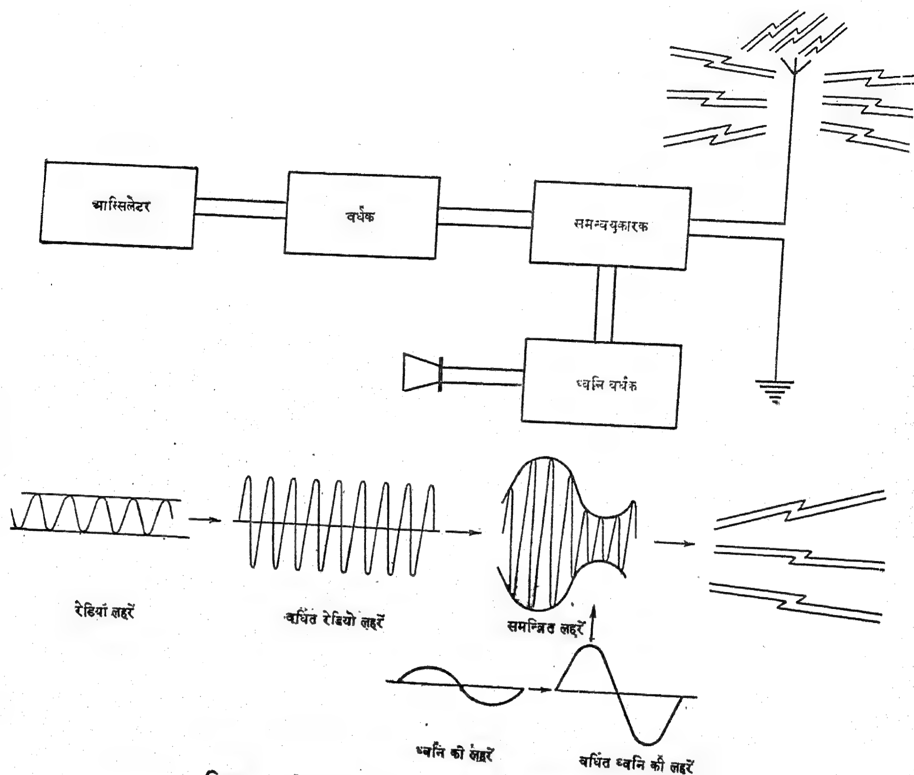




चित्र 4.

प्रेषक (transmitter) पर वहाँ का कार्यक्रम स्टुडियो में होता है। स्टुडियो एक विशेष कमरा होता है जहाँ पर बाहर की आवाज़ तथा शोर आदि अन्दर नहीं आ सकते। संगीत, भाषण आदि जो कोई भी कार्यक्रम प्रसारित किया जाता है वह इसी स्टुडियो में होता है। यह कार्यक्रम सूक्ष्म ध्वनि-ग्राहक यंत्र (माइक्रोफ़ोन) के सामन होते हैं और इसके द्वारा यह लहरें विद्युत-लहरों में बदल दी जाती हैं। यह विद्युत-लहरें अधिक शक्तिशाली नहीं होतीं अतः इन्हें बढ़ाना आवश्यक है। लहरों को बढ़ाने की क्रिया को वर्धन (amplification) कहते हैं। दूसरी तरफ यन्त्रों द्वारा रेडियो-लहरें पैदा की जाती हैं। समन्वयकारक (modulator) द्वारा रेडियो तथा ध्वनि की लहरें मिला दी जाती हैं। समन्वयकारक से प्राप्त समन्वित (modulated) लहरें एरियल

को दे दी जाती हैं तथा यहाँ से यह ईथर की लहरों में बदलकर फैल जाती हैं।



चित्र 5. प्रेषक (ट्रान्समीटर) का ब्लाक चित्र.

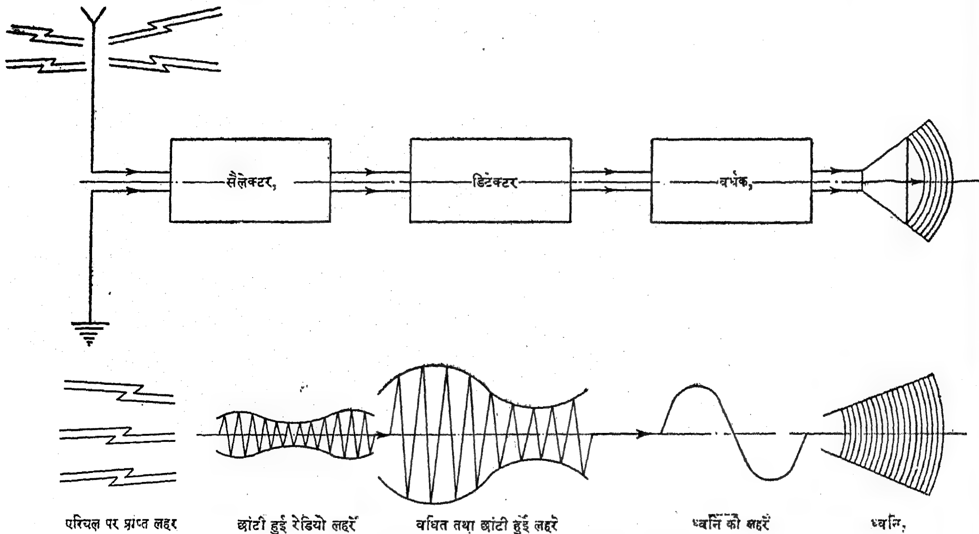
चित्र 5 में एक प्रेषक का ब्लाक चित्र (block diagram) दिया हुआ है। साथ ही प्रत्येक भाग क्या कार्य करता है यह भी प्रदर्शित किया गया है। अलग-अलग स्थानों के प्रेषक (transmitter) अलग-अलग फ्रीक्वेंसी पर कार्यक्रम प्रसारित करते हैं और इस कारण ग्राहक (receiver) अर्थात् रेडियो अलग-अलग कार्यक्रम प्राप्त कर सकता है।

ग्राहक (रेडियो)—प्रेषक (transmitter) के ऐरियल द्वारा ईथर में लहरें उत्पन्न की जाती हैं तथा यह लहरें चारों ओर बढ़ती हैं (गति 186,000 मील प्रति सैकिण्ड)। इन लहरों के मार्ग में जब कोई विद्युत परिचालक[1] (conductor)

1. प्राय: सभी धातुएँ विद्युत परिचालक होती हैं। विशेष प्रकरण दो; पृष्ठ 12 पर।

आता है तो उसमें ठीक वैसी ही लहरें उत्पन्न होती हैं जैसी कि प्रेषक (transmitter) द्वारा भेजी गई थीं। परन्तु इस प्रकार से उत्पन्न लहरों की शक्ति इतनी कम होती है कि सुनने से पूर्व इनका वर्धन (amplification) करना आवश्यक होता है । साथ ही एक ही समय पर अनेकों स्टेशन परिप्रेषण (broadcast) करते हैं। किसी भी एक स्थान से प्रसारित समाचार को सुन सकने के लिए यह आवश्यक है कि एक समय में केवल एक ही स्टेशन की आवाज़ जिसे हम सुनना चाहते हैं, सुनाई दे । अतः ग्राहक (रिसीवर) में यह गुण होना आवश्यक है कि वह वांछित स्टेशन को अवांछित स्टेशनों से अलग कर सके। ग्राहक (रिसीवर) का यह गुण जिसके द्वारा वह वांछित स्टेशन को अवांछित स्टेशनों से अलग करता है उसकी चुनने की शक्ति (selectivity) कहलाती है ।

प्रेषक से ध्वनि तथा रेडियो की लहरें मिलाकर भेजी जाती हैं तथा ग्राहक (रिसीवर) पर यह मिली हुई ही प्राप्त होती हैं। अतः किसी ग्राहक (रिसीवर) द्वारा वर्धित तथा छाँटी हुई लहरें ध्वनि और रेडियो की लहरों का मिश्रण होती हैं । यह लहरें उस समय तक नहीं सुनी जा सकतीं जब तक कि ध्वनि की लहरें रेडियो की



चित्र 6. ग्राहक (रेडियो) का ब्लाक चित्र.

लहरों से अलग न की जायें। अलग करने का यह कार्य रेडियो के जिस भाग (stage) द्वारा किया जाता है उसे डिटैक्टर (detector) कहते हैं तथा यह क्रिया डिटैक्शन (detection) कहलाती है। डिटैक्टर पर प्राप्त संदेश विद्युत-लहरों के रूप में होते

हैं जो लाउडस्पीकर (loud speaker) द्वारा ध्वनि (sound) में बदल जात हैं। लाउडस्पीकर सूक्ष्म ध्वनि-ग्राहक के विपरीत कार्य करता है। प्रकरण 14 में लाउडस्पीकर के सिद्धान्त का वर्णन किया गया है। लाउडस्पीकर द्वारा उत्पन्न लहरें ठीक उसी प्रकार की होती हैं जैसी कि प्रेषक (transmitter) पर सूक्ष्म ध्वनि-ग्राहक के सामने पैदा की गई थीं, और इस प्रकार हमें वह सारा कार्यक्रम जो कि प्रसारित किया गया था सुनाई देता है।

चित्र 6 में एक ग्राहक (रिसीवर) का ब्लाक चित्र दिया हुआ है। इसमें विभिन्न भागों के स्थान पर बक्सों का प्रयोग किया गया है। साथ ही प्रत्येक भाग का कार्य भी दिखाया गया है। किस बक्स में क्या होता है तथा वह कैसे कार्य करता है इसका वर्णन आगे किया गया है।

रेडियो का ऊपर वर्णित सारा कार्य विद्युत पर आधारित है। अतः रेडियो के बारे में जानने से पहिले विद्युत का ज्ञान आवश्यक है। इस हेतु आगे के कुछ प्रकरणों में विद्युत और इसके विभिन्न प्रभावों का वर्णन किया गया है।

दूसरा प्रकरण

विद्युत (Electricity)

रगड़ने से विद्युत—कुछ पदार्थ जैसे इबोनाइट, काँच, राल इत्यादि जब उपयुक्त पदार्थों से रगड़े जाते हैं तो उनमें अन्य हल्के पदार्थ जैसे कार्क एवं कागज के टुकड़े आदि को अपनी ओर खींचने का गुण आ जाता है। वस्तुओं को खींचने के इस गुण के आ जाने का पता आज से लगभग ढ़ाई हज़ार वर्ष पूर्व लगाया गया था। यह अद्‌भुत शक्ति, जिसके कारण वस्तुओं को रगड़ने पर उनमें अन्य वस्तुओं को अपनी ओर खींचने का गुण आ जाता है, विद्युत कहलाती है। जिन पदार्थों में यह गुण आ जाता है वे विद्युन्मय कहलाते हैं। रगड़ने से उत्पन्न विद्युत एक स्थान से दूसरे स्थान तक नहीं भेजी जा सकती इसलिए यह स्थिर विद्युत (static electricity) कहलाती है।

विद्युत के दो प्रकार—यदि काँच की एक छड़ को रेशम से रगड़कर इसी प्रकार रेशम से रगड़ी हुई दूसरी काँच की छड़ के पास लाया जाय तो वे एक दूसरे को दूर हटायेंगी। इसके विपरीत यदि रेशम से रगड़ी हुई काँच की एक छड़ को फलालेन से रगड़ी हुई लाख की छड़ के पास लाया जाय तो वे एक दूसरे को आकर्षित करेंगी।

ऊपर के वर्णन से यह ज्ञात होता है कि विद्युत दो प्रकार की होती है तथा एक ही प्रकार की विद्युत रखने वाले पदार्थ एक दूसरे को दूर हटाते हैं और अलग-अलग प्रकार की विद्युत रखने वाले पदार्थ एक दूसरे को आकर्षित करते हैं।

काँच को रेशम से रगड़ने पर उत्पन्न विद्युत धन-विद्युत तथा लाख को फलालेन से रगड़न पर उत्पन्न विद्युत ऋण-विद्युत कहलाती है।

पदार्थों की विद्युन्मय रचना तथा विद्युत—संसार के सभी पदार्थ (matter) तीन भागों में विभाजित किये जा सकते हैं—तत्व, यौगिक तथा मिश्रण।

तत्व (Element)—वह पदार्थ हैं जो कि रासायनिक क्रिया द्वारा अन्य पदार्थों में विभक्त (resolve) नहीं किये जा सकते। अब तक कुल 96 तत्वों का पता लगाया जा चुका है। शेष सभी पदार्थ इन्हीं तत्वों के विभिन्न अनुपात में मिलने से बने हुए हैं। तत्व पदार्थ की शुद्धतम अवस्था है। सोना, चांदी, पारा और ताँबा इत्यादि तत्व हैं।

यौगिक (Compound)—यौगिक दो या दो से अधिक तत्वों के मिलने से

बनते हैं। रासायनिक क्रिया द्वारा यौगिक फिर से उन तत्वों में विभक्त किये जा सकते हैं जिनके द्वारा उनका निर्माण होता है। नमक, चीनी तथा पानी यौगिक के उदाहरण हैं।

मिश्रण (Mixture)—मिश्रण में पदार्थ साधारणतः मिला दिये जाते हैं तथा वे किसी भी अनुपात में मिलाये जा सकते हैं। मिश्रण तत्वों के, तत्व तथा यौगिकों के अथवा एक से अधिक यौगिकों के मिलाने पर बन सकते हैं।

उपर्युक्त वर्णन के अनुसार तत्व पदार्थ का शुद्धतम रूप है तथा सारे मिश्रण और यौगिक तत्वों से बनत हैं। यदि हम किसी तत्व के छोटे-छोटे टुकड़े करते चले जायँ तो एक ऐसी अवस्था आ जायेगी जब कि और छोटे टुकड़े करना सम्भव न होगा। तत्व का यह छोटे से छोटा कण परमाणु (atom) कहलाता है।[1] पहिले यह समझा जाता था कि परमाणु ही छोटे से छोटा कण है। परन्तु अब यह सिद्ध किया जा चुका है कि परमाणु भी विभक्त किया जा सकता है तथा इसमें निम्नलिखित तीन कण होते हैं:—

(i) ऋण-विद्युत कण (electrons)—यह ऋण विद्युन्मय (–lycharged) कण है तथा सब कणों से छोटा है।

(ii) प्रोटोन (proton)—यह धन-विद्युन्मय (+ ly charged) कण है तथा इसका भार हाइड्रोजन के एक परमाणु (atom) के बराबर है।

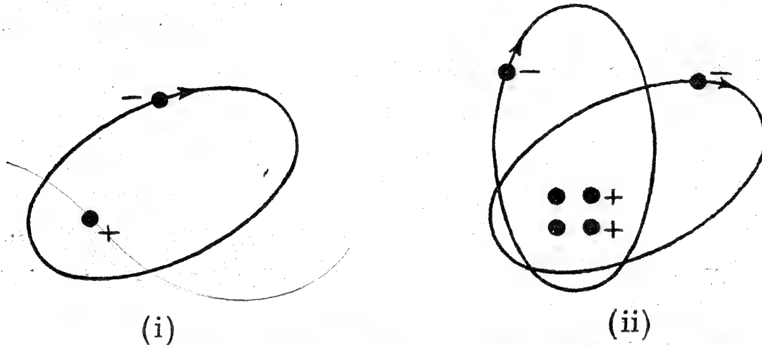
(iii) न्यूट्रोन (neutron)—इस कण पर किसी भी प्रकार की विद्युत नहीं होती है तथा इसका भार प्रोटोन के भार के बराबर ही होता है।

प्रत्येक तत्व के परमाणु इन्हीं तीन कणों के मिलने से बनते हैं। प्रत्येक परमाणु में प्रोटोन (proton) केन्द्र (nucleus) में होता है तथा ऋण विद्युत-कण (इलेक्ट्रोन) इसके चारों ओर घूमते हैं। इस प्रकार परमाणु की रचना सौर्य-मंडल की रचना के समान है। सौर्य-मंडल (solar system) में सूर्य केन्द्र में होता है तथा अन्य ग्रह पृथ्वी, मंगल, बुध आदि सूर्य के चारों तरफ घूमते हैं। ठीक इसी प्रकार प्रोटोन केन्द्र में होता है और उसके चारों ओर इलेक्ट्रोन घूमते हैं। हाइड्रोजन

---

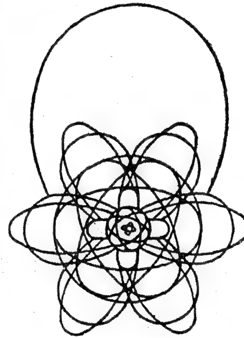
1. यदि किसी पदार्थ के टुकड़े किये जायँ तो परमाणु के जितने छोटे टुकड़े करना सम्भव न होगा। परमाणु के आकार की कल्पना इसी से की जा सकती है कि एक सुई की नोक के बराबर स्थान में लाखों परमाणु आ सकते हैं। इस कारण ठोस दिखाई देने वाले पदार्थ भी वास्तव में ठोस नहीं होते हैं उनमें भी स्थान होता है परन्तु वह स्थान परमाणु के आकार का होने के कारण दिखाई नहीं देता। इसका पता विशेष उपायों द्वारा ही लगाया जा सकता है।

के परमाणु की रचना सब से सरल होती है। इसमें एक प्रोटोन केन्द्र में होता है तथा इसके चारों ओर एक इलेक्ट्रोन घूमता रहता है। हीलियम के परमाणु में दो प्रोटोन तथा दो न्यूट्रोन केन्द्र में रहते हैं और दो इलेक्ट्रोन इसके चारों ओर घूमते रहते हैं। चित्र 7 में हाइड्रोजन तथा हीलियम के परमाणुओं की रचना दिखाई गई है।



चित्र 7. हाइड्रोजन (i) और हीलियम (ii) के परमाणुओं की रचना.

अन्य पदार्थों के परमाणु बहुत अधिक कणों से मिलकर बनते हैं तथा उनकी रचना जटिल होती है। उदाहरण के लिए चित्र (8) में ताँबे के परमाणु की रचना दिखाई गई है।



चित्र 8.

तांबे के परमाणु की रचना.

विद्युतधारा (Current)—विद्युत धारा किसी पदार्थ में ऋण विद्युत कणों (electrons) के बहाव का परिणाम है। ये कण ऋण विद्युत छोर से धन विद्युत छोर की ओर बहते हैं।[1] सामान्यतया प्रत्येक पदार्थ में ऋण तथा धन विद्युत बराबर होती हैं। परन्तु जब उसमें से कुछ इलेक्ट्रोन कम हो जाते हैं अथवा बढ़ जाते हैं तब वह पदार्थ विद्युन्मय (charged) हो जाता है। इलक्ट्रोन कम होने पर धन विद्युन्मय तथा बढ़ने पर ऋण विद्युन्मय होता है।

परिचालक (Conductor)—यदि किसी लोहे की छड़ का एक सिरा आग में दे दिया जाये तो कुछ ही देर बाद उसका दूसरा सिरा भी गरम हो जाता है। परन्तु

1. यह मान लिया गया है कि विद्युत धारा धन विद्युत छोर से ऋण विद्युत छोर की ओर बहती है। इस कारण ऋण विद्युतकण कल्पित धारा-प्रवाह की विपरीत दिशा में बहते हैं।

सके विपरीत जलती हुई लकड़ी का दूसरा सिरा पकड़ कर उठाया जा सकता है और वह गरम नहीं होता। इसका कारण यह है कि लोहे में होकर गर्मी एक सिरे से लेकर दूसरे सिरे तक सरलता से पहुँच जाती है परन्तु लकड़ी में होकर नहीं जाती। ठीक इसी प्रकार विद्युत भी कुछ पदार्थों में होकर सरलता से जा सकती है तथा दूसरों में होकर नहीं जा सकती। इस प्रकार के पदार्थ जिनमें होकर विद्युत सरलता से जा सकती है परिचालक (conductor) कहलाते हैं। दूसरे प्रकार के पदार्थ जिनमें होकर विद्युत नहीं जा सकती अपरिचालक (nonconductor) कहलाते हैं।

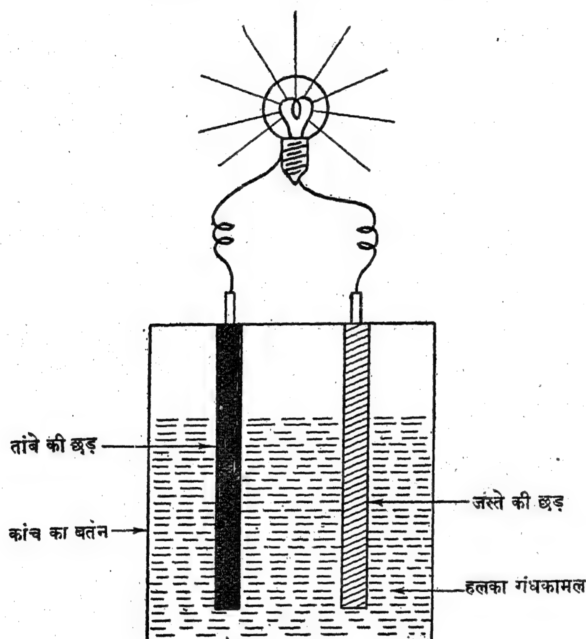
परिचालकों में होकर विद्युत सरलता से जाने का कारण यह है कि इनमें ऋण विद्युतकण (इलक्ट्रोन electron) अलग रहते हैं और यह ऋण विद्युतकण सरलता से हट सकते हैं। अपरिचालकों में ऋण विद्युतकण अलग नहीं होते हैं अत: इनमें होकर विद्युत नहीं गुजर सकती। नीचे कुछ परिचालक तथा अपरिचालकों की तालिका दी गई है:—

परिचालक	**अपरिचालक**
सोना	अभ्रक (mica)
चाँदी	काँच
ताँबा	चीनी (porcelain)
अलमूनियम	रबर
लोहा	लकड़ी
पारा	सैलोलाइट (celluloid)
राँगा	बैकलाइट
कार्बन	कपड़ा

सैल (Cell)—कई विभिन्न विधियों द्वारा विद्युत उत्पन्न की जा सकती है तथा यह विद्युत धारा (current) के रूप में परिचालकों में होकर बह सकती है। नीचे इस प्रकार के कुछ साधनों का वर्णन है जिनसे विद्युत उत्पन्न की जा सकती है। विद्युतधारा उत्पन्न करने का सबसे सरल साधन सैल है। नीचे कुछ सामान्य सैलों का वर्णन किया गया है।

सरल सैल (Simple cell)—एक काँच के बर्तन में हलका गंधकाम्ल (sulphuric acid) भरकर उसमें एक ताँबे और एक जस्त की छड़ डाल देने से सरल सैल बन जाती है। जस्ते और ताँबे की छड़ों को तार द्वारा जोड़ने पर उस तार में होकर विद्युतधारा बहने लगती है। तार के बीच में एक बल्ब लगा देने से वह बल्ब प्रकाश देकर विद्युतधारा के प्रवाह (flow) को बतायेगा (चित्र 9)। जस्ते

और गंधकाम्ल में परस्पर रासायनिक क्रिया[1] (chemical reaction) होती तथा इस क्रिया के कारण विद्युत पैदा होती है। इस प्रकार से बनाई गई सरल सैल

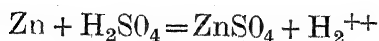


चित्र 9. सरल सैल.

में दो खराबियाँ होती हैं जिनके कारण यह सैल काम म नहीं ली जा सकती। यह खराबियाँ स्थानीय क्रिया (local action) तथा ध्रुवाच्छादन (polarisation) कहलाती हैं।

स्थानीय क्रिया—सैल में अशुद्ध जस्ते के प्रयोग से होती है। जस्ता एक इलक्ट्रोड (electrode=विद्युत-छोर) बन जाता है तथा उस पर की अशुद्धियाँ दूसरा इलक्ट्रोड बन जाती हैं और धारा बहने लगती है। इस कारण जब सैल से धारा नहीं ली जाती है उस समय भी जस्ता घुलता रहता है और सैल (cell) जल्दी ही खराब हो जाती है। यह खराबी दो प्रकार से दूर की जा सकती है। एक तो शुद्ध जस्ते की

1. यह रासायनिक क्रिया निम्न समीकरण (equation) द्वारा प्रदर्शित की जा सकती है:—



$$Zn + H_2SO_4 = ZnSO_4 + H_2^{++}$$

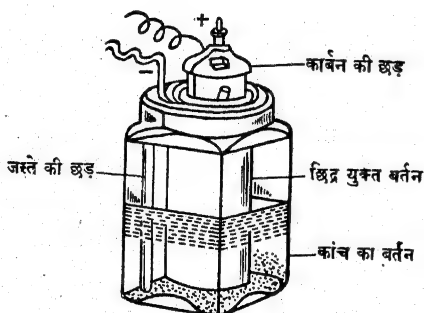
जस्त + गंधकाम्ल = जस्त सल्फेट + हाइड्रोजन

छड़ लेकर, दूसरे जस्ते की छड़ पर पारा (mercury) मल देने से। पारा मल देने से खराबियाँ उस के नीचे दब जाती हैं तथा सैल में यह दोष नहीं रहता है।

ध्रुवाच्छादन (Polarisation)—जस्ते तथा गंधकाम्ल की पारस्परिक क्रिया से हाइड्रोजन पैदा होती है और यह हाइड्रोजन जस्ते की छड़ से ताँबे की छड़ की ओर जाती है। जब यह हाइड्रोजन ताँबे की छड़ पर जमा हो जाती है तो सैल में ध्रुवाच्छादन (polarisation) हो जाता है। हाइड्रोजन विद्युत परिचालक (conductor) नहीं है, इसलिए इस की तह के कारण विद्युत ताँबे की छड़ तक नहीं पहुँचती है अतः सैल कार्य करना बन्द कर देती है। इस दोष को दूर करने के लिए किसी ऐसे पदार्थ का उपयोग करना पड़ता है जिसमें आक्सीजन (oxygen) बहुत हो। यह पदार्थ अध्रुवाच्छादक (depolariser) कहलाता है। इस पदार्थ की आक्सीजन ध्रुवाच्छादन करने वाली हाइड्रोजन से मिल जाती है और पानी बन जाता है। इस प्रकार ध्रुवाच्छादन नहीं होता।

आजकल ऐसी अनेकों सैलों का निर्माण किया जा चुका है जिनमें ध्रुवाच्छादन नहीं होता है। इनमें रेडियो के लिए शुष्क (dry) सैलों से बनी हुई शुष्क बैटरियाँ (dry batteries) ही काम में लाई जाती हैं। शुष्क सैल लैकलांची सैल का परिष्कृत (modified) रूप है। लैकलांची तथा शुष्क सैल का वर्णन नीचे किया गया है।

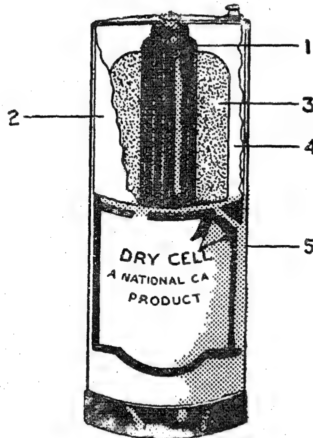
लैकलांची सैल (Lechlanche's cell)—लैकलांची सैल में एक काँच का बर्तन होता है। इस काँच के बर्तन में नौसादर का घोल भरा रहता है। नौसादर के घोल में एक जस्ते की छड़ जिस पर पारा चढ़ा रहता है रखी रहती है। काँच के बर्तन के बीच में एक छिद्रयुक्त (porus) बर्तन रखा होता है। इस बर्तन में कार्बन और मैंगनीज डाइ आक्साइड का चूरा भरा रहता है। इस छिद्रयुक्त बर्तन के बीच में एक कार्बन की छड़ रखी रहती है (चित्र 10)। जस्ते की छड़ ऋण विद्युत-छोर (—ive electrode) तथा कार्बन की छड़ धन विद्युत-छोर (+ive electrode) होती है। मैंगनीज डाइ-



चित्र 10. लैकलांची सैल.

ग्राक्साइड इस सैल में अध्रुवाच्छादक[1] का कार्य करता है।

शुष्क सैल (Dry Cell)—यह लैकलांची सैल का परिष्कृत रूप है। इसमें काँच के बर्तन के स्थान पर जस्ते के बर्तन का प्रयोग किया जाता है। यह जस्ते का बर्तन ऋण विद्युत छोर (—ive electrode) भी होता है। इस जस्ते के बर्तन में नौसादर के घोल के स्थान पर नौसादर, ज़िंक क्लोराइड, सरेस, ग्लिसरीन और पानी इन सबसे बनाया हुआ गाढ़ा घोल (paste) भरा रहता है। इस जस्ते के बर्तन के बीच में मैंगनीज-डाइ-ग्राक्साइड तथा कार्बन का चूरा कपड़े में लिपटा हुआ रखा रहता है। इस चूरे के बीच में कार्बन की डंडी रहती है। यह डंडी धन विद्युत-छोर होती है। यद्यपि यह शुष्क सैल कहलाती है परन्तु यदि यह सूख जाय तो फिर

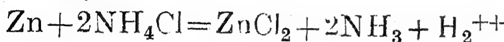


चित्र 11. शुष्क सैल की रचना.

1. कार्बन की डंडी, 2. जस्ते का बर्तन, 3. मैंगनीज डाइ-ग्राक्साइड और कार्बन का चूरा, 4. नौसादर इत्यादि का घोल, और 5. पट्ठे का खोल.

---

1. लैकलांची सैल में होने वाली क्रिया निम्न समीकरण (equation) द्वारा प्रदर्शित की जा सकती है:—

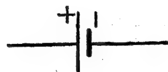


$$Zn + 2NH_4Cl = ZnCl_2 + 2NH_3 + H_2^{++}$$

जस्त + नौसादर = जस्त क्लोराइड + ग्रमोनिया + हाइड्रोजन। इनमें से ग्रमोनिया हवा में मिल जाती है। हाइड्रोजन छिद्रों में होकर कार्बन की छड़ पर पहुँचता है तथा इस छड़ को विद्युन्मय कर देती है। फिर यह हाइड्रोजन मैंगनीज डाइ-ग्राक्साइड की ग्राक्सीजन से मिलकर पानी बन जाती है एवं इस प्रकार ध्रुवाच्छादन नहीं होता।

काम नहीं देगी। चित्र 11 में शुष्क सैल की रचना दिखाई गई है। इस सैल में जिंक क्लोराइड, सरेस तथा ग्लिसरीन घोल को गाढ़ा करने तथा उसे सूखने से रोकने के लिए प्रयोग किये जाते हैं।

सैल के लिए चित्र 12 में दिखाया गया चिह्न काम में लिया जाता है। लम्बी-पतला लकीर धन छोर (+ive electrode) व मोटी-छोटी लकीर ऋण छोर



चित्र 12. सैल के लिए प्रयुक्त चिह्न.

(—ive electrode) बताती है।

तीसरा प्रकरण

ओह्म वोल्ट और ऐम्पियर

यदि एक बैटरी के सिरे तार द्वारा जोड़ दिये जायँ तो उस तार में होकर विद्युतधारा बहने लगेगी । यह धारा बैटरी में उत्पन्न विद्युत दबाव के कारण बहती है । धन (+ive) और ऋण (—ive) सिरों के बीच में जो विद्युत दबाव (electric potential) पैदा होता है उसे विद्युत वाहक बल (electromotive force) कहते हैं । इस विद्युत वाहक बल (वि० वा० ब) की तुलना पानी के दबाब से की जा सकती है । जिस प्रकार नल में पानी दबाव के कारण बहता है ठीक उसी प्रकार तार में विद्युत, वि० वा० ब के कारण बहती है । वि० वा० ब० (e. m. f.) की इकाई वोल्ट है । लैकलांची सैल का वि० वा० ब० 1·4 बोल्ट होता है ।

ओह्म का नियम—किसी तार में होकर जाने वाली विद्युतधारा की मात्रा उसके सिरों पर लगाई हुई वोल्टेज और उस तार की रुकावट पर निर्भर करती है । प्रत्येक पदार्थ जिसमें होकर विद्युतधारा गुजरती है कुछ-न-कुछ रुकावट अवश्य डालता है । किसी भी परिचालक का वह गुण जिसके कारण वह विद्युतधारा के प्रवाह में रुकावट डालता है उसकी बाधा अथवा प्रतिरोध (resistance) कहलाता है । ओह्म (ohm) नामक वैज्ञानिक ने किसी तार की बाधा, उसमें होकर गुजरने वाली विद्युतधारा और उस तार के सिरों पर लगाए हुए (applied) वि० वा० ब० के सम्बन्ध में नियम बनाया था । इस नियम के अनुसार किसी तार में होकर जाने वाली विद्युतधारा (current) वोल्टेज के अनुपात में तथा बाधा के विषम अनुपात में होती है ।[1] अर्थात् यदि किसी तार के सिरों पर दी हुई वोल्टेज बढावें तो उसमें होकर अधिक विद्युतधारा जावेगी और यदि उस तार की बाधा बढ़ाई जाय तो विद्युतधारा कम होगी । बाधा (resistance) की इकाई ओह्म (ohm-Ω) धारा (current) की एम्पियर (ampere) और दबाव (वोल्टेज) की बोल्ट है । इन इकाइयों में ओह्म का नियम निम्नलिखित गुर द्वारा दिया जा सकता है—

---

1. "The current flowing through a conductor is directly proportional to the applied e m.f. and inversely to the resistance of the conductor."

$$\text{धारा} = \frac{\text{वोल्टेज}}{\text{बाधा}} \quad (\text{current} = \frac{\text{voltage}}{\text{resistance}})$$

अथवा
$$I = \frac{E}{R}$$

I=धारा; E=वोल्टेज; R=बाधा

बहुत से कार्यों के लिए बहुत कम अथवा बहुत अधिक बाधा प्रयोग की जाती है। इस प्रकार के बाधकों का अर्घ ओह्म में बहुत बड़ी अथवा बहुत छोटी संख्या होने के कारण असुविधाजनक हो जाता है। इसलिए बहुत अधिक बाधा के बाधकों का अर्घ किलो ओह्म ($K\,\Omega$) या मैगा ओह्म ($M\,\Omega$) में लिखा जाता है—

किलो=सहस्र; मैगा=सहस्र सहस्र=दस लाख।

अतः 1 किलो ओह्म=1,000 ओह्म।

एवं 1 मैगा ओह्म=1,000,000 ओह्म।

बहुत कम बाधा के लिए माइक्रो ओह्म का प्रयोग किया जाता है—

$$1 \text{ माइक्रो ओह्म (micro ohm)} = \frac{1}{1{,}000{,}000} \text{ ओह्म}।$$

वोल्टेज का विभाजन—जब किसी बाधक में होकर विद्युतधारा बहती है तो धारा, बाधा और बाधक के सिरों पर दी हुई वोल्टेज का सम्बन्ध ओह्म के नियम से निकाला जा सकता है। **यथा**—

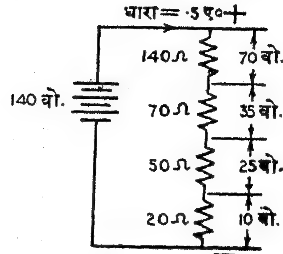
$$\text{धारा} = \frac{\text{वो}}{\text{बो}}$$

अथवा
$$\text{वो} = \text{धारा} \times \text{बाधा}।$$

यदि एक के स्थान पर कई बाधक श्रेणीबद्ध लगा दिये जायँ तो उन सबकी सम्मिलित बाधा उनकी बाधा के योग के बराबर होगी। यदि इन सब बाधकों पर वोल्टेज दी जाय तो इनमें होकर बहने वाली धारा $\frac{\text{वोल्टेज}}{\text{कुल बाधा}}$ के बराबर होगी। उन बाधकों में होकर धारा बहने पर प्रत्येक बाधक के सिरों पर कुछ वोल्टेज होगा और यह वोल्टेज उस बाधक के अर्घ और उसमें होकर जाने वाली धारा के गुणनफल के बराबर होगी। उन सब बाधकों पर प्राप्त वोल्टेजों का योग कुल दी हुई वोल्टेज के बराबर होगा।

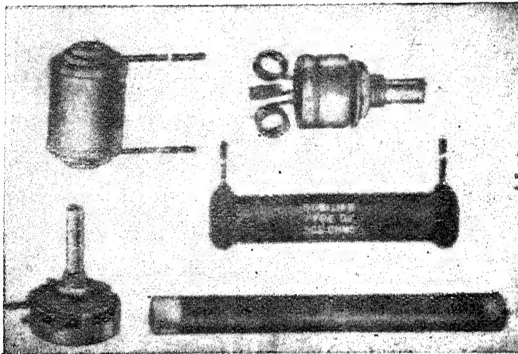
जब किसी बाधायुक्त सरकिट में होकर विद्युतधारा जाती है तो कुल वोल्टेज का कुछ भाग उस बाधा में होकर धारा बहने के लिए आवश्यक होता है। वोल्टेज का वह भाग जो कि उस बाधक में होकर धारा बहने के लिए आवश्यक होता

है उस बाधक पर वोल्टेज ड्राप (voltage drop) कहलाता है। बहुत से स्थानों पर वोल्टेज कम करने के लिए तथा वोल्टेज का निश्चित भाग प्राप्त करने के लिए बाधक प्रयोग किये जाते हैं। चित्र 13 में इस कार्य के लिए बाधकों का प्रयोग समझाया गया है। इस चित्र में एक 140 वोल्ट की बैटरी पर चार बाधक लगाये गये हैं जिनका अर्घ 140, 70, 50 और 20 ओह्म है। इन सब की कुल बाधा 280 ओह्म हुई और इनमें होकर कुल ·5 एम्पीयर धारा बही। इसके कारण 140 ओह्म के बाधक पर 70 वोल्ट (140×·5) और इसी प्रकार 70 ओह्म के बाधक पर 35 वो०, 50 ओह्म के बाधक पर 25 वो० और 20 ओह्म के बाधक पर 10 वोल्ट प्राप्त होंगे।



चित्र 13.
वोल्टेज का विभाजन.

बाधक (resistors)—रेडियो में बहुत से कार्यों के लिए बाधकों की आवश्यकता होती है। इन में तार के और कार्बन के बाधक प्रमुख हैं।

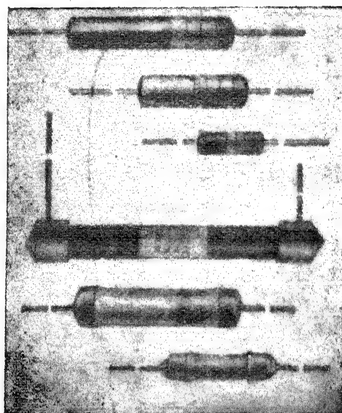


चित्र 14. विभिन्न प्रकार के तार के बाधक.

इनमें से तार के बाधक चित्र 14 में तथा कार्बन के बाधक चित्र 15 में दिखाये गये हैं—

तार के बाधक (wire wound resistors) किसी अपरिचालक के आधार पर महीन तार लपेटकर बनाये जाते हैं। प्रायः तार पर किसी अपरिचालक (insulator) की तह चढ़ी होती है।

कार्बन के बाधक चिकनी मिट्टी (clay) और कार्बन के मिश्रण से बनाये जाते हैं। कार्बन और चिकनी मिट्टी का यह मिश्रण साँचे में देकर निश्चित आकार



चित्र 15. विभिन्न प्रकार के कार्बन के बाधक.

के बना लिये जाते हैं। फिर इनको सुखाकर गर्म किया जाता है। यदि कम बाधा के बाधक बनाने हों तो कार्बन अधिक और मिट्टी कम मिलाई जाती है। अधिक बाधा के बाधक बनाने के लिए कार्बन कम और मिट्टी अधिक मिलाई जाती है।

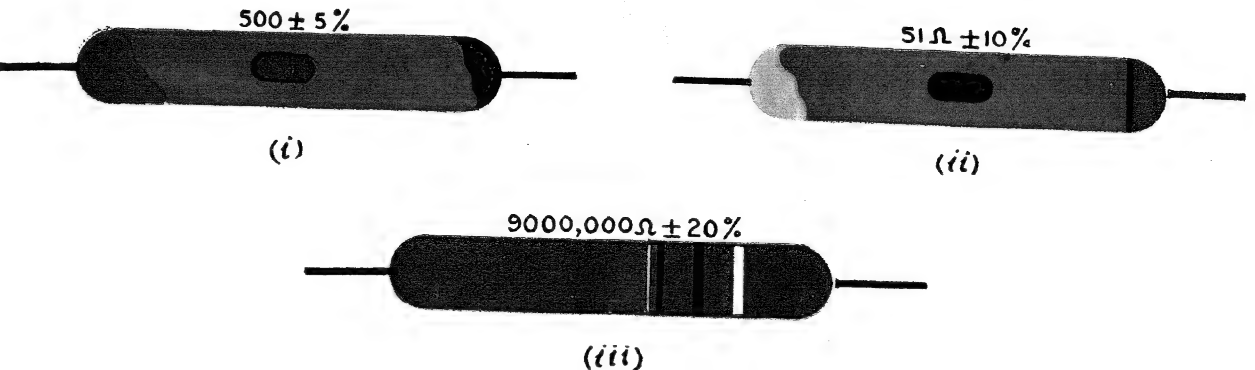
एक बाधक के लिए निम्नलिखित चिह्न का प्रयोग किया जाता है। (चित्र 16)।



चित्र 16. बाधक के लिए प्रयुक्त चिह्न.

रंग-संकेत—कार्बन के बाधकों पर उनकी बाधा बताने के लिए रंग-संकेत (colour code) काम में लाया जाता है। विभिन्न रंग निम्नलिखित अंकों को बताते हैं—

काला—Black	0	सीमा (Tolerance)
भूरा—Bron	1	सुनहरी 5%
लाल—Red	2	रूपहरी 10%
नारंगी—Orange	3	साधारण 20%
पीला—Yellow	4	
हरा—Green	5	
नीला—Blue	6	
बैजनी—Violet	7	
खाकी—Grey	8	
सफेद—White	9	



चित्र 18.

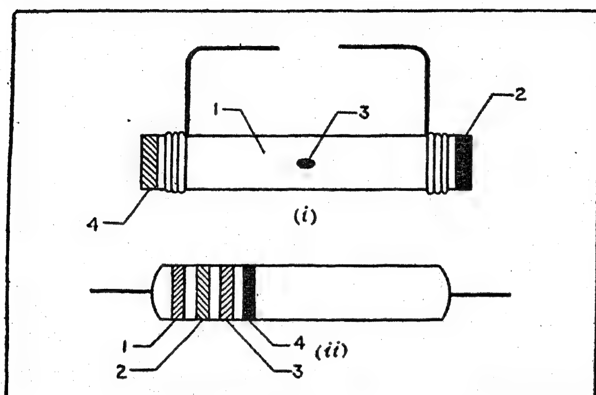
बाधकों के अर्घ

i. शरीर हरा 5 सिरा काला 0 बिन्दी भूरी 1 अतः बाधा 500Ω सुनहरी निशान ±5% अतः बाधा = 500 ± 5%

ii. शरीर हरा 5, सिरा भूरा 1 बिन्दी काली शून्य अतः बाधा 51Ω रुपहरी निशान ±10% अतः बाधा = ±5152 ± 10%

iii. सिरे की लकीर सफेद 9 पहला अंक दूसरी लकीर काली 0 दूसरा अंक
तीसरी लकीर हरी 5 शून्यों की संख्या अतः बाधा = 9,000,000Ω

यह रंग-संकेत दो प्रकार से काम में लाये जाते हैं। चित्र 17 में दोनों



चित्र 17. बाधकों पर प्रयुक्त रंग-संकेत.

प्रकार दिखाये गये हैं । दोनों में तीन रंग प्रयुक्त किये जाते हैं । इनमें से पहिला और दूसरा रंग अंक बतलाता है और तीसरा अंक शून्यों की संख्या जा कि उन दोनों अंकों के बाद रखने से बाधक की बाधा मिल जाती है । यदि रंगों के अतिरिक्त सुनहरी (golden) अथवा रुपहरी (silver) निशान भी हो तो वह बाधक के अर्घ (value) की सीमा बतलाता है। पहिले प्रकार के रंग-संकेत में बाधक का शरीर (body) का रंग पहिला, सिरे का रंग दूसरा और बीच में दी हुई बिन्दी (dot) शून्यों की संख्या बताती है । दूसरे प्रकार के रंग संकेत में तीन रंग एक के बाद एक रहते हैं । इनमें से सिरे की ओर वाला पहिला, बीच का दूसरा तथा तीसरा शून्यों का संख्या बतलाता है । चित्र 18 में रंग-संकेत और उसका उपयोग बताया गया है । सुनहरी अथवा रुपहरी रंग बाधक के अर्घ की सीमा बतलाता है । उदाहरण के लिए यदि किसी बाधक पर जिसकी बाधा 4,000 ओह्म है, सुनहरी निशान पड़ा है तो उसकी बाधा $4000 \pm 5\%$ अर्थात् 4000 ± 200 ओह्म होगी । सुनहरी के स्थान पर रुपहरी निशान होने पर यह बाधा 4000 ± 400 ओह्म होगी और यदि कोई निशान न हो तो यह 4000 ± 800 ओह्म होगी । 4000 ± 800 का अर्थ है कि बाधक का अर्घ (value) 3,200 ओह्म से लेकर 4,800 ओह्म तक कुछ भी हो सकता है ।

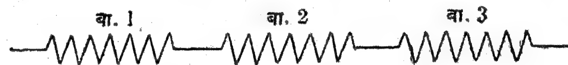
शक्ति—किसी भी तार में होकर बहती हुई विद्युतधारा शक्ति-स्रोत होती है क्योंकि इसके द्वारा कार्य किया जा सकता है । विद्युत-शक्ति वाट में नापी जाती है । विद्युत-शक्ति किसी सरकिट में होकर बहने वाली धारा और उसके सिरों पर दी हुई

वोल्टेज को गुणा करने पर मिलती है।

शक्ति = धारा × वोल्टेज[1]

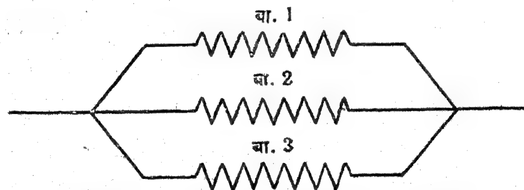
इस प्रकार यदि किसी सरकिट में 6 वोल्ट पर 4 एम्पीयर धारा बहती है तो उस सरकिट में शक्ति 6×4=24 वाट होगी। व्यवहार में शक्ति न.पने के लिए वाट तथा किलोवाट प्रयुक्त किये जाते हैं। 1 किलो=1 सहस्र और इस प्रकार 1 किलोवाट=1000 वाट।

बाधकों का श्रेणीबद्ध तथा समानान्तर संयोजन (series and parallel use of resistence)—बहुत से स्थानों पर कई बाधक एक साथ लगाये जाते हैं। इन बाधकों की सम्मिलित बाधा जानना आवश्यक होता है। यह बाधक दो प्रकार से लगाये जा सकते हैं—श्रेणीबद्ध तथा समानान्तर। यदि दो या दो से अधिक बाधक एक के बाद एक जोड़ दिये जायें तो वे श्रेणीबद्ध (series) जुड़े हुए कहलाते हैं चित्र 19.। श्रेणीबद्ध लगाने पर कुल बाधा उन सब बाधाओं के जोड़ के बराबर



चित्र 19. बाधकों का श्रेणीबद्ध संयोजन.

होती है। यदि दो या दो से अधिक बाधकों के सिरे एक साथ जोड़ दिये जायँ तो वे समानान्तर (parallel) जुड़े हुए कहलाते हैं। चित्र (२०)।



चित्र 20. बाधकों का समानान्तर संयोजन.

---

1. किसी भी सरकिट में $\text{धारा} = \dfrac{\text{वोल्टेज}}{\text{बाधा}}$

अतः $\text{शक्ति} = \text{वोल्टेज} \times \text{धारा} = \text{वोल्टेज} \times \dfrac{\text{वोल्टेज}}{\text{बाधा}}$

$= \dfrac{(\text{वोल्टेज})^2}{\text{बाधा}}$ ।

पुनः $\text{धारा} = \dfrac{\text{वोल्टेज}}{\text{बाधा}}$

अतः $\text{वोल्टेज} = \text{धारा} \times \text{बाधा}$

तथा $\text{शक्ति} = \text{धारा} \times \text{धारा} \times \text{बाधा} = \text{धारा}^2 \times \text{बाधा}$

समानान्तर जुड़े हुए बाधकों की सम्मिलित बाधा निम्नलिखित गुरु द्वारा निकाली जा सकती है—

$$\frac{1}{\text{संम्पूर्ण बाधा}} = \frac{1}{\text{बाधा } 1} + \frac{1}{\text{बाधा } 2} + \frac{1}{\text{बाधा } 3}$$

ऊपर दिये गये गुर नीचे दिये गये उदाहरण से स्पष्ट हो जायँगे।

उदाहरण—यदि चार बाधक जिनकी बाधा क्रमशः 10, 5, 20 तथा 100 ओह्म है तो उनकी सम्मिलित बाधा क्या होगी—

(i) जब वे सब श्रेणीबद्ध लगा दिये जाते हैं ?

(ii) जब वे सब समानान्तर लगा दिये जाते हैं ?

उत्तर—(i) जब वे सब श्रेणीबद्ध लगा दिये जाते हैं तो उनकी कुल बाधा उन सब बाधकों के अर्घ के जोड़ के बराबर होगी। अतः कुल बाधा $=10+5+20+100=135$ ओह्म

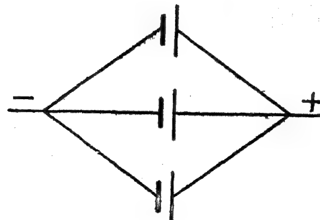
(ii) समानान्तर लगाने पर कुल बाधा निम्नानुसार निकाली जा सकती है—

$$\text{कुल बाधा} = \frac{1}{\frac{1}{10}+\frac{1}{5}+\frac{1}{20}+\frac{1}{100}} = \frac{1}{\frac{10+20+5+1}{100}}$$

$$= \frac{1}{\frac{36}{100}} = \frac{100}{36} = 2 \cdot 77 \text{ ओह्म}$$



क.



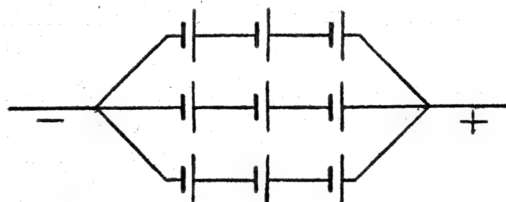
ख.

चित्र 21. सैलों का श्रेणीबद्ध (क) और समानान्तर (ख) संयोजन.

सैलों का श्रेणीबद्ध तथा समानान्तर प्रयोग (series and parallel combination of cells)—अनेकों कार्यों के लिए एक सैल से पर्याप्त धारा और वोल्टेज नहीं मिलती इसलिए एक से अधिक सैलों का प्रयोग करना पड़ता है। अधिक

शक्ति प्राप्त करने के लिए सैलें दो प्रकार से लगाई जा सकती हैं—श्रेणीबद्ध तथा समानान्तर । चित्र 21 में दोनों प्रकार से लगी सैलें दिखाई गई हैं । श्रेणीबद्ध लगाने के लिए पहिली सैल का ऋण छोर (—ive electrode) दूसरी सैल के धन छोर (+ive electrode) से तथा दूसरी का ऋण छोर तीसरी के धन छोर से लगा दिया जाता है । सिरे की दो सैलों में से एक का धन छोर और दूसरी का ऋण छोर खुला रहता है । **श्रेणीबद्ध लगाने से सैलों की वोल्टेज और साथ ही साथ उनके अन्दर की बाधा** (internal resistance) भी जुड़ जाती है । उदाहरण के लिए यदि एक सैल की वोल्टेज २ वोल्ट हो और ऐसी चार सैलें श्रेणीबद्ध लगा दी जायँ तो उनकी सम्मिलित वोल्टेज 2+2+2+2=8 वोल्टेज होगी । यदि उनमें से प्रत्येक की बाधा ·5 ओह्म हो तो कुल बाधा 2 ओह्म हो जायगी ।

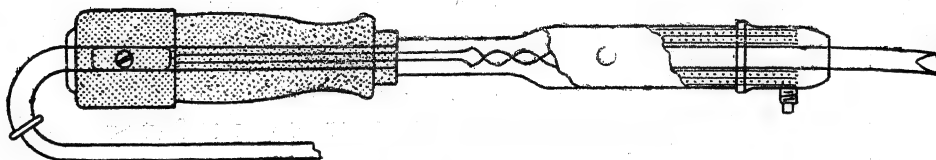
यदि सब सैलों का धन छोर एक स्थान पर और ऋण छोर दूसरे स्थान पर जोड़ दिया जाये तो वे सैलें समानान्तर कहलाती हैं । इस प्रकार लगाने से सब सैलों की धारा जुड़ जाती है परन्तु वोल्टेज एक सैल के बराबर ही रहती है । जिस स्थान पर अधिक धारा की आवश्यकता होती है वहाँ सैलें समानान्तर लगाई जाती हैं और



चित्र 22. सैलों का सम्मिलित संयोजन.

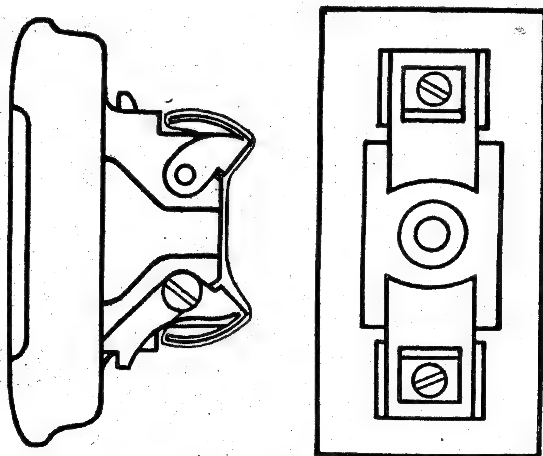
जब अधिक वोल्टेज की आवश्यकता है तो श्रेणीबद्ध । परन्तु जब अधिक वोल्टेज के साथ ही अधिक धारा की भी आवश्यकता होती है तो श्रेणीबद्ध तथा समानान्तर दोनों प्रकार से संयोजित सैलें सम्मिलित रूप से काम में ली जाती हैं । चित्र 22 में सैलों का सम्मिलित संयोजन दिखाया गया है ।

से ढक दिया जाता है । इस यन्त्र की रचना चित्र 24 से स्पष्ट हो जायगी। जब इसके सिरों पर उपयुक्त वोल्टेज दी जाती है तो तार में होकर धारा बहने लगती है और यह गरम हो जाता है। इस यन्त्र का उपयोग टाँका लगाने के लिए किया जाता है ।



चित्र 24. टाँका लगाने के यन्त्र की रचना.

फ़्यूज़ (fuse)—यदि किसी समय बिजली के दोनों तार आपस में जुड़ जायें तो बहुत अधिक धारा बहेगी और इसके कारण आग लगने का और साथ ही बिजली

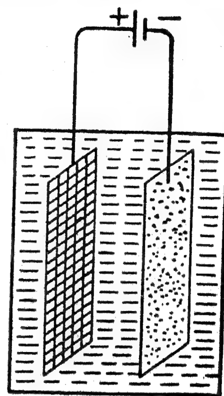


चित्र 25. फ़्यूज़ की रचना.

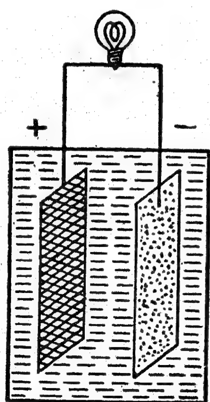
पैदा करने वाले यन्त्रों को भी हानि पहुँचने का भय है । इससे बचाने के लिए बिजली का गरम करने का प्रभाव काम में लाया जाता है। यदि धारा किसी महीन तार में होकर जाय तो वह तार गरम हो जायगा और यदि यह धारा एक निश्चित सीमा से अधिक हो तो वह तार गरम होकर पिघल जायगा (धारा की यह सीमा तार की मोटाई पर निर्भर रहती है) । तार के पिघल जाने के कारण सरकिट कट ज़ायगा

सकती है। जब सैल की सब शक्ति समाप्त हो जाती है तो फिर विद्युत-धारा देकर इसकी शक्ति बढ़ाई जा सकती है। इस प्रकार शक्ति बढ़ाना चार्जिंग कहलाता है।

सैकंडरी सैल का सिद्धान्त—यदि गंधकाम्ल मिश्रित मुर्दासंग (लैड आक्साइड) की तह चढ़ी हुई दो सीसे की प्लेटों को हल्के गंधकाम्ल में लटकाकर विद्युतधारा गुजारें तो इन प्लेटों पर लगे हुए मुर्दासंग में रासायनिक परिवर्तन हो जायगा (चित्र 27)। ऋण छोर पर लगी हुई प्लेट का लैड आक्साइड, छिद्रयुक्त सीसे (spongy lead) में और धन छोर (+ive) पर लगी हुई प्लेट का आक्साइड लैड-पर-आक्साइड (lead-per-oxide) में बदल जायगा। कुछ देर विद्युतधारा बहने के बाद यदि विद्युत स्त्रोत को हटाकर इन दोनों सीसे की प्लेटों पर दो वोल्ट का बल्ब लगा दें तो वह विद्युतधारा के कारण प्रकाश देने लगेगा (चित्र 28)। कुछ समय धारा बहने के बाद सीसे की प्लेटों पर लगे हुए पदार्थ अपनी पहली दशा में आ जायँगे और धारा बहना बन्द हो जायगा। इस सैल को फिर काम में लाने के लिए इसको धारा देकर चार्ज करना चाहिए।



चित्र 27.

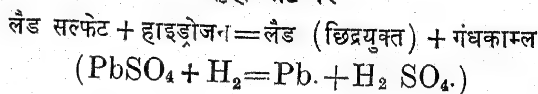


चित्र 28.

रासायनिक परिवर्तन—सैकंडरी सैल में होने वाले रासायनिक परिवर्तन निम्नानुसार प्रदर्शित किये जा सकते हैं—

चार्जिंग के समय

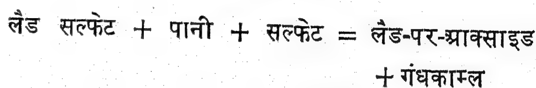
ऋण प्लेट पर



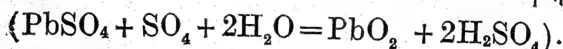
लैड सल्फेट + हाइड्रोजन = लैड (छिद्रयुक्त) + गंधकाम्ल

$$(PbSO_4 + H_2 = Pb. + H_2\ SO_4.)$$

धन प्लेट पर



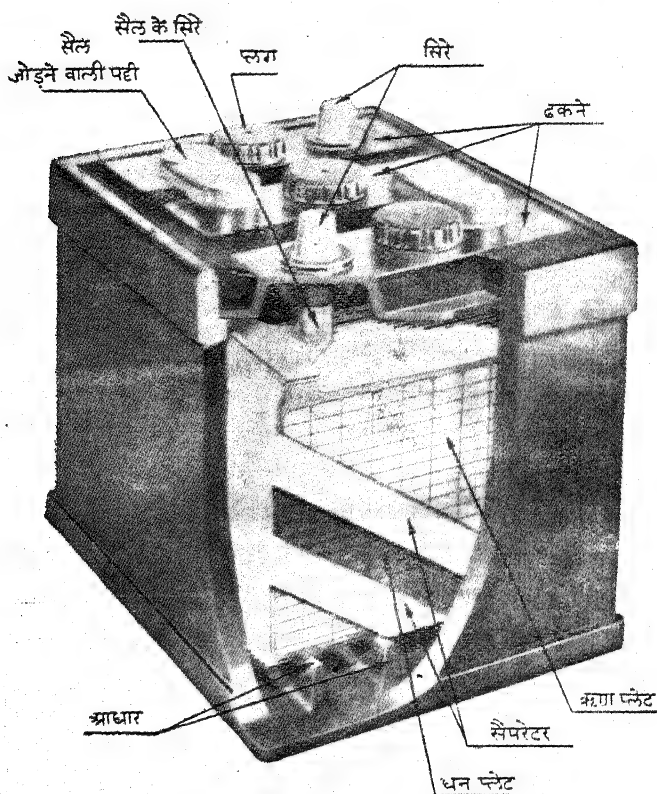
लैड सल्फेट + पानी + सल्फेट = लैड-पर-आक्साइड + गंधकाम्ल



$$(PbSO_4 + SO_4 + 2H_2O = PbO_2 + 2H_2SO_4).$$

इस प्रकार चार्जिंग के समय गंधकाम्ल उत्पन्न होता है। इसके कारण सैल

धन प्लेटों को अलग-अलग इकट्ठा किया जाता है फिर यह प्लेटें काँच अथवा अम्ल से प्रभावित न होने वाले प्लास्टिक के बर्तन में रखकर इनके चारों ओर हलका गंधकाम्ल भर दिया जाता है । चित्र 30 में सैकंडरी बैटरी की रचना दिखाई गई है ।



चित्र 30. सैकंडरी बैटरी की रचना.

बैटरी की स्थिति—व्यवहार में लाते समय बैटरी में कितनी शक्ति है (चार्ज्ड है) यह जानना आवश्यक है । बैटरी की स्थिति दो उपायों से जानी जा सकती है । प्रथम, बैटरी का वोल्टेज से; दूसरे, बैटरी के द्रव का घनत्व नापकर । नीचे के वर्णन में इन उपायों से बैटरी की शक्ति किस प्रकार ज्ञात की जा सकती है यह बताया गया है ।

सैकंडरी बैटरी पूरी चार्ज होने पर इसकी वोल्टेज 2·2 वोल्ट होती है । जैसे-जैसे इससे विद्युत ली जाती है वैसे-वैसे इसकी वोल्टेज कम होती जाती है । पूरी शक्ति

के द्रव का आपेक्षिक घनत्व बढ़ जाता है।

डिसचार्ज में—

धन प्लेट पर

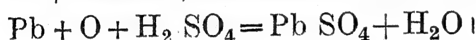
लैड-पर-आक्साइड + गंधकाम्ल = लैड सल्फेट + पानी + आक्सीजन



$Pbo_2 + H_2 SO_4 = Pb SO_4 + H_2O + O$

ऋण प्लेट पर

लैड + आक्सीजन + गंधकाम्ल = लैड सल्फेट + पानी



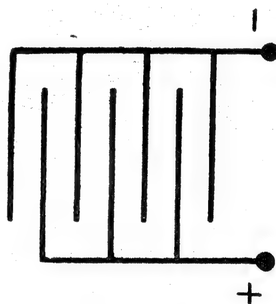
$Pb + O + H_2 SO_4 = Pb SO_4 + H_2O$।

इस प्रकार डिसचार्ज होने पर गंधकाम्ल प्लेटों पर लैड सल्फेट के रूप में मिल जाता है जिसके कारण सैल के द्रव का आपेक्षिक घनत्व कम हो जाता है।

रचना—एक सैकंडरी सैल से कितनी धारा कितनी देर तक ली जा सकती है यह सैल में प्रयुक्त सक्रिय रासायनिक पदार्थों पर निर्भर करता है और सक्रिय पदार्थों की मात्रा प्लेटों के क्षेत्रफल पर। अतः पर्याप्त शक्ति के लिए प्लेटों का क्षेत्रफल बहुत होना चाहिए। यदि केवल दो प्लेटें काम में लाई जायँ तो वे बहुत बड़ी हो जायँगी। अधिक शक्ति दे सकने वाली बैटरी में इस कठिनाई को दूर करने के लिए बहुत सी प्लेटें समानान्तर लगाई जाती हैं। चित्र 29 में यह प्लेटें किस प्रकार लगाई जाती हैं यह दिखाया गया है।

व्यवहार में धन प्लेटों से ऋण प्लेटों की संख्या एक अधिक रखी जाती हैं। साधारण सैलों से बिलकुल भिन्न, यह कई समानान्तर सैलें एक सैल ही कहलाती हैं।

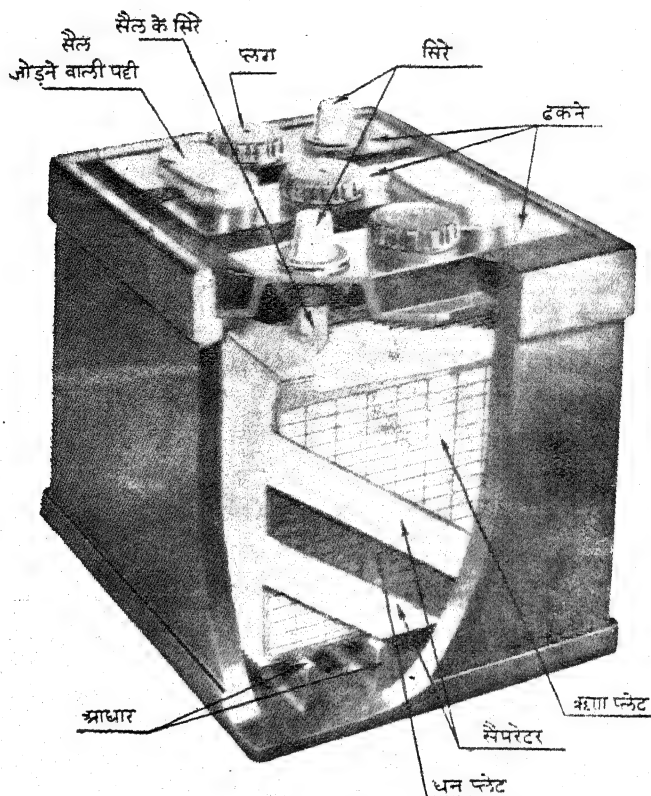
सैकंडरी बैटरियाँ प्रायः 2, 6 अथवा 12 वोल्ट देने के लिए बनाई जाती हैं। एक सैल की वोल्टेज 2 वोल्ट होती है अतः 6 वोल्ट के लिए तीन और 12 वोल्ट के लिए 6 सैलें श्रेणीबद्ध लगाई जाती हैं।



चित्र 29. सैकंडरी सैल में समानान्तर प्लेटों का लगाना.

प्लेटें बैटरी का प्रमुख भाग होती हैं। यह कई प्रकार से बनाई जाती हैं परन्तु साधारणतः एक जालीदार सीसे की प्लेट पर मुर्दासंग (लैड आक्साइड) तथा गंधकाम्ल का मिश्रण (पेस्ट) लगा दिया जाता है। प्लेटों को एक दूसरे से अलग रखने के लिए इनके बीच में लकड़ी के पतले पत्र लगा दिये जाते हैं। लकड़ी के यह पत्र सैपेरेटर (separator) कहलाते हैं। यह पत्र लकड़ी को विशेष रासायनिक पदार्थों द्वारा साफ करके बनाये जाते हैं। ऋण और

धन प्लेटों को अलग-अलग इकट्ठा किया जाता है फिर यह प्लेटें काँच अथवा अम्ल से प्रभावित न होने वाले प्लास्टिक के बर्तन में रखकर इनके चारों ओर हलका गंधकाम्ल भर दिया जाता है। चित्र 30 में सैकंडरी बैटरी की रचना दिखाई गई है।



चित्र 30. सैकंडरी बैटरी की रचना.

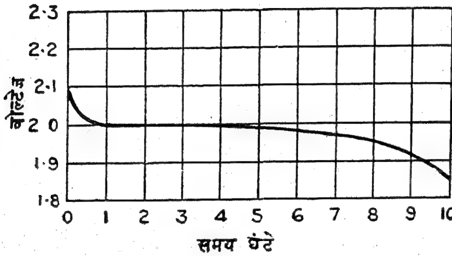
बैटरी की स्थिति—व्यवहार में लाते समय बैटरी में कितनी शक्ति है (चार्ज्ड है) यह जानना आवश्यक है। बैटरी की स्थिति दो उपायों से जानी जा सकती है। प्रथम, बैटरी का वोल्टेज से; दूसरे, बैटरी के द्रव का घनत्व नापकर। नीचे के वर्णन में इन उपायों से बैटरी की शक्ति किस प्रकार ज्ञात की जा सकती है यह बताया गया है।

सैकंडरी बैटरी पूरी चार्ज होने पर इसकी वोल्टेज 2·2 वोल्ट होती है। जैसे-जैसे इससे विद्युत ली जाती है वैसे-वैसे इसकी वोल्टेज कम होती जाती है। पूरी शक्ति



समाप्त होने पर इसकी वोल्टेज 1·8 वोल्ट रह जाती है। इस प्रकार बैटरी की वोल्टेज से इसकी स्थिति जानी जा सकती है।

चित्र 31 में बैटरी की वोल्टेज काम में लाने पर किस प्रकार घटती है यह दिखाया गया है।



चित्र 31.

वोल्टेज के अतिरिक्त सैल के द्रव का आपेक्षिक घनत्व नापकर भी, इसकी स्थिति जानी जा सकती है। बैटरी में होने वाली रासायनिक क्रिया ऊपर दी जा चुकी है। इससे यह स्पष्ट हो जाता है कि चार्जिंग के समय बैटरी के द्रव (इलेक्ट्रोलाइट) में गंधकाम्ल बढ़ता है और इस कारण जैसे-जैसे बैटरी चार्ज होती है वैसे-वैसे बैटरी का द्रव भारी होता जाता है। बैटरी के पूर्ण चार्ज होने पर द्रव का आपेक्षिक घनत्व 1·25 होता है। जैसे-जैसे बैटरी से धारा ली जाती है वैसे-वैसे गंधकाम्ल द्रव में कम होता जाता है। इस कारण जैसे-जैसे बैटरी की शक्ति कम होती जाती है वैसे-वैसे ही द्रव का घनत्व भी कम होता जाता है। इस कारण द्रव का घनत्व नापकर भी बैटरी की दशा ज्ञात की जा सकती है। पूर्ण शक्ति समाप्त (डिसचार्ज) होने पर द्रव का आपेक्षिक घनत्व 1·16 रह जाता है।



चित्र 32.
हाइड्रोमीटर.

आपेक्षिक घनत्व सरलता से नापने के लिए एक यन्त्र जो कि हाइड्रोमीटर (hydrometer) कहलाता है काम में लाया जाता है। चित्र 32 में यह यन्त्र दिखाया गया है। आपेक्षिक घनत्व नापने के लिए इसकी रबर दबाकर इसका सिरा द्रव में डुबोकर रबर छोड़ दी जाती है। रबर फूलने पर इसमें कुछ द्रव (इलेक्ट्रोलाइट) ऊपर खिंच आता है। इसके अन्दर पड़े हुए काँच के ट्यूब पर द्रव का घनत्व पढ़ा जा सकता है। यदि द्रव भारी होगा तो वह कम डूबेगा और हल्के होने पर अधिक। नीचे दी हुई तालिका में आपेक्षिक घनत्व और बैटरी की शक्ति का सम्बन्ध दिखाया गया है।

तालिका

आपेक्षिक घनत्व	% शक्ति (चार्ज)
1·250	100%
1·220	75%
1·2	50%
1·18	25%
1·16	...

सावधानियाँ—सैकंडरी बैटरी काम में लाते समय निम्न बातों का ध्यान रखने से बैटरी अधिक समय तक काम दे सकेगी—

1. बैटरी के सिरे आपस में न जुड़ने पायें। सैकंडरी बैटरी की अन्दर की बाधा बहुत कम होती है। यदि किसी समय इसके सिरे (परिचालक द्वारा) आपस में जुड़ जायँ तो बहुत अधिक धारा बहेगी और इस कारण बैटरी खराब हो सकती है।

2. बैटरी की शक्ति समाप्त होने पर (डिसचार्ज्ड) होने पर इसे काम में न लाया जाय। बैटरी के डिसचार्ज होने पर इसकी प्लेटों पर लैड सल्फेट की तह जम जाती है। इसको आगे काम में लाने से अथवा अधिक समय इसी स्थिति में रखने से लैड सल्फेट की तह कड़ी हो जाती है। यह तह चार्जिंग के समय सरलता से सक्रिय पदार्थों में नहीं बदलती और इस प्रकार बैटरी की शक्ति कम हो जाती है।

3. बैटरी से निश्चित सीमा से अधिक धारा नहीं लेनी चाहिए। ऐसा करने से बैटरी जल्दी खराब हो जाती है।

4. कोई भी जोड़ ढीला अथवा किसी भी सिरे पर जंग नहीं लगने देनी चाहिए। इसके सिरों को साफ़ करके उन पर वैसलीन लगा देनी चाहिए। अम्ल होने के कारण इन सिरों पर ग्रीज़ का उपयोग भी सिरों को जंग लगा देता है अतः ग्रीज़ का उपयोग नहीं करना चाहिए।

5. बैटरी को बहुत समय तक बेकार नहीं रखना चाहिए। यदि काम में न भी लानी पड़े तो भी प्रति सप्ताह थोड़ी देर के लिए चार्ज करने से बैटरी अच्छी अवस्था में बनी रहती है।

पाँचवाँ प्रकरण

चुम्बकत्व तथा विद्युतधारा के चुम्बकीय प्रभाव और विद्युतमापक यन्त्र

(Magnetism and magnetic effects of current and meters)

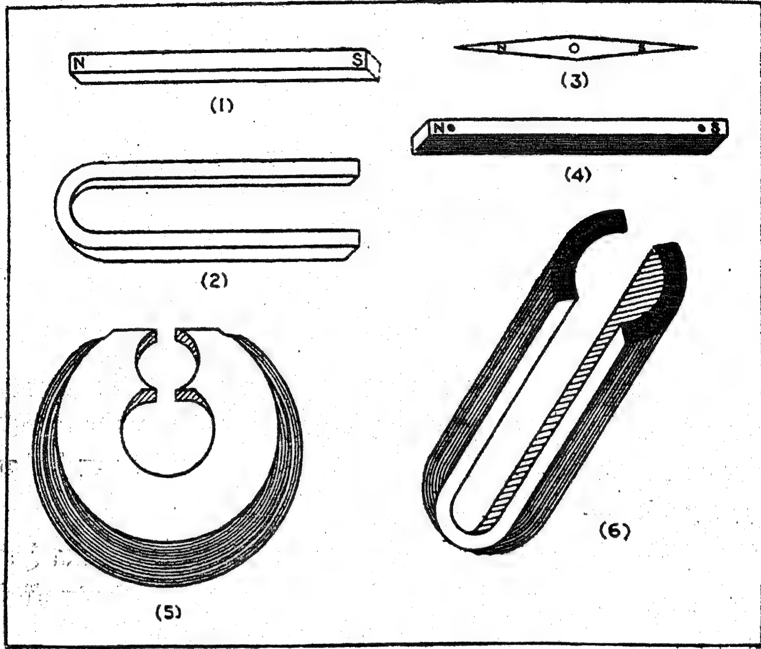
प्राकृतिक चुम्बक—अब से बहुत समय पहिले मैगनीसिया (एशिया माइनर) में एक काला पदार्थ पाया गया था। जिस स्थान पर यह पदार्थ पाया गया था उसके आधार पर इसका नाम मैगनेटाइट (magnetite) रखा गया। इस पदार्थ में दा विशेष गुण होते हैं—

1. जब इस पदार्थ का कोई टुकड़ा लोहे के बुरादे में डाला जाता है तो कुछ बुरादा इसके ऊपर चिपक जाता है। यह इसका लोहे को अपनी ओर खींचने का गुण है।

2. जब इस पदार्थ का टुकड़ा किसी महीन बिना बटे हुए धागे से इस प्रकार लटकाया जाता है कि यह घूम सके तो कुछ देर बाद यह एक निश्चित दिशा में ठहर जाता है। यदि इसे इस दिशा से हटा दिया जाय तो फिर यह इसी दिशा में आकर ठहर जायगा। जब यह ठहर जाता है तो इसके सिरे उत्तर तथा दक्षिण की ओर रहते हैं।

ऊपर वर्णित पदार्थ में खींचने की शक्ति होने के कारण यह चुम्बक कहलाता है तथा प्राकृतिक होने के कारण इस प्रकार के चुम्बक प्राकृतिक चुम्बक कहलाते हैं।

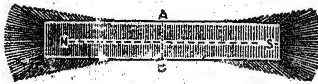
कृत्रिम चुम्बक—प्राकृतिक चुम्बक बनावट में टेढ़े-मेढ़े होते हैं और उनकी खींचने की शक्ति कम होती है। इसलिए वे बहुत से कार्यों के लिए अनुपयुक्त होते हैं। कई धातुओं जैसे लोहा, स्पात आदि में चुम्बकीय गुण लाये जा सकते हैं। धातुओं से बनाये गये चुम्बक, जिनमें कि चुम्बकीय गुण लाये गये हैं, कृत्रिम चुम्बक कहलाते हैं। विभिन्न कार्यों के लिए चुम्बक विभिन्न शक्लों के बनाये जाते हैं और उनकी शक्ल के अनुसार ही उनका नाम रहता है। चित्र 33 में कई विभिन्न प्रकार के कृत्रिम चुम्बक दिखाये गये हैं।



चित्र 33. विभिन्न प्रकार के चुम्बक.

1. छड़ चुम्बक, 2. नाल के आकार का चुम्बक, 3. चुम्बकीय सुई, 4. पत्रों से बना छड़ चुम्बक, 5. मापक यन्त्र में प्रयुक्त चुम्बक, और 6. साइकिल डायनमो में प्रयुक्त चुम्बक.

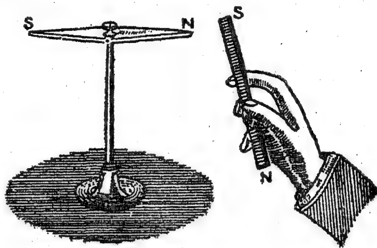
चुम्बक के ध्रुव—यदि एक चुम्बक को लोहे के बुरादे में डुबाया जाय तो उस पर बुरादा चिपक जायगा । ध्यान से देखने पर ज्ञात होगा कि यह बुरादा सिरों पर अधिक चिपका है और बीच में बिल्कुल नहीं । अतः दोनों सिरों के निकट ऐसे बिन्दु हैं जहाँ पर चुम्बक की खींचने की शक्ति और सब जगह से अधिक है । चुम्बक के यह सबसे अधिक शक्ति वाले बिन्दु चुम्बक के ध्रुव (poles) कहलाते हैं (चित्र 34) ।



चित्र 34. चुम्बक के ध्रुव.

जब चुम्बक लटका दिया जाता है तो उसके सिरे उत्तर तथा दक्षिण की ओर हो जाते हैं । चुम्बक का जो सिरा उत्तर की ओर रहता है वह उत्तरी ध्रुव तथा जो दक्षिण की ओर रहता है वह दक्षिणी ध्रुव कहलाता है ।

चुम्बकीय आकर्षण और निराकरण के नियम—एक चुम्बक के पास दूसरा चुम्बक लाने पर दूसरा प्रभाव दिखाई देता है। इसे देखने के लिए एक चुम्बकीय सुई और छड़ चुम्बक लिया जाता है। जब छड़ चुम्बक का उत्तरी ध्रुव सुई के उत्तरी ध्रुव के पास लाया जाता है तो चुम्बकीय सुई दूर हटती है। परन्तु यदि सुई के उत्तरी ध्रुव के पास छड़ चुम्बक का दक्षिणी ध्रुव लाया जाय तो सुई छड़ की ओर खिचती है। ठीक इसी प्रकार सुई के दक्षिणी ध्रुव के पास छड़ चुम्बक का दक्षिणी ध्रुव ले जाने पर सुई दूर हटेगी। परन्तु उत्तरी ध्रुव दक्षिणी ध्रुव के पास ले जाने पर पास खींचेगी। इससे यह पता लगता है कि समान ध्रुव एक दूसरे को दूर हटाते हैं और असमान ध्रुव एक दूसरे को आकर्षित करते हैं।



चित्र 35. चुम्बकीय आकर्षण और निराकरण के नियम.

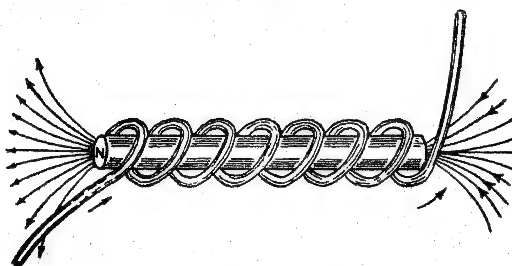
विभिन्न चुम्बकीय पदार्थ और उनके गुण—लोहा, कोबाल्ट, निकिल, जस्ता और मैंगनीज़ ये पाँच पदार्थ तथा इनसे बनाई हुई मिश्रित धातुओं में चुम्बकीय गुण होते हैं। शक्तिशाली चुम्बक के पास रखने पर इन सभी में चुम्बकीय गुण आ जाते हैं। किस कार्य के लिए कौनसा पदार्थ उपयुक्त होगा यह उस पदार्थ के कुछ गुणों पर निर्भर करता है। चुम्बकीय पदार्थों के मुख्य गुण नीचे दिये गये हैं।

चुम्बकत्व प्राप्त करने का गुण (Susceptibility)—यदि किसी चुम्बकीय क्षेत्र में चुम्बक-रहित कोई चुम्बकीय पदार्थ रखा जाय तो उसमें चुम्बक के गुण आ जाते हैं। एक ही शक्ति के क्षेत्र में रखने पर विभिन्न पदार्थों में विभिन्न मात्रा में यह गुण आते हैं। यदि उन पदार्थों में एक नरम लोहे का टुकड़ा हो और दूसरा इस्पात (steel) का तो नरम लोहा इस्पात की अपेक्षा अधिक चुम्बकीय हो जाता है। पदार्थों का वह गुण जिसके कारण चुम्बकीय क्षेत्र में रखने पर उनमें चुम्बक के गुण आ जाते हैं 'चुम्बकत्व प्राप्त करने का गुण' कहलाता है। जिन पदार्थों में चुम्बकत्व प्राप्त करने का गुण अधिक होता है उनका प्रयोग विद्युत-चुम्बक और विद्युत के अन्य यन्त्रों में होता है।

चुम्बकत्व रखने की शक्ति (Retentivity)—यदि कई पदार्थ एक बराबर ही किसी चुम्बक के प्रभाव से चुम्बकीय बनाये जायँ और फिर वह प्रभावित करने वाला चुम्बक हटा लिया जाय तो उन सब में समान चुम्बकत्व नहीं रहता। यदि उन पदार्थों में से एक इस्पात हो और दूसरा नरम लोहे का टुकड़ा, तो इस्पात (steel) के टुकड़े में नरम लोहे की अपेक्षा अधिक चुम्बकत्व रह जायगा। इस

प्रकार चुम्बक रखने की शक्ति नरम लोहे की अपेक्षा इस्पात में अधिक है। वे पदार्थ जिनमें चुम्बकत्व रखने की शक्ति अधिक होती है स्थायी (permanent) चुम्बक बनाने के कार्य में लिये जाते हैं।

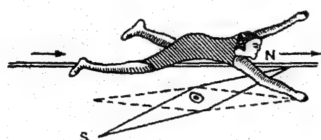
विद्युतधारा के चुम्बकीय प्रभाव—जब किसी तार में होकर वितद्युधारा बहती है तब उस तार में चुम्बकीय गुण आ जाते हैं। ये गुण उस तार में उसी समय तक रहते हैं जब तक कि उसमें विद्युतधारा बहती है। विद्युतधारा बन्द होने पर उस तार के चुम्बकीय गुण भी समाप्त हो जाते हैं। यदि किसी नरम लोहे के टुकड़े के ऊपर तार लपेट-कर उसमें से विद्युतधारा गुजारें तो वह लोहे का टुकड़ा चुम्बक बन जाता है तथा अन्य लोहे के टुकड़ों को अपनी ओर खींचता है। विद्युतधारा बन्द कर देने पर उस टुकड़े के गुण प्रायः नष्ट हो जाते हैं।



चित्र 36. तार में विद्युतधारा प्रवाहित करने पर लोहे का टुकड़ा चुम्बकीय हो जाता है.

विद्युत चुम्बक इसी सिद्धान्त पर बनाये जाते हैं। विद्युत चुम्बक में नरम लोहे के टुकड़े पर तार की अनेकों तहें लिपटी रहती हैं। जब तार में होकर विद्युत-धारा गुजरती है तो वह लोहे का टुकड़ा शक्तिशाली चुम्बक बन जाता है।

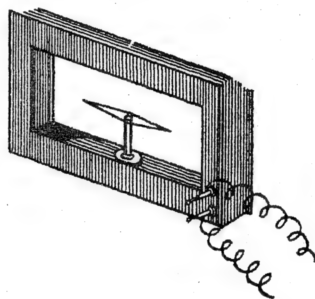
ऊपर बताया गया है कि जब विद्युतधारा किसी तार में होकर गुजरती है तो उस तार में चुम्बकीय गुण आ जाते हैं। जब यह तार किसी चुम्बकीय सुई के ऊपर रखा जाता है तो सुई घूम जाती है। सुई के घूमने का कारण चुम्बकीय सुई और तार में उत्पन्न चुम्बकत्व का पारस्परिक प्रभाव है। जिस दिशा में वह सुई घूमेगी वह एम्पियर के 'स्विमिंग रूल' (स्विमिंग=तैरना) (ampere's swimming rule) द्वारा मालूम की जा सकती है। इस नियम के अनुसार यदि हम कल्पना करें कि सुई की ओर मुँह किए हुए विद्युतधारा-प्रवाह की दिशा में कोई व्यक्ति तैर रहा है तो उस सुई का उत्तरा ध्रुव सदैव उस व्यक्ति के बायें हाथ की ओर घूम जायगा (चित्र 37)।



चित्र 37. एम्पियर का स्विमिंग रूल.

विद्युतधारा दर्शक (Galvanoscope)—विद्युतधारा का यह प्रभाव, जिसके कारण चुम्बकीय सुई घूमती है, विद्युतधारा बताने वाले यन्त्र बनाने के काम

में लाया जाता है। यदि एक सीधे तार के स्थान पर तार के कई लपेट देकर चित्र (38) के अनुसार रखा जाय तो चुम्बकीय सुई उस तार में होकर बहुत थोड़ी धारा (current) गुजरने पर घूम जायगी तथा इस यन्त्र द्वारा धारा का पता लग सकता है। इस प्रकार प्राप्त यन्त्र विद्युतधारा दर्शक यन्त्र कहलाता है।



चित्र 38. विद्युतधारा दर्शक का सिद्धान्त.

ऊपर वर्णित यन्त्र में विद्युतधारा के क्षेत्र में चुम्बकीय सुई घूमने से विद्युतधारा का पता लगाया जाता है। परन्तु विद्युतधारा और चुम्बक का यह प्रभाव पारस्परिक (mutual) है। जिस प्रकार तार में होकर जाने वाली धारा के प्रभाव से चुम्बक घूमता है ठीक उसी प्रकार यदि किसी चुम्बक के ध्रुवों के बीच में तार की क लपेट हों तो जब उस तार में होकर धारा बहेगी वह कॉइल घूमेगा।

ऊपर के वर्णन के अनुसार विद्युतधारा बताने के लिए दो प्रकार के यन्त्र कार्य में लाये जा सकते हैं। पहिली प्रकार के यन्त्र में एक तार के कॉइल में चुम्बकीय सुई घूमती है और दूसरी प्रकार के यन्त्र में एक शक्तिशाली चुम्बक के ध्रुवों के बीच में तार का कॉइल घूमता है। दूसरी प्रकार के यन्त्र पहिली प्रकार के यन्त्रों से निम्नलिखित कारणों से अच्छे होते हैं —

1. चुम्बक के सिरों के बीच में बहुत शक्तिशाली क्षेत्र होता है। यह क्षत्र कॉइल को चारों ओर से घेरे रहता है इसलिए इस प्रकार के यन्त्र पर बाहर रखे हुए किसी भी चुम्बक का प्रभाव नहीं पड़ता।

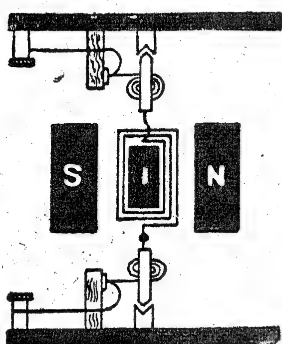
2. यह यन्त्र किसी भी स्थिति में रखा जा सकता है जब कि पहिली प्रकार के यन्त्र केवल सीधे ही रखकर कार्य में लाये जा सकते हैं।

3. इस प्रकार के यन्त्र द्वारा बहुत कम धारा भी नापी जा सकती है।

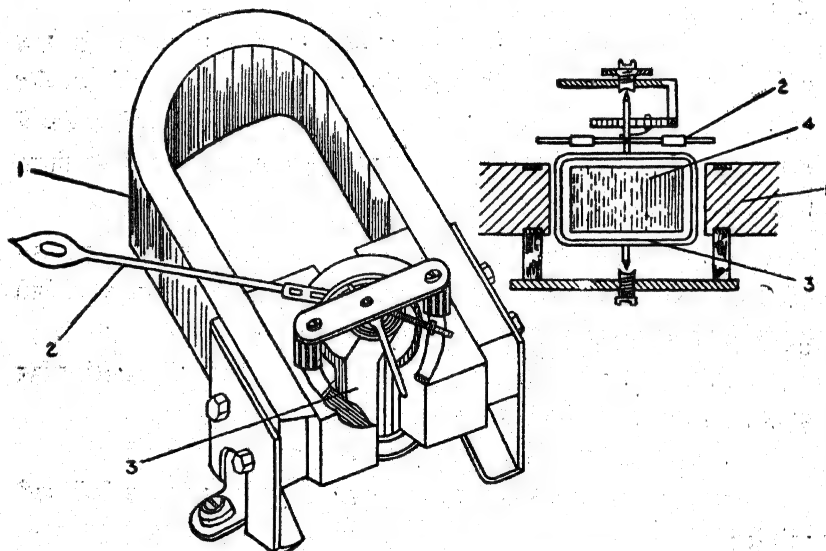
उपर्युक्त अच्छाइयों के कारण प्रायः दूसरी प्रकार के यन्त्र ही कार्य में लाये जाते हैं।

चित्र 39 में दूसरी प्रकार (moving coil) के विद्युतधारा दर्शक का सिद्धान्त दिखाया गया है। इसमें एक गोलाकार चुम्बक के ध्रुवों (poles) N तथा S के बीच में एक आयताकार कॉइल लटका रहता है। चुम्बक के ध्रुवों को अधिक प्रभावी बनाने के लिए गोल कर दिया जाता है और कॉइल के बीच में एक नरम लोहे का बेलनाकार (cylindrical) टुकड़ा लगा दिया जाता है।

जब इस कॉइल म होकर धारा बहती है तो यह घूमता है। इसके घूमने को नियन्त्रित करने के लिए एक बालकमानी (hair-spring) लगी रहती है। इस कॉइल के साथ एक सुई लगी रहती है जो कि एक पैमाने पर घूमती है। जब यन्त्र में होकर धारा बहती है तो कॉइल घूमता है और इसके साथ सुई भी घूमती है। यदि धारा कम होगी तो सुई कम घूमेगी और जब धारा अधिक होगी तो अधिक। यह यन्त्र विद्युतधारा और वोल्टेज नापने के लिए भा उपयोग में लाए जा सकते हैं। इस कार्य के लिए इनका उपयोग किसप्रकार किया जा सकता है यह आगे बताया गया है। इसका रचना चित्र 40 में दिखाई गई है।



चित्र 39. चल कॉइल धारा दर्शक का सिद्धान्त.



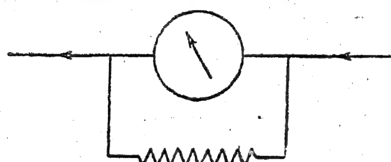
चित्र 40. चल कॉइल-धारा दर्शक की रचना.

1. चुम्बक, 2. सुई, 3. कॉइल, और 4. नरम लोहे का टुकड़ा.

धारामापक (Ammeter)—ऊपर धारा बताने वाले यन्त्र का वर्णन किया गया है। यही यन्त्र धारा नापने के लिए भी काम में लाया जा सकता है। धारा नापने के लिए यन्त्र पर निश्चित धारा दी जाती है और धारा बहने पर सुई जितनी घूमती

है उसके अनुसार निशान लगा दिये जाते हैं। इस प्रकार निशान लगाने के बाद यह यन्त्र धारा नापने के लिए प्रयोग किया जा सकता है। इस प्रकार के यन्त्र द्वारा एक निश्चित सीमा से अधिक धारा नहीं नापी जा सकती। यदि अधिक धारा नापने की आवश्यकता हो तो इस यन्त्र के समानान्तर[1] एक अन्य बाधक लगाना पड़ता है। चित्र 41 में यह बाधक किस प्रकार लगाया जाता है यह दिखाया गया है। इस प्रकार लगाया हुआ बाधक शन्ट (shunt) कहलाता है।

यन्त्र के समानान्तर बाधक लगाने से कुल धारा का कुछ भाग यन्त्र में होकर



चित्र 41.

जाता है तथा शेष बाधक में होकर जाता है। इस प्रकार वही यन्त्र अधिक धारा बता सकता है। उदाहरण के लिए यदि यन्त्र की बाधा 15 ओह्म है और इसके समानान्तर 30 ओह्म का बाधक लगा दिया जाय तो उसकी कुल बाधा 10 ओह्म होगी—

$$\frac{1}{\text{बा}}=\frac{1}{15}+\frac{1}{30}=\frac{30+15}{450}=\frac{1}{10} \qquad \text{बा}=10 \text{ ओह्म.}$$

इस प्रकार यन्त्र में होकर जाने वाली धारा का $\frac{2}{3}$ यन्त्र में होकर तथा $\frac{1}{3}$ बाधक में होकर जायगा। इस प्रकार यदि पहिले यन्त्र 1 एम्पीयर तक नाप सकता था तो अब 1·5 एम्पीयर तक नाप सकेगा। 30 ओह्म के स्थान पर 15 ओह्म का बाधक लगाने पर यह यन्त्र 2 एम्पीयर तक नाप सकेगा। इसी प्रकार विभिन्न अर्घ (value) के बाधक समानान्तर लगाने से विभिन्न धारायें नापी जा सकती हैं। समानान्तर लगाए जाने वाले बाधक का अर्घ निकालने के लिए निम्नलिखित बातों का ज्ञान आवश्यक है—

1. यन्त्र की बाधा;
2. यन्त्र द्वारा नापी जा सकने वाली कुल धारा; और
3. कुल धारा जो नापनी है।

---

1. समानान्तर बाधक लगाने के बाद यन्त्र पर धारा नापने के लिए दुबारा निशान लगाने पड़ते हैं।

निम्न गुर द्वारा बाधक का अर्घ निकाला जा सकता है—

$$\text{बा. } 1 = \text{यन्त्र की बाधा} \times \frac{\text{यन्त्र की धारा}}{\text{कुल धारा} - \text{यन्त्र की धारा}}$$

बा. 1=समानान्तर लगाया जाने वाला बाधक.

उदाहरण—

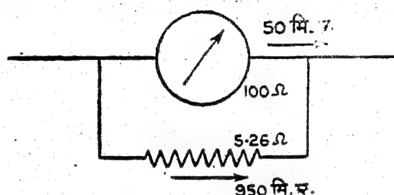
एक यन्त्र जिसकी बाधा 100 ओह्म है कुल 50 मि० एम्पीयर नाप सकता है। इस यन्त्र द्वारा कुल 1 एम्पीयर धारा नापनी है तो समानान्तर लगाये जाने वाले बाधक का अर्घ निकालो। उपर्युक्त गुर द्वारा—

$$\text{बा. } 1 = \text{यन्त्र की बाधा} \times \frac{\text{यन्त्र की बाधा}}{\text{कुल धारा} - \text{यन्त्र की धारा}}$$

$$\text{अतः ब. } 1 = 100 \times \frac{50}{100 \times}\left(1 - \frac{50}{100}\right) = \frac{5 \times 1000}{950}$$

$$= 5{\cdot}26 \text{ ओह्म.}$$

इस प्रकार प्राप्त धारामापक का चित्र तथा कुल धारा किस प्रकार जायगी यह चित्र 42 में दिखाया गया है।



चित्र 42.

वोल्टमापक (Voltmeter)- ओह्म के नियम के अनुसार किसी बाधक में होकर जाने वाली धारा निम्न गुर द्वारा निकाली जा सकती है—

$$\text{धारा} = \frac{\text{वोल्टेज}}{\text{बाधा}} \quad \left\{ I = \frac{E}{R} \right\}$$

अतःयदि किसी धारामापक के सिरों पर एक बाधक लगा दिया जाय तो उस यन्त्र में होकर बहने वाली धारा उस यन्त्र के सिरों पर दी गई वोल्टेज पर निर्भर करेगी। इस प्रकार यदि—

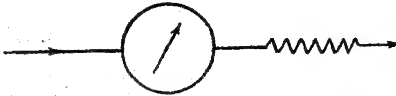
(i) यन्त्र की बाधा;

(ii) श्रेणी में लगाई गई बाधा; और

(iii) यन्त्र में होकर जाने वाली धारा

मालूम हो तो यन्त्र के सिरों पर दी गई वोल्टेज का पता लगाया जा सकता है। उदाहरण के लिए एक यन्त्र की बाधा 10 ओह्म है और वह कुल 5 एम्पीयर

नाप सकता है । अब यदि उस यन्त्र के साथ श्रेणी (series) में एक 390 ओह्म का बाधक लगा दिया जाय तो जब यन्त्र के सिरों पर 200 वोल्ट दिये जायँगे उसमें होकर 0·5 एम्पीयर धारा बहेगी। क्योंकि



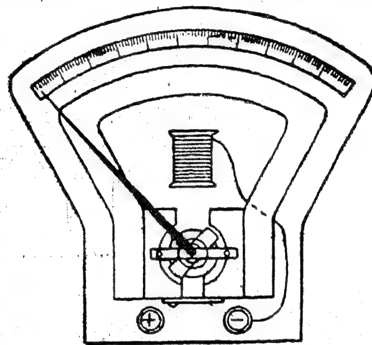
चित्र 43.

$$\text{धारा} = \frac{\text{वोल्टेज}}{\text{बाधा}}$$

$$\therefore \cdot 5 = \frac{\text{वो०}}{390+10} = \frac{\text{वो०}}{400}$$

$$\therefore \cdot 5 \times 400 = \text{वो०} = 200 \text{ वोल्ट.}$$

यह बहने वाली धारा वोल्टेज के सम अनुपात में होगी । उदाहरणार्थ 100 वोल्टेज पर ·25 एम्पीयर तथा 40 वोल्ट पर ·1 एम्पीयर धारा बहेगी । इस प्रकार इस यन्त्र पर धारा के स्थान पर वोल्टेज के निशान लगाकर इससे वोल्टेज नापी जा सकती है ।



चित्र 44. वोल्टमापक.

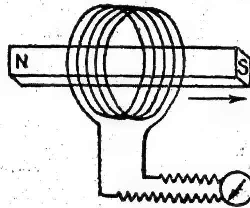
व्यवहार में आने वाले वोल्टमापकों में यह बाधा यन्त्र का ही एक भाग होती है और यन्त्र पर वोल्टेज के ही निशान लगे होते हैं । वोल्ट-मापक के लिए यह आवश्यक है कि वह कम-से-कम धारा ले । अतः इनके लिए इस प्रकार के मापकों का प्रयोग किया जाता है जो कि प्रायः $\frac{१}{१०००००}$ एम्पीयर से लेकर $\frac{१}{१०००}$ एम्पीयर तक धारा माप सकते हैं । चित्र 44 में एक वोल्टमापक का चित्र दिया गया है ।

छठा प्रकरण

विद्युत-चुम्बकीय उपपादन

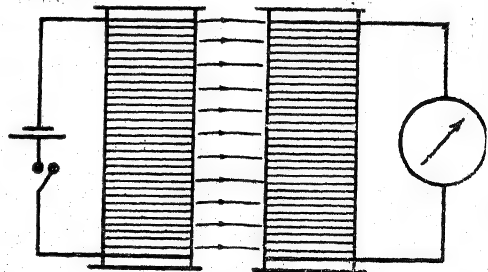
(Electro-magnetic Induction)

पिछले प्रकरण म विद्युतधारा और चुम्बक के पारस्परिक प्रभाव का वर्णन किया जा चुका है। विद्युतधारा और चुम्बक का पारस्परिक प्रभाव यहीं तक सीमित नहीं है। यदि किसी कॉइल के पास से एक चुम्बक तेजी से हटाया जाय अथवा किसी चुम्बक के ध्रुवों के बीच में एक कॉइल घुमाया जाय तो उस कॉइल में विद्युत उत्पन्न होगी। चुम्बक और कॉइल का यह प्रभाव उपपादन (induction) कहलाता है। आजकल के सभी विद्युत पैदा करने वाले यन्त्र—डायनमो आदि—इस सिद्धान्त पर आधारित हैं। नीचे इस सिद्धान्त का विस्तृत वर्णन किया गया है।



चित्र 45.

ऊपर बताया जा चुका है कि यदि किसी तार के कॉइल के पास से एक चुम्बक तेजी से गुजारें तो उस कॉइल में थोड़ी देर के लिए विद्युतधारा उत्पन्न होगी चित्र 45. इसी प्रकार यदि दो पास-पास रखे हुए कॉइलों में से एक में होकर विद्युतधारा गुजारें तो जिस समय विद्युतधारा प्रारम्भ की जाती है उस समय थोड़ी देर के लिए दूसरे कॉइल में भी विद्युतधारा उत्पन्न होगी। इस प्रकार उत्पन्न विद्युतधारा और इसकी दिशा इस कॉइल के सिरों पर लगाये गय धारादर्शक (galvanometer) द्वारा देखी जा सकती ह (चित्र 46)। यदि प्रारम्भ करने के बाद विद्युतधारा पहिले कॉइल में होकर बहती रहे तो कुछ समय बाद दूसरे कॉइल में विद्युतधारा पैदा नहीं



चित्र 46.

होगी। परन्तु फिर जैसे ही पहिले कॉइल में जाने वाली विद्युतधारा बन्द करते हैं वैसे ही दूसरे कॉइल में थोड़ी देर के लिए विद्युतधारा पहिली बार से विपरीत (opposite) दिशा में बहेगी।

उपर्युक्त उदाहरणों में से पहिले में विद्युतधारा चुम्बक के तेजी से हटाने का प्रभाव था और दूसरे में विद्युतधारा प्रवाहित करने का। जब चुम्बक तेजी से हटाया जाता है तो चुम्बकीय शक्ति (magnetic field) में परिवर्तन होता है। और जब तक यह परिवर्तन होता रहता है उस समय तक विद्युत पैदा होती है। ठीक इसी प्रकार जब एक कॉइल में विद्युतधारा प्रवाहित की जाती है तो उसके आस-पास एक चुम्बकीय क्षेत्र बनता है और इसकी शक्ति बढ़ती है। जब तक कि चुम्बकीय क्षेत्र की शक्ति (magnetic field strength) में परिवर्तन होता है तब तक दूसरे कॉइल में विद्युतधारा बहती है। थोड़ी देर बाद जब पहिले कॉइल के कारण उत्पन्न चुम्बकीय क्षेत्र की शक्ति स्थायी हो जाती है तब फिर दूसरे कॉइल में विद्युत पैदा नहीं होती।

जब पहिले कॉइल में विद्युतधारा बन्द की जाती है उस समय फिर चुम्बकीय क्षेत्र की शक्ति कम होने लगती है। जब तक घटते-घटते यह समाप्त नहीं हो जाती उस समय तक दूसरे कॉइल में होकर विद्युतधारा बहती है। सामान्यतः (commonly) 'जब किसी विद्युत परिचालक (conductor), जिसके सिरे जुड़े हुए हैं, के पास चुम्बकीय शक्ति (magnetic field strength) में परिवर्तन होता है तो जितनी देर तक वह परिवर्तन होता है उतने समय तक उस कॉइल में विद्युतधारा बहती है।

चुम्बकीय क्षेत्र के परिवर्तन द्वारा विद्युत कैसे पैदा होती है—प्रकरण 3 में यह बताया जा चुका है कि विद्युतधारा ऋण विद्युत-कणों (electrons) के बहाव का प्रभाव है। जब किसी तार में होकर विद्युतधारा बहती है तो उस तार में चुम्बकीय गुण आ जाते हैं। इस प्रकार यह गुण तार में होकर बहने वाले विद्युत-कणों के प्रभाव के कारण उत्पन्न होते हैं। जब किसी तार के कॉइल के पास चुम्बकीय शक्ति में परिवर्तन होता है तो इस परिवर्तन के कारण विद्युत-कण बहने का प्रयत्न करते हैं। यदि तार के सिरे जुड़े हुए हों तो उस तार में होकर विद्युतधारा बहने लगेगी। यदि उस तार के सिरे जुड़े हुए न हों तो भी उसके सिरों पर वि. वा. ब. पैदा होगा पर धारा नहीं बहेगी।

फैराडे के नियम—उपर्युक्त घटना का अध्ययन सबसे पहिले माइकेल फैराडे (Michel Faraday) ने किया था। **फैराडे ने घटना का अध्ययन करके इसके सम्बन्ध में दो नियम बनाये।**

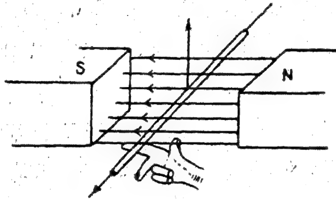
1. जब कभी भी किसी ऐसे परिचालक, जिसके सिरे जुड़े हुए हों, के पास चुम्बकीय शक्ति में परिवर्तन होता है तो उस परिचालक में होकर विद्युतधारा बहती है ।

2. इस प्रकार उपपादित (induced) वोल्टेज चुम्बकीय क्षेत्र की शक्ति के परिवर्तन की गति के अनुपात में होती है ।

फैराडे के पहिले नियम में उपपादन द्वारा विद्युत का पैदा होना बताया गया है । दूसरे नियम में उत्पन्न वि. वा. ब. और चुम्बकीय क्षेत्र में परिवर्तन का पारस्परिक सम्बन्ध दिखाया गया है । दूसरे नियम से किसी कॉइल में उत्पन्न वि. वा. ब. ज्ञात किया जा सकता है ।

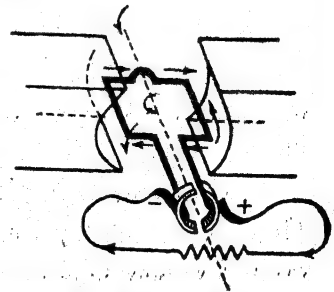
फैराडे के इन नियमों से कॉइल में उत्पन्न हुई विद्युतधारा की दिशा का पता नहीं लगता । विद्युतधारा की दिशा का पता फ्लेमिंग के सीधे हाथ के नियम (Fleming's right hand rule) द्वारा लगाया जा सकता है ।

फ्लेमिंग का सीधे हाथ का नियम—'यदि हम अपने सीधे हाथ के अँगूठा, तर्जनी और मध्यम अँगुली को एक दूसरे से 90° का कोण (समकोण) बनाते हुए रखें तथा यदि तर्जनी अँगुली चुम्बकीय रेखाओं की दिशा बताती है और परिचालक अँगूठे की दिशा में चलता है तो उस परिचालक में विद्युतधारा मध्यम अँगुली की दिशा में बहेगी ।'



चित्र 47. फ्लेमिंग का सीधे हाथ का नियम.

डायनमों का सिद्धान्त—जब किसी चुम्बकीय क्षेत्र में कोई कॉइल घूमता है तो उसमें विद्युतधारा उत्पन्न होती है । यही सिद्धान्त डायनमों बनाने के लिए प्रयोग किया जाता है । डायनमों में एक शक्तिशाली चुम्बकीय क्षेत्र, जो कि विद्युत चुम्बक द्वारा उत्पन्न किया जाता है, में आर्मेचर घुमाया जाता है । आर्मेचर लोहे के पत्रों के बने आधार (core) पर तार के बहुत से लपेट देकर बनाया जाता है । चित्र 48 में डायनमो का सिद्धान्त दिखाया गया है । इसमें एक तार एक चुम्बक के सिरों के बीच में होकर घूमता है । फ्लेमिंग के सीधे हाथ के नियम द्वारा इस तार में उत्पन्न हुई धारा की दिशा का पता लगाया जा सकता है ।



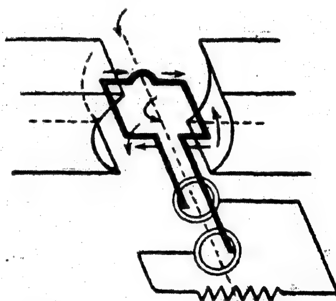
चित्र 48. डायनमो का सिद्धान्त.

यह सिद्ध किया जा सकता है कि तार के दोनों भागों में विद्युतधारा एक ही दिशा में बहती है । धारा के बहाव की दिशा कॉइल के आधा चक्कर लगा लेने के बाद बदल जाती है । तार के सिरों पर लगाये गये छल्लों के कारण जैसे ही कॉइल में धारा की दिशा बदलती है वैसे ही छल्ले भी बदल जाते हैं और बाहर के तार में धारा की दिशा वही बनी रहती है ।

ए० सी०—अब तक दो प्रकार के विद्युत-स्रोतों का अध्ययन किया गया है—सैल और डायनमो । सैलों में वि० वा० ब० (e. m. f.) रसायनिक क्रिया के कारण उत्पन्न होता है और धारा हमेशा धन विद्युत-छोर से ऋण विद्युत-छोर की ओर बहती है । डायनमो में वि० वा० ब० चुम्बकीय शक्ति में परिवर्तन होने के कारण उत्पन्न होता है । इसमें भी धन और ऋण विद्युत-छोर निश्चित रहते हैं और धारा धन विद्युत-छोर से ऋण विद्युत-छोर की ओर बहती है ।

उपर्युक्त दोनों प्रकार के विद्युत-उत्पादकों में धारा सदैव एक ही दिशा में बहती है । इस प्रकार की धारा, जो एक ही दिशा में बहती है, डाइरेक्ट करेंट अथवा डी० सी० (D. C.) कहलाती है । यदि विद्युतधारा की दिशा बार-बार बदले तो यह धारा पहली प्रकार की धारा से भिन्न होगी । जिस धारा की दिशा बार-बार बदलती है वह आल्टरनेटिंग धारा अथवा ए० सी० (A. C.) कहलाती है ।

चित्र 49 में एक ए० सी० विद्युत-उत्पादक का सिद्धान्त दिखाया गया है । इसमें तार सदैव उसी छल्ले से जुड़े रहते हैं इसलिए हर आधे चक्कर के बाद धन छोर ऋण और ऋण छोर धन हो जायगा । अतः हर आधे चक्कर के बाद बाहर के तार में धारा की दिशा बदल जायगी । इस प्रकार के यन्त्र द्वारा जिस प्रकार की धारा उत्पन्न होती है वह चित्र 50 में दिखाई गई है ।

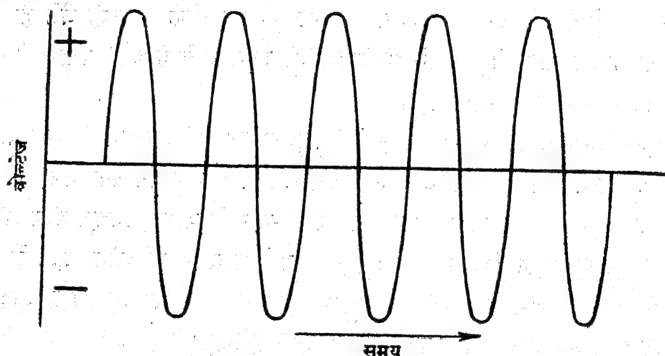


चित्र 49. ए० सी० उत्पादक का सिद्धान्त.

जब कॉइल एक चक्कर लगा लेता है तो जिस अवस्था में विद्युत वोल्टेज पहिले थी उसी अवस्था में आ जाती है । यह एक चक्कर (साइकिल) कहलाता है ।

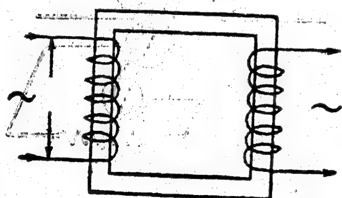
कंपनांक (फ्रीक्वेंसी)—एक सैकिण्ड में कॉइल जितने पूरे चक्कर लगाता है उतने ही चक्कर (साइकिल) उस काल में होते हैं । जितने चक्कर एक सैकिण्ड में पूरे होते हैं वह संख्या ए० सी० (A. C.) का कंपनांक (फ्रीक्वेंसी) कहलाता है ।

उदाहरण के लिए घरों पर दी जाने वाली ए० सी० का कंपनांक 50 चक्कर प्रति सैकिण्ड है।



चित्र 50. ए० सी० धारा.

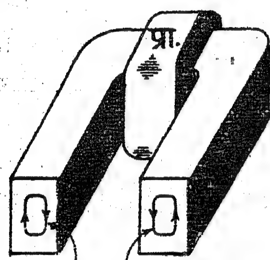
ट्रान्सफॉर्मर—इस प्रकरण के प्रारम्भ में बताया जा चुका है कि यदि दो पास-पास रखे हुए कॉइलों में से एक में होकर विद्युतधारा प्रारम्भ की जाय तो कुछ देर के लिए दूसरे कॉइल में भी विद्युत उत्पन्न होगी। अब यदि पहले कॉइल की धारा बन्द की जाय तो दूसरे कॉइल में फिर कुछ देर के लिए विद्युत उत्पन्न होगी। इस प्रकार यदि पहले कॉइल में धारा बार-बार बन्द तथा प्रारम्भ की जावे तो दूसरे कॉइल में लगातार विद्युत उत्पन्न होती रहेगी। बार-बार प्रारम्भ करने तथा बन्द करने के स्थान पर यदि पहिले कॉइल में धारा की दिशा बार-बार बदली जावे तो भी दूसरे कॉइल में लगातार विद्युत उत्पन्न होती रहेगी। यदि पहले कॉइल में ए० सी० दी जाय तो (ए०सी० में धारा की दिशा लगातार बदलते रहने के कारण) दूसरे कॉइल में विद्युत उत्पन्न होती रहेगी। ट्रान्सफॉर्मर इसी सिद्धान्त पर बनाये जाते हैं। ट्रान्सफॉर्मर में चुम्बकीय शक्ति बढ़ाने के लिए कॉइल लोहे के आधार पर लपेटे जाते हैं। चित्र 51 में ट्रान्सफॉर्मर का सिद्धान्त दिखाया गया है।



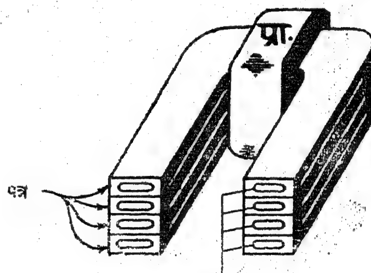
चित्र 51. ट्रान्सफॉर्मर का सिद्धान्त.

अतिरिक्त धारा तथा पत्तरों का प्रयोग—व्यवहारिक ट्रान्सफॉर्मरों में ठोस लोहे के स्थान पर लोहे के पत्र काम में लाये जाते हैं। इन पत्रों के बीच में अपरिचालक की तह लगा दी जाती है। यदि पत्रों के स्थान पर ठोस लोहे का प्रयोग किया जाय तो एक कठिनाई रहती है। लोहा परिचालक है और विद्युतधारा में परिवर्तन होने के

कारण इसमें भी विद्युतधारा उत्पन्न होगी (चित्र 52)। इस प्रकार उत्पन्न विद्युतधारा अतिरिक्त धारा (eddy current) कहलाती है। यह धारा किसी भी उपयोग में नहीं लाई जा सकती है और साथ ही इसके कारण बहुत सी विद्युतनष्ट हो जाती है। फलस्वरूप ट्रान्सफॉर्मर की कार्यक्षमता (efficiency) कम हो जाती है। इसके अतिरिक्त यह धारा ट्रान्सफार्मर को गरम भी कर देती है जिसके कारण ट्रान्सफॉर्मर की उपयोगिता में भी कमी आ जाती है। इन कारणों से अच्छे ट्रान्सफॉर्मरों



(i)



(ii)

चित्र 52.

में अतिरिक्ति विद्युतधारा का न होना अथवा बहुत कम मात्रा में होना आवश्यक है।

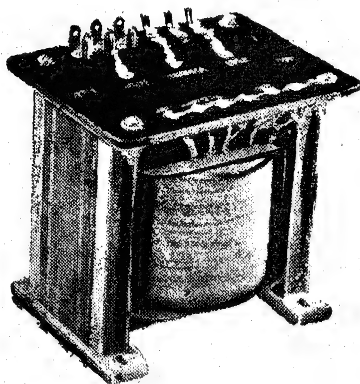
लोहे के पत्र कार्य में लाने से अतिरिक्त धारा केवल एक पत्र में ही सीमित रह जाती है और इसलिए बहुत कम शक्ति नष्ट होती है। उदाहरण के लिए यदि ठोस लोहे में 100 वाट शक्ति नष्ट होती है तो उसके बीस पत्र करने के बाद केवल 5 वाट ($\frac{१००}{२०}$) शक्ति ही नष्ट होगी। इस उदाहरण से लोहे के पत्रों की उपयोगिता स्पष्ट हो जायगी।

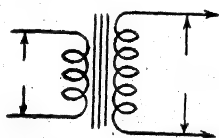
ट्रान्सफॉर्मरों का प्रयोग वोल्टेज कम करने अथवा बढ़ाने के लिए किया जाता है। वोल्टेज का कम होना अथवा बढ़ना प्राथमिक (primary) तथा द्वितीय (secondry) कॉइलों के लपेटों के अनुपात पर निर्भर रहता है। यदि ट्रान्सफॉर्मर के द्वितीय कॉइल में प्राथमिक की अपेक्षा अधिक लपेट होते हैं तो वोल्टेज बढ़ जाती है। यदि द्वितीय में प्राथमिक की अपेक्षा कम लपेट होते हैं तो वोल्टेज कम हो जाती है।

किसी ट्रान्सफॉर्मर के द्वितीय (secondry) पर प्राप्त वोल्टेज निम्न गुर द्वारा निकाली जा सकती है—

$$\text{द्वितीय पर प्राप्त वोल्टेज} = \text{प्राथमिक पर दी गई वोल्टेज} \times \frac{\text{द्वितीय की लपेट}}{\text{प्राथमिक की लपेट}}$$

उदाहरण के लिए किसी ट्रान्सफॉर्मर की प्राथमिक में 2200 लपेट हैं और द्वितीय में 4400 लपेट हैं तो द्वितीय पर प्राप्त वोल्टेज प्राथमिक से दुगुनी होगी। यदि प्राथमिक पर 220 वोल्ट दिये जायँ तो द्वितीय पर प्राप्त वोल्टेज निम्नांकित पद्धति से निकाली जा सकती है—





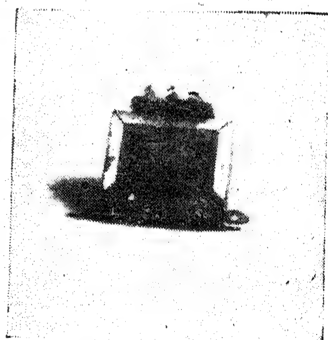
चित्र 53. मेन्स ट्रान्सफॉर्मर और उसके लिए प्रयुक्त चिन्ह.

द्वितीय पर प्राप्त वोल्टेज $= 220 \times \frac{४४००}{२२००} = 440$ वोल्ट यदि द्वितीय में एक से अधिक कॉइल हों तो उन सबकी वोल्टेज भी उपर्युक्त पद्धति से निकाली जा सकती हैं। उदाहरण के लिए ऊपर वर्णित ट्रान्सफॉर्मर में एक और द्वितीय कॉइल 60 लपेट का हो तो उस पर प्राप्त वोल्टेज भी उसी प्रकार निकाली जा सकती है।

द्वितीय पर प्राप्त वोल्टेज $= 220 \times \frac{६०}{२२००} = 6$ वोल्ट

ट्रान्सफॉर्मरों के उपयोग—रेडियो में ट्रान्सफॉर्मर मुख्यतया दो कार्यों में प्रयुक्त होते हैं। प्रथम ेन्स से विद्युत प्राप्त करने के लिए। दूसरे लाउडस्पीकर को ध्वनि देने के लिए। मेन्स पर प्रयुक्त ट्रान्स-फॉर्मर में दो या तीन अलग कॉइल होते है। चित्र 53 में इस प्रकार का एक ट्रॉन्सफार्मर और उसका चिन्ह दिखाया गया है। प्रकरण सत्रह में इसका विस्तृत वर्णन है।

लाउड स्पीकर को ध्वनि देने के लिए प्रयुक्त ट्रान्सफॉर्मर की द्वितीय कॉइल में प्राथमिक से कम लपेट होती है और इस प्रकार यह, वोल्टेज कम करके लाउड स्पीकर को दे देता है इस प्रकार का ट्रान्सफॉर्मर, मैचिंग[१] (matching) ट्रान्सफॉर्मर कहलाता है।



चित्र 54.

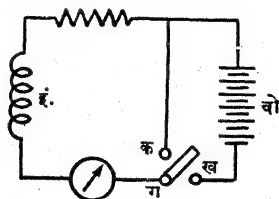
१. मैचिंग का प्रथम परिशिष्ट में विस्तृत वर्णन किया गया है।

सातवाँ प्रकरण

इंडक्टेंस तथा कन्डेन्सर

उपपादक (इंडक्टेंस)—प्रकरण छः में दो कॉइलों के पारस्परिक उपपादन का वर्णन किया जा चुका है। उपपादन के लिए दो अलग-अलग कॉइल होना आवश्यक नहीं है। एक ही कॉइल की लपेटों में भी आपस में उपपादन होता है। जब एक कॉइल के लपेटों में आपस में ही उपपादन होता है तो यह स्वयं उपपादन (self induction) कहलाता है। एक कॉइल जिसमें स्वयं उपपादन होता है उपपादक (इंडक्टेंस) कहलाता है। नीचे उपपादक का विस्तृत वर्णन किया गया है।

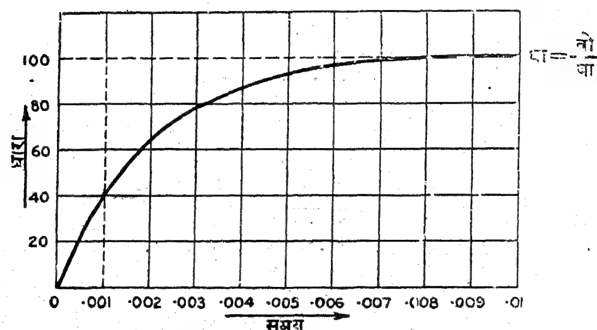
उपपादक का अध्ययन करने के लिए चित्र 55 का सरकिट काम में लाया जा सकता है। इस सरकिट में एक बाधक, एक उपपादक (इंडक्टेंस) और एक मीटर श्रेणीबद्ध लगाये गये हैं। स्विच को नीचे करने पर एक बैटरी सरकिट में आ जाती है और ऊपर कर देने पर बैटरी सरकिट में नहीं रहती है। यदि बाधक की बाधा बा० ओह्म हो तथा बैटरी की वोल्टेज वो० वोल्ट हो तो स्विच नीचा करने पर ओह्म के नियमानुसार $\frac{\text{वो०}}{\text{बा०}}$ एम्पीयर धारा बहनी चाहिए परन्तु स्विच नीचा करने पर एकदम उतनी धारा बहना प्रारम्भ नहीं होती। वरन् यह धीरे-धीरे बढ़ती है। कुछ समय बाद पूरी धारा बहने लगती है। धारा किस प्रकार बढ़ती है यह चित्र 56 में दिखाया गया है।



चित्र 55. उपपादक के अध्ययन के लिए प्रयुक्त सरकिट.

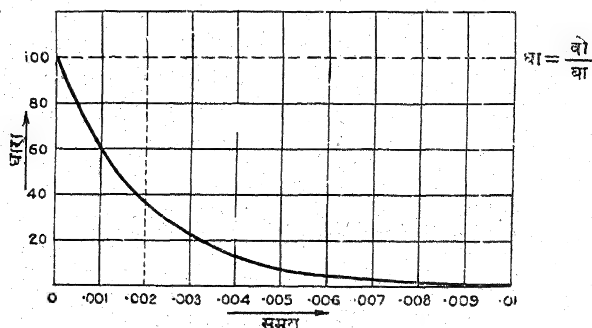
ऊपर के प्रयोग में धारा के धीरे-धीरे बढ़ने का कारण यह है कि जैसे ही कॉइल में धारा बहना प्रारम्भ करती है वैसे ही उस कॉइल में विद्युतधारा के कारण चुम्बकीय क्षेत्र पैदा होता है। इस चुम्बकीय क्षेत्र (जो कि एकदम पैदा होता है और इस कारण चुम्बकीय क्षेत्र में परिवर्तन करता है) के कारण उस कॉइल में एक वि० वा० ब० (e. m. f.) पैदा होता है। यह वि० वा० ब० कॉइल के सिरों पर दिये गये वि० वा० ब० की विपरीत दिशा में होता है। विपरीत दिशा में उत्पन्न वि० वा० ब० के कारण उस

कॉइल में धारा धीरे-धीरे बढ़ती है । कुछ समय बाद पूर्ण विद्युतधारा बहने लगती है । अब यदि स्विच ऊपर कर दिया जाये तो भी धारा एकदम बन्द नहीं होती वरन्



चित्र 56. उपपादक में धारा का बढ़ना.

विपरीत दिशा में उत्पन्न वि० वा० ब० के कारण धारा कुछ समय बाद तक बहती है । चित्र 57 में यह धारा किस प्रकार कम होती है, यह दिखाया गया है ।

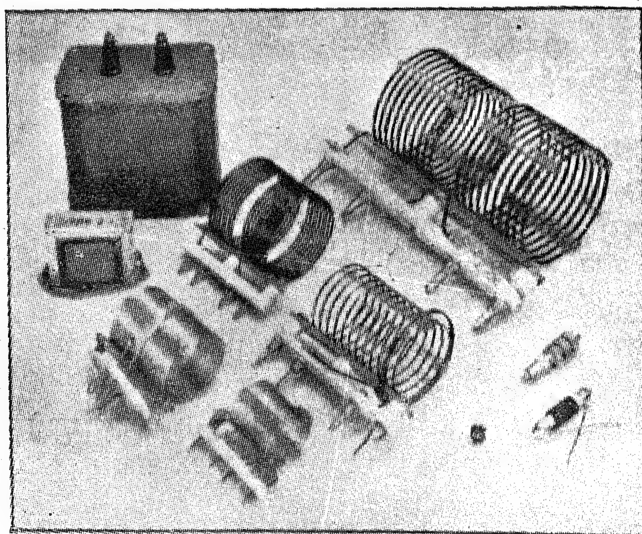


चित्र 57. उपपादक में धारा का घटना.

ऊपर के वर्णन में विरोध करने वाला वि० वा० ब० कॉइलों की लपेटों में आपस में उपपादन होने के कारण उत्पन्न होता है । इस प्रकार के कॉइल इंडक्टेंस कहलाते हैं ।

इंडक्टेंस की इकाई हेनरी है परन्तु यह इकाई बहुत बड़ी होने के कारण इसका $\frac{१}{१०००}$ भाग तथा $\frac{१}{१०००,०००}$वें भाग प्रयोग किये जाते है । $\frac{१}{१०००}$वाँ भाग मिली हेनरी और $\frac{१}{१०००,०००}$वाँ भाग माइक्रो हेनरी (micro henry μ. h.) कहलाता है ।

उपपादक पर ए०सी०—जब एक उपपादक (इंडक्टेंस)(inductance) के सिरों पर डी० सी० (D. C.) देते हैं तो कुछ समय बाद पूर्ण विद्युतधारा जो कि वोल्टेज में बाधा का भाग देने पर आती है $\left(1=\frac{V}{R}\right)$ बहने लगती है। परन्तु यदि इसके सिरों पर ए० सी० (A. C.) दी जाय तो ऐसा नहीं होगा। पिछले प्रकरण में यह बताया जा चुका है कि ए० सी० (A. C.) विद्युत में धारा का प्रवाह निरन्तर बदलता रहता है और इस निरन्तर बदलते रहने के कारण कॉइल में होकर गुजरने वाली धारा का विरोध करने वाला वि० वा० ब० भी (back. e. m. f.) सदैव बना रहता है। इस कारण एक इंडक्टेंस में होकर डी० सी० की अपेक्षा ए० सी० कम गुजरती है। वास्तव में ए० सी० के लिए इंडक्टेंस भी एक प्रकार की रुकावट का कार्य करती है। परन्तु यह रुकावट, बाधा (resistance) से भिन्न होती है। यह रुकावट (reactance) ए० सी० की फ्रीक्वेंसी (कंपनांक) के साथ-साथ बदलती है। यदि किसी कॉइल की इंडक्टेंस L हेनरी हो तो दी हुई विद्युतधारा की फ्रीक्वेंसी पर उस कॉइल की रुकावट $2\pi FL$ के बराबर होगी ($\pi=3\cdot14$.)।



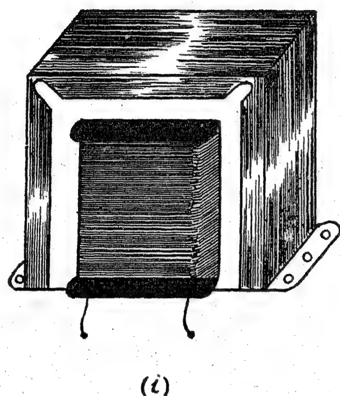
चित्र 58. विभिन्न प्रकार के उपपादक (इंडक्टेंस).

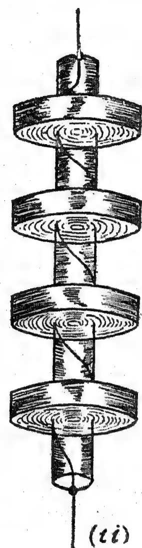
व्यवहार में इंडक्टेंस विभिन्न प्रकार के कॉइलों के रूप में होती है। चित्र 58 में विभिन्न प्रकार की इंडक्टेंस दिखाई गई हैं।

चोक (choke)—एक अधिक इंडक्टेंस वाले कॉइल को चोक कहते हैं।

इंडक्टेंस बढ़ाने के लिए प्रायः लोहे की पत्तियों के ऊपर कॉइल बाँधा जाता है। चित्र 59 (i) में एक चोक दिखाई गई है।

रेडियो फ्रीक्वेंसी चोक (radio frequency choke)—इस प्रकार की चोक एक कम इंडक्टेंस का कॉइल होता है। यह रैडियो लहरों को रोकने के काम आता है। चित्र 59 (ii) में एक रेडियो फ्रीक्वेंसी चोक दिखाई गई है।



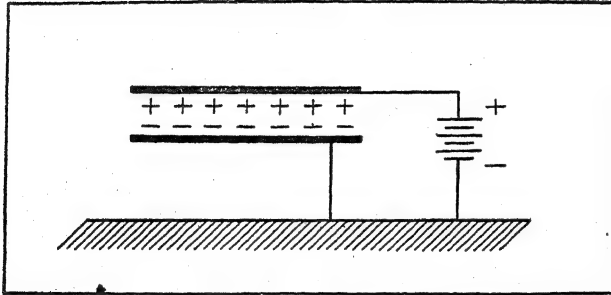


चित्र 59. (i) **चोक और** (ii) **रेडियो फ्रीक्वेंसी चोक.**

कन्डेन्सर (condenser)—किसी परिचालक को बिजली के स्रोत से जोड़ने पर उसमें थोड़ी देर धारा बहेगी। थोड़ी देर बाद वह परिचालक उस स्रोत (source) का पूरा वि० वा० ब० (e. m. f.) प्राप्त कर लेगा और फिर उसमें अधिक विद्युत नहीं जायगी। अब यदि इसके पास एक जमीन से जुड़ा हुआ (earthed) परिचालक (conductor) रख दें तो यह पहिला परिचालक और अधिक बिजली ले सकता है (चित्र 60)। जमीन से लगी हुई प्लेट के स्थान पर उसी स्रोत के दूसरे सिरे से लगी हुई प्लेट का भी यही प्रभाव होता है। कोई भी ऐसा प्रबन्ध जिसके द्वारा परिचालक की विद्युत लेने की शक्ति (capacity) बढ़ जाती है, कन्डेन्सर कहलाता है। जितनी बिजली का चार्ज[1] देने से इसकी वोल्टेज एक वोल्ट बढ़ जाती है वह उसकी

१. चार्ज की इकाई कूलम्ब (coulomb) है तथा एक कूलम्ब $6{\cdot}28 \times 10^{18}$ ऋण विद्युत कणों (electrons) के बराबर होता है।

कैपेसिटी (capacity) कहलाती है । कैपेसिटी की इकाई फैराड है परन्तु यह बहुत बड़ी होने के कारण इसका $\frac{1}{1,000,000}$ वाँ तथा $\frac{1}{1000,000,000,000}$ वां भाग प्रयोग किये जाते हैं और वे क्रमशः माइक्रो फैराड (Micro farad) (μ F) तथा पिक्रो फैराड (Picro farad or micro-micro farad PF) कहलाते हैं।



चित्र 60. कन्डेन्सर का सिद्धान्त.

इस प्रकार

1 फैराड = 1,000,000 माइक्रो फैराड (μF or MF) 1 माइक्रो फैराड = 1,000,000 माइक्रो माइक्रो फैराड (पिक्रो फैराड) (μμ F or PF) .

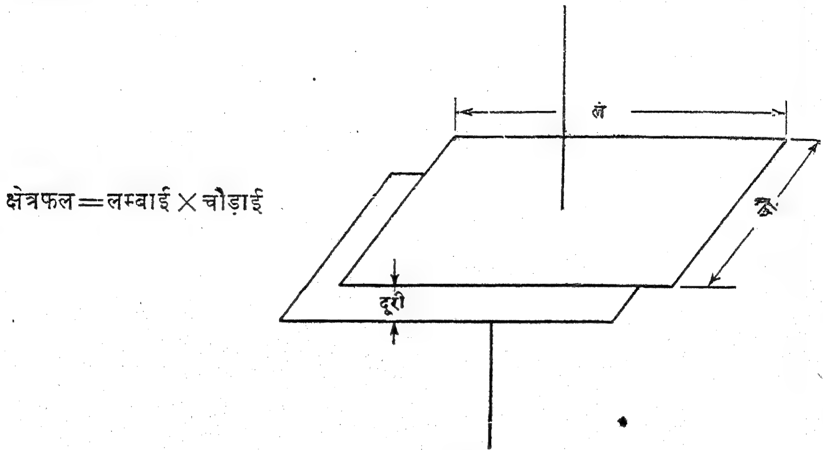
दो समानान्तर (parallel) पत्र (plates) पास-पास रख देने से एक कन्डेन्सर बन जाता है । इस अवस्था में इन प्लेटों के बीच के स्थान में वायु होती है । इन प्लेटों के बीच में वायु के स्थान पर अन्य अपरिचालकों का भी प्रयोग किया जा सकता है । इस प्रकार प्रयुक्त पदार्थ डाइ इलैक्ट्रिक कहलाते हैं । वायु के स्थान पर अन्य अपरिचालकों का प्रयोग करने से कैपेसिटी बढ़ जाती है । किसी डाइ-इलैक्ट्रिक के प्रयोग से वायु की अपेक्षा जितनी गुनी कैपेसिटी हो जाती है वह उस पदार्थ का डाइ-इलैक्ट्रिक कांसटेंट (dielectric constant) कहलाता है । उदाहरण के लिए एक समानान्तर पत्र कन्डेन्सर, जिसमें डाइ-इलैक्ट्रिक वायु है, की कैपेसिटी 1 माइक्रो फैराड है । अब यदि इसमें वायु के स्थान पर अभ्रक का प्रयोग करने से इसकी कैपेसिटी 6 माइक्रो फैराड हो जाती है तो अभ्रक का डाइ-इलैक्ट्रिक कान्सटेंट 6 होगा ।

समानान्तर पत्र कन्डेन्सर की कैपेसिटी निम्न गुर द्वारा निकाली जा सकती है–

$$\text{कैपेसिटी} = \frac{\text{प्लेटों का क्षेत्रफल} \times \text{डाइ-इलैक्ट्रिक कांस्टेंट}}{11 \cdot 3 \times \text{दूरी}} \times 10^{-12} \text{ फैराड.}$$

यहाँ क्षेत्रफल वर्ग सेन्टीमीटर में और लम्बाई सेन्टीमीटर में होनी चाहिये (चित्र 61)।

नीचे के चार्ट में कई सामान्य (common) पदार्थों के डाइ-इलैक्ट्रिक कांस्टेंट दिये गये हैं।



चित्र 61.

पदार्थ	डाइ-इलैक्ट्रिक कांस्टेंट
वायु (air)	1
अभ्रक (mica)	5—9
लकड़ी (wood)	3—5
चीनी (porcelain)	6
पोलीस्टीरीन (polysterene)	24—29
पानी (water)	80

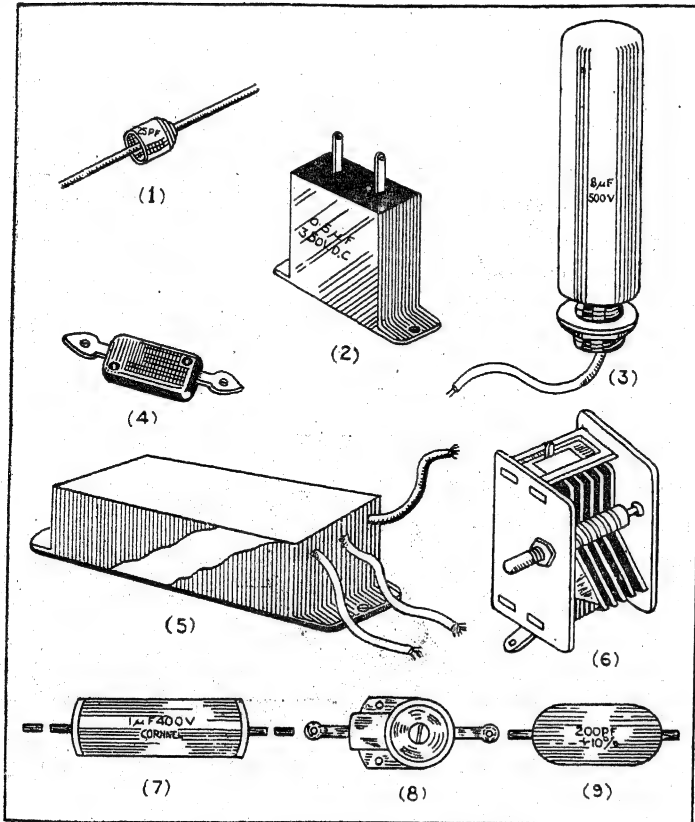
कन्डेन्सर में होकर ए. सी. का प्रवाह—यदि एक कन्डेन्सर के सिरों पर डी. सी. दें तो थोड़ी देर में कन्डेन्सर चार्ज हो जायेगा और उसमें होकर विद्युतधारा प्रवाहित नहीं होगी। परन्तु यदि कन्डेन्सर के सिरों पर ए. सी. दी जावे तो वह उसमें होकर बहेगी।

कन्डेन्सर में होकर ए. सी. किस प्रकार बहती है—ए. सी. में विद्युतधारा प्रवाह निरन्तर बदलता रहता है और इस कारण जब कोई कन्डेन्सर ए. सी. के सरकिट में लगा दिया जाता है तो वह बार-बार चार्ज लेता है और फिर चार्ज दे देता है। यह क्रिया लगातार चलती रहती है तो। इस सरकिट में यदि कोई बाधक डाल दिया जाय तो उसमें होकर बराबर धारा बहती रहेगी। इस प्रकार कन्डेन्सर के सिरों पर ए. सी. देने पर कन्डेन्सर में होकर विद्युत गुजर जाती है। एक कन्डेन्सर ए. सी. के

प्रवाह में जो रुकावट डालता है वह $\frac{1}{2\pi FC}$ के बराबर होती है । {$\pi=3{\cdot}14$

$F=$दी हुई फ्रीक्वेंसी ; $C=$कन्डेन्सर की कैपेसिटी फैराड में} ।

यहाँ पर एक बात का ध्यान रखना आवश्यक है कि कन्डेन्सर की रुकावट इंडक्टेंस की रुकावट और बाधा तीनों भिन्न प्रकार से कार्य करती हैं । वास्तव में इंडक्टेंस और कन्डेन्सर की रुकावट एक दूसरे से विपरीत दिशा में कार्य करती हैं ।



चित्र 62. विभिन्न प्रकार के कन्डेन्सर.

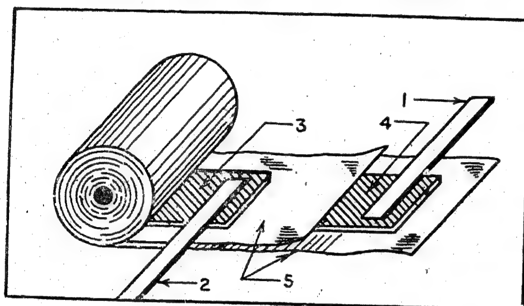
यदि एक कन्डेन्सर और इंडक्टेंस श्रेणीबद्ध (in series) लगा दें और उनकी रुकावट बराबर हों (उनके सिरों पर दी गई ए. सी. की फ्रीक्वेंसी पर) तो कन्डेन्सर और इंडक्टेंस की सम्मिलित रुकावट बिल्कुल नहीं रहेगी । इसका विस्तृत वर्णन आगे

रेजोनेंस के अन्तर्गत किया गया है।

व्यवहारिक कन्डेन्सर (practical condensers)—कन्डेन्सर कई प्रकार के होते हैं जिनमें से मुख्य **कागज** (paper), **माइका** (mica=अभ्रक), वायु (air) तथा इलैक्ट्रोलिटिक (electrolytic) प्रकार के हैं। कन्डेन्सरों के यह नाम उनके डाइ-इलैक्ट्रिक के कारण हैं।

चित्र 62 में विभिन्न प्रकार के कन्डेन्सर दिखाये गये हैं।

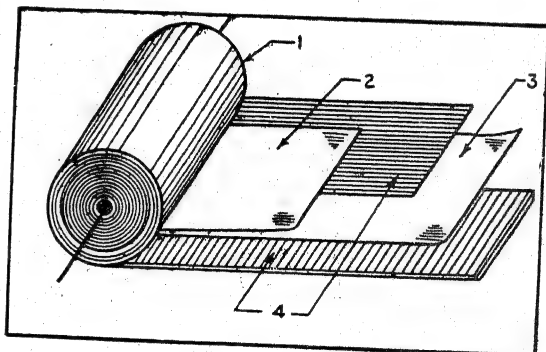
कागज के कन्डेन्सर (paper condenser)—चित्र 63 में पेपर[1] कन्डेन्सरों की रचना दिखाई गई है। इनमें अल्म्यूनियम के दो पत्र, जो कि एक विशेष प्रकार के कागज द्वारा एक दूसरे से अलग किये रहते हैं, लपेटे हुए होते हैं। प्रत्येक पत्र (foil) से एक तार का सिरा निकला रहता है।



चित्र 63.

इंडक्टिव कन्डेन्सर की रचना १. और २. सिरे, ३. और ४. धातु के पत्र, ५. कागज

कागज के यह कन्डेन्सर दो प्रकार के होते हैं। इंडक्टिव तथा नॉन-इंडक्टिव, जैसा कि नाम से ही विदित होता है पहले में उपपादन होता है दूसरे में नहीं होती। इनकी बनावट में अन्तर रहता है। यह अन्तर चित्र में दिखाया गया है।



चित्र 64.

नान इंडक्टिव कन्डेन्सर की रचना १. सिरा, २. और ३. कागज, ४. धातु के पत्र.

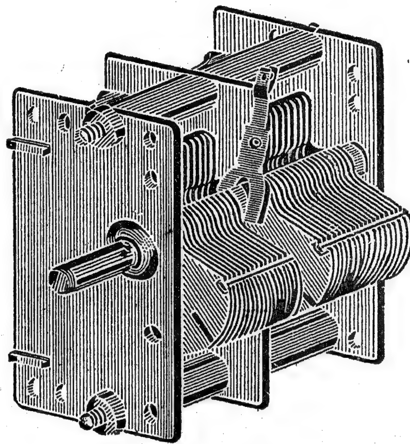
माइका कन्डेन्सर (mica condenser)—इस कन्डेन्सर में

1. paper=पेपर=**कागज**।

अभ्रक डाइ-इलेक्ट्रिक का प्रयोग होता है। अभ्रक अधिक वोल्टेज (voltage) सहन कर सकती है अतः इस प्रकार के कन्डेन्सर अधिक वोल्टेज सह सकते हैं और प्रायः कम केपेसिटी के बनाये जाते हैं।

वायु कन्डेन्सर (air condenser)—यह तीन प्रकार के होते हैं। प्रथम जिनकी कैपेसिटी बदली नहीं जा सकती (fixed), दूसरे जिनकी कैपेसिटी थोड़ी बदली जा सकती है (semi fixed) और तीसरे जिनकी कैपेसिटी काफी बदली जा सकती है (variable)।

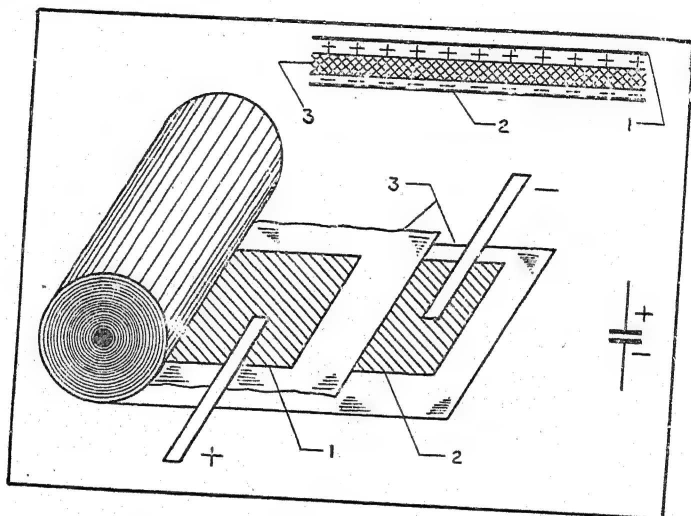
दूसरी प्रकार के कन्डेन्सर का प्रयोग उन स्थानों पर किया जाता है जहाँ पर कभी-कभी कैपेसिटी बदलनी पड़ती है। इस प्रकार के कन्डेन्सर अंग्रेजी में ट्रिमर कहलाते हैं। तीसरे प्रकार का कन्डेन्सर रेडियो में ट्यूनिंग के लिये प्रयोग किये जाते हैं। प्रत्येक रेडियो में इस प्रकार का एक कन्डेन्सर होता है। बहुधा इस कन्डेन्सर में एक से अधिक अलग कन्डेन्सर रहते हैं और इन सबकी कैपेसिटी एक ही घुंड़ी (knob) घुमाने से बदली जाती है। इस प्रकार के कन्डेन्सर गैंग (gang) कन्डेन्सर कहलाते हैं। चित्र 65 में एक गैंग कन्डेन्सर दिखाया गया है।



चित्र 65. गैंग कन्डेन्सर.

विद्युतीय कन्डेन्सर (electrolytic condenser)—इस प्रकार के कन्डेन्सर कागज के कन्डेन्सरों की अपेक्षा (उतनी ही कैपेसिटी के और उतनी ही वोल्टेज वहन करने योग्य) छोटे और सस्ते होते हैं। यह दो प्रकार के होते हैं—गीले (wet) और सूखे (dry)। इन दोनों प्रकारों में ठीक वही अन्तर है जो कि सामान्य सैलों और शुष्क सैलों में। व्यवहार में प्रायः शुष्क विद्युतीय कन्डेन्सरों का ही प्रयोग होता है अतः यहाँ पर उन्हीं का वर्णन किया गया है। इस प्रकार के कन्डेन्सरों में अल्म्यूनियम के पतले पत्रों के बीच में एक विशेष प्रकार की जाली होती है और यह सब एक विशेष रासायनिक घोल में भीगे हुए होते हैं। इस प्रकार के कन्डेन्सर बनाने के लिए इनमें होकर विद्युतधारा गुजारी जाती है। उस विद्युतधारा के कारण धन (+ive) छोर पर अल्म्यूनियम आक्साइड और आक्सीजन गैस

की तह जम जाती है। यह तह डाइ-इलैक्ट्रिक का काम देती है। अल्म्यूनियम के पत्र स्थान बचाने के लिए लपेट दिये जाते हैं। यह सब एक टीन अथवा अल्म्यूनियम के बर्तन में बन्द कर दिया जाता है। चित्र 66 में इस प्रकार के कन्डेन्सर का सिद्धान्त और उसकी रचना दिखाई गई है।



चित्र 66.

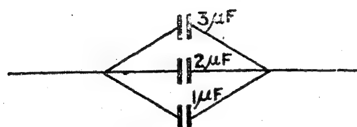
विद्युतीय कन्डेन्सर का सिद्धान्त, रचना और उसके लिए प्रयुक्त चिन्ह

1 व 2 पत्र; 3 जाली.

इस प्रकार के कन्डेन्सर में एक विशेषता यह होती है कि यदि वोल्टेज दी हुई वोल्टेज से कुछ समय के लिए अधिक भी हो जावे तो भी यह सदैव के लिए खराब नहीं होता। उस अधिक वोल्टेज को हटाने के कुछ समय बाद यह कन्डेन्सर स्वतः ही फिर ठीक हो जाता है। इसका यह गुण सैल्फ हीलिंग (self healing) कहलाता है। इस प्रकार का कन्डेन्सर ए. सी. के लिए उपयुक्त नहीं है। रिसीवर में इसका उपयोग मुख्यतः पावर सप्लाई के लिए होता है। इस प्रकार के कन्डेन्सर को लगाते समय यह ध्यान रखना आवश्यक है कि इसका धन सिरा धन (+ive) सिरे पर ही लगाया जावे अन्यथा यह खराब हो जावेगा।

कन्डेन्सरों का समानान्तर प्रयोग—यदि दो या दो से अधिक कन्डेन्सर समानान्तर लगा दिये जायें तो उनकी कैपेसिटी जुड़ जाती है। उदाहरण के लिए यदि चित्र 67 में क. (1) 3 माइक्रो फैराड का, क. (2) 2 माइक्रो फैराड का और क.

(3) 1 माइक्रो फैराड का हो तो कुल कैपेसिटी 3+2+1=6 माइक्रो फैराड होगी।

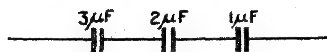


चित्र 67.

कन्डेन्सरों का समानान्तर संयोजन.

कन्डेन्सरों का श्रेणीबद्ध प्रयोग—यदि दो या दो से अधिक कन्डेन्सर श्रेणीबद्ध लगा दिये जायें तो उनकी कैपेसिटी निम्न गुरु से निकाली जा सकती है—

$$\frac{1}{\text{सम्मिलित कैपेसिटी}}=\frac{1}{\text{क } 1}+\frac{1}{\text{क } 2}+\frac{1}{\text{क } 3}\ .$$



चित्र 68.

कन्डेन्सरों का श्रेणीबद्ध संयोजन.

उदाहरण के लिए यदि ऊपर वर्णित कन्डेन्सर श्रेणीबद्ध लगा दिये जायें तो उनकी कैपेसिटी निम्नानुसार निकाली जा सकती है (चित्र 68)—

$$\frac{1}{\text{सम्मिलित कैपेसिटी}}=\frac{1}{1}+\frac{1}{2}+\frac{1}{3}=\frac{6+3+2}{6}=\frac{11}{6}.$$

अतः सम्मिलित कैपेसिटी $=\frac{6}{11}=\cdot545$ माइक्रो फैराड।

प्रकरण आठ

रेज़ोनेन्स और ट्यून्ड सरकिट

(Resonance and Tuned Circuit)

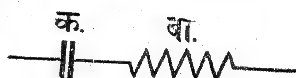
सम्मिलित बाधा (impedance)—पिछले प्रकरण में यह बतलाया जा चुका है कि एक कन्डेन्सर में होकर ए. सी. गुजर सकती है तथा ए. सी. के लिये उस कन्डेन्सर की रुकावट $\frac{1}{2\pi FC}$ होती है।

$\pi=3{\cdot}14$ F—कंपनांक (Frequency)

C कन्डेक्सर की कैपेसिटी फैराड में

इसी प्रकार एक इन्डक्टेंस की रुकावट $2\pi FL$ होती है। L=कॉइल की इन्डक्टेंस। यह भी बतलाया जा चुका है कि कन्डेन्सर की रुकावट और इंडक्टेंस की रुकावट एक दूसरे से भिन्न होती है और इनमें होकर धारा विपरीत दिशा में बहती है।

यदि एक बाधक (resistance) और कन्डेन्सर श्रेणीबद्ध लगा दिये जायें (चित्र 69) तो उनकी सम्मिलित बाधा निम्नांकित गुर द्वारा निकाली जा सकती है—



चित्र 69.

सम्मिलित बाधा$=\sqrt{R^2+\left(\frac{1}{2\pi fc}\right)^2}$ जबकि R=बाधा एवं शेष वर्णों का वही अर्थ है जो कि ऊपर बताया जा चुका है।

इसी प्रकार यदि एक इन्डक्टेंस और एक बाधक श्रेणीबद्ध लगा दिये जायें तो उनकी सम्मिलित बाधा निम्नलिखित गुर द्वारा निकाली जा सकती है—

बाधा$=\sqrt{R^2+(2\pi FL)^2}$ जबकि प्रत्येक वर्ण का वही अर्थ है जो इससे ऊपर बताया जा चुका है।

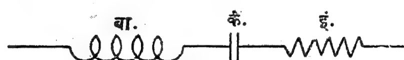
नीचे के चित्र में एक कन्डेन्सर और एक इन्डक्टेंस श्रेणीबद्ध जुड़े हुए दिखाये गये हैं। यदि कन्डेन्सर की रुकावट किसी निश्चित फ्रीक्वेंसी (जो कि इस सरकिट के सिरों पर दी गई है) पर X_C हो और उसी फ्रीक्वेंसी पर इन्डक्टेंस की रुकावट X_L

($X_C=\frac{1}{2\pi FC}$; $X_L=2\pi FL$) हो तो सरकिट की कुल रुकावट X_L-X_C



चित्र 70.

होगी[1] । यदि इसके साथ एक बाधा और जोड़ दी जाये तो कुल रुकावट (impedance) निम्न गुर से निकाली जा सकती है—



चित्र 71.

$$\text{रुकावट}=\sqrt{(X_L-X_C)^2+R^2}$$

जबकि R=बाधा (resistance)

श्रेणीबद्ध रेज़ोनेन्स (series resonance)–यदि चित्र 70 के सरकिट में सिरों पर दी हुई फ्रीक्वेंसी बदलते जायें तो एक ऐसी फ्रीक्वेंसी होगी जिस पर कि इन्डक्टेंस और कन्डेन्सर की रुकावट बराबर होंगी और उस फ्रीक्वेंसी पर इन्डक्टेंस और कन्डेन्सर इन दोनों की सम्मिलित बाधा शून्य हो जायेगी।

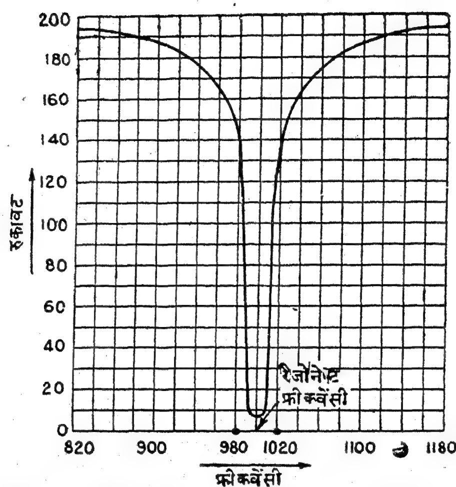
उस समय $X_C=X_L$ अर्थात् $2\pi FL=\frac{1}{2\pi FC}$; F वह फ्रीक्वेंसी जिस पर ऐसा होगा।

$$\text{अतः } F=\frac{1}{2\pi\sqrt{LC}}$$

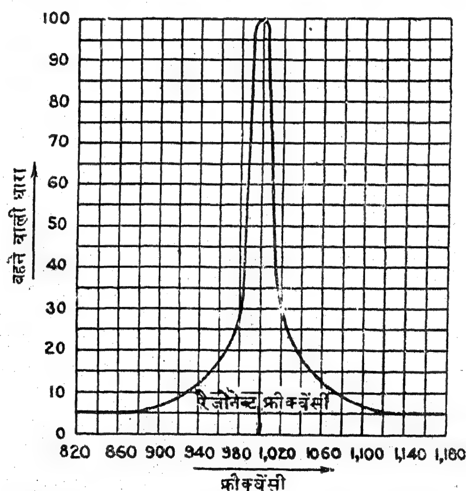
वह फ्रीक्वेंसी जिस पर कि यह होता है रेज़ोनेन्ट फ्रीक्वेंसी कहलाती है और वह सरकिट श्रेणीबद्ध (सीरीज) रेज़ोनेन्ट सरकिट कहलाता है। इस प्रकार का सरकिट रेज़ोनेन्ट फ्रीक्वेंसी पर बहुत कम रुकावट डालता है। यदि दी हुई फ्रीक्वेंसी रेज़ोनेन्ट फ्रीक्वेंसी से कम या ज्यादा हो तो रुकावट बढ़ती जाती है। चित्र (72) में फ्रीक्वेंसी के साथ रुकावट किस प्रकार बदलती है यह दिखाया गया है। चित्र (73) में फ्रीक्वेंसी के साथ एक निश्चित दी हुई वोल्टेज पर कॉइल में होकर जाने वाली धारा दिखाई गई है। यह धारा रेज़ोनेन्ट फ्रीक्वेंसी पर सबसे अधिक होती है और फ्रीक्वेंसी कम अथवा अधिक करने पर कम होती जाती है। रुकावट रेज़ोनेन्ट फ्रीक्वेंसी पर सबसे कम (minimum) होती है और फ्रीक्वेंसी कम अथवा अधिक करने पर बढ़ती है।

---

१. क्योंकि इन्डक्टेंस और कन्डेन्सर की बाधा एक दूसरे से विपरीत होती है।



चित्र 72. **श्रेणीबद्ध टयूण्ड सरकिट में फ्रीक्वेंसी और रुकावट का सम्बन्ध.**



चित्र 73 **श्रेणीबद्ध टयून्ड सरकिट में धारा और फ्रीक्वेंसी का सम्बन्ध.**

उदाहरण के लिये यदि चित्र 70 में इंडक्टेंस 200 मिली हेनरी है तथा कैपेसिटी 200 पिको फैराड है तो रेज़ोनेन्ट फ्रीक्वेंसी क्या होगी ?

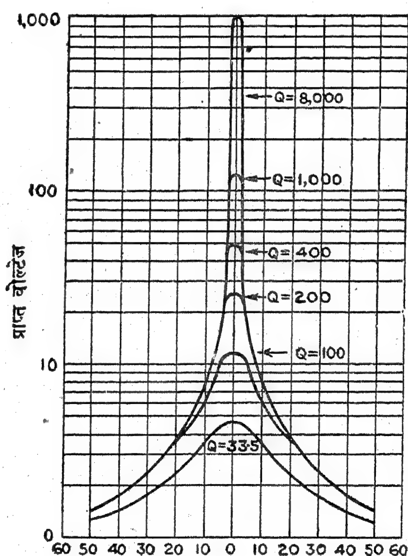
$$F=\frac{1}{2\pi\sqrt{LC}}=\frac{1}{2\times 3{\cdot}14\sqrt{\frac{200}{1000}\times\frac{200}{1{,}000{,}000{,}000{,}000}}}$$

$$= \frac{1}{6\cdot28\sqrt{\frac{4}{10^{11}}}} = \frac{10^6}{6\cdot28\sqrt{40}} = 25\cdot7 \text{ स.सा/से. (Kc/S/}$$

कॉइल की बाधा तथा Q—व्यवहार में आने वाले कॉइल बाधारहित नहीं होते अतः रेज़ोनेन्ट फ्रीक्वेंसी पर बाधा शून्य नहीं होती और इसीलिए ऊपर के सरकिटों में रेज़ोनेंस पर धारा सीमित रहती है। यदि एक कॉइल की इन्डक्टेंस उतनी ही रहने दी जाये तथा उसकी बाधा कम करते जायें तो रेज़ोनेन्ट फ्रीक्वेंसी पर रुकावट कम होती जायेगी और धारा बढ़ती जायेगी। वस्तुतः रेज़ोनेन्ट फ्रीक्वेंसी पर कॉइल की धारा बाधा पर ही निर्भर रहती है इसलिए वह बहुत महत्वपूर्ण होती है। प्रायः बाधा और रुकावट का अनुपात प्रयोग में आता है। किसी कॉइल की रुकावट और बाधा के अनुपात को इस कॉइल का क्यू (Q) कहते हैं।

$$\text{अतः } Q \text{ (क्यू)} = \frac{\text{रुकावट}}{\text{बाधा}} = \frac{\text{Impedance}}{\text{Resistance}} = \frac{\omega L}{R} = \frac{2\pi FL}{R}$$

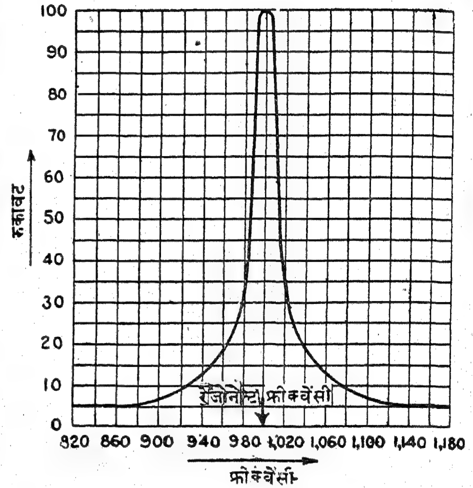
चित्र (74) में एक कॉइल का Q बदलने पर श्रेणीबद्ध सरकिट की धारा पर पड़ने वाला प्रभाव दिखलाया गया है। जैसे-जैसे Q बढ़ता जाता है वैसे-वैसे रेज़ोनेन्ट फ्रीक्वेंसी पर धारा बढ़ती जाती है और इसलिए प्राप्त वोल्टेज भी।



चित्र 74.
Q का रेज़ोनेन्ट फ्रीक्वेंसी पर प्राप्त वोल्टेज पर प्रभाव.

समानान्तर रेज़ोनेन्स (parallel resonance)—यदि एक कन्डेन्सर और इन्डक्टेंस समानान्तर लगा दिये जायें तब वह सरकिट समानान्तर ट्यून्ड सरक़िट (parallel tuned circuit) कहलाता है। यदि इस सरकिट पर दी हुई फ्रीक्वेंसी इतनी हो कि कन्डेन्सर और इन्डक्टेंस की रुकावट (reactance) बराबर हों तो उस फ्रीक्वेंसी पर समानान्तर रेज़ोनेन्स होती है और वह सरकिट समानान्तर रेज़ोनेन्ट सरकिट (parallel resonent circuit) कहलाता है। समानान्तर रेज़ोनेन्टसरकिट रेज़ोनेन्ट

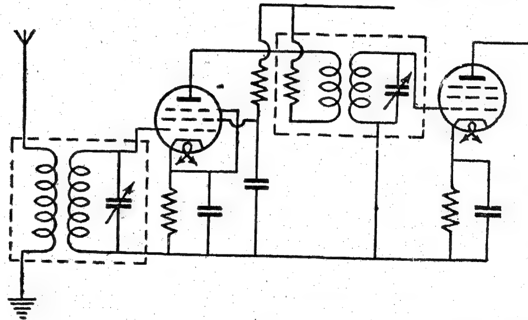
फ्रीक्वेंसी पर सबसे अधिक रुकावट (impedance) देता है । इसका कारण यह है कि कन्डेन्सर में होकर गुजरने वाली धारा और इन्डक्टेंस में होकर गुजरने वाली धारा एक दूसरे के विपरीत दिशा में बहती है । रेज़ोनेन्स पर यह दोनों धारायें बराबर हो जाती हैं और इस प्रकार सरकिट में होकर धारा नहीं बहती । चित्र 75 समानान्तर ट्यूण्ड सरकिट की रुकावट फ्रीक्वेंसी के साथ किस प्रकार बदलती है यह दिखाया गया है । यह रुकावट रेज़ोनेन्ट फ्रीक्वेंसी पर बहुत अधिक होती है और अन्य फ्रीक्वेंसी पर, कम ।



चित्र 75.

समानान्तर ट्यूण्ड सरकिट में रुकावट और फ्रीक्वेंसी का सम्बन्ध.

रेजोनेंट सरकिट के प्रयोग—श्रेणीबद्ध और समानान्तर दोनों ही प्रकार के सरकिट रेडियो रिसीवर (receiver) एवं ट्रांसमिटर (transmitter) में अनेकों स्थान पर प्रयोग किये जाते हैं । इन सरकिटों की रुकावट फ्रीक्वेंसी के साथ बदलती है । अतः इनका उपयोग फ्रीक्वेंसी अलग करने (selecting) में किया जाता है । रिसीवर में वांछित स्टेशन छाँटने का गुण (selectivity) इन्हीं सरकिटों के प्रयोग से प्राप्त किया जाता है । प्रायः एक



चित्र 76. **सामान्य रिसीवर का फ्रीक्वेंसी छाँटने वाला भाग.**

सरकिट द्वारा प्राप्त छाँटने का गुण (selectivity) कम होता है इसलिये रिसीवर में वांछित स्टेशन को अवांछित स्टेशनों से अलग करने के लिये कई ट्यून्ड सरकिटों का प्रयोग किया जाता है। चित्र 76 में रिसीवर का फ्रीक्वेंसी छाँटने वाला भाग दिखाया गया है।

इसमें ट्यूण्ड सरकिट वांछित स्टेशन की फ्रीक्वेंसी ले लेते हैं और वाल्वों द्वारा वर्धन प्राप्त किया जाता है। वाल्वों से वर्धन किस प्रकार प्राप्त किया जाता है तथा वाल्वों के अन्य विभिन्न उपयोगों का वर्णन आगे के प्रकरणों में किया गया है।

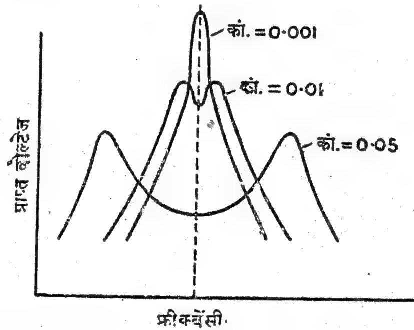
श्रेणीबद्ध सरकिट रेज़ोनेंट फ्रीक्वेंसी पर धारा बहने देते हैं अतः एक्सेप्टर सरकिट (acceptor circuit) कहलाते हैं। इसके विपरीत समानान्तर (parallel) सरकिट रेज़ोनेन्ट फ्रीक्वेंसी पर धारा नहीं बहने देते अतः रिजेक्टर सरकिट (Rejector circuit) कहलाते हैं।

कपलिंग कान्सटेन्ट—ऊपर रेजोनेन्ट सरकिट का वर्णन किया गया है और उसके उपयोग बताये गये हैं। रेडियो में बहुत से कार्यों के लिये दो रेज़ोनेन्ट सरकिटों जिनमें पारस्परिक उपपादन (म्यूचुअल इंडक्शन) होता है, का प्रयोग किया जाता है। इस प्रकार प्रयुक्त सरकिट अधिकतर पैरेलल रेज़ोनेन्ट सरकिट होते हैं। इस, प्रकार के सरकिटों में कॉइल के सिरों पर प्राप्त वोल्टेज तथा दी हुई फ्रीक्वेंसी का सम्बन्ध (response curve) उन दोनों कॉइलों के Q और उन कॉइलों के पारस्परिक उपपादन (mutual inductance) पर निर्भर करता है। कॉइलों का पारस्परिक उपपादन कपलिंग कान्सटेंट द्वारा प्रदर्शित किया जाता है। यदि दो कॉइलों की इण्डक्टेंस L_1 तथा L_2 हेनरी हो तो उन दोनों कॉइलों में अधिक-से-अधिक पारस्परिक उपपादन $L_1 x L_2$ हैनरी हो सकता है। व्यवहार में पारस्परिक उपपादन इससे कम होता है। यदि दो कॉइलों में पारस्परिक उपपादन M है तो कपलिंग कान्सटेन्ट $K=\frac{M}{L_1 x L_2}$ होगा। M अधिक-से-अधिक होने पर $L_1 x L_2$ के बराबर हो सकता है अतः कपलिंग कान्सटेन्ट 1 से अधिक नहीं हो सकता।

क्रिटिकल कपलिंग—ऊपर बताया जा चुका है कि दो समानान्तर ट्यूण्ड सरकिट जिनमें पारस्परिक उपपादन हो उनमें दूसरे कॉइल के सिरों पर प्राप्त वोल्टेज तथा फ्रीक्वेंसी का सम्बन्ध (response curve) उन दोनों सरकिटों के Q एवं पारस्परिक उपपादन पर निर्भर रहता है। यदि कॉइलों का Q न बदला जाये और दोनों सरकिट एक ही फ्रीक्वेंसी पर ट्यूण्ड हों तो विभिन्न कपलिंग कान्स-

* accept=स्वीकार करना।

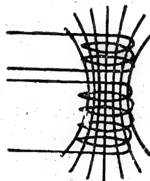
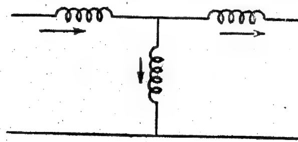
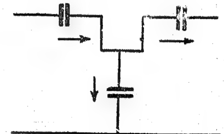
टेन्ट (जो कि पारस्परिक उपपादन ही प्रदर्शित करता है) पर प्राप्त वोल्टेज और फ्रीक्वेंसी का सम्बन्ध चित्र (77) द्वारा प्रदर्शित किया जा सकता है । इस चित्र को देखने पर ज्ञात होगा कि जैसे-जैसे कॉइलों के बीच कपलिंग बढ़ाया जाता है वैसे-वैसे ऊपर का भाग चौड़ा होने लगता है । यदि कपलिंग एक सीमा से अधिक बढ़ाया जाये तो उसमें दो अलग-अलग फ्रीक्वेंसियों पर वोल्टेज अधिक हो जाती हैं । ट्यूण्ड सरकिटों का वह अधिक-से-अधिक कपलिंग जिस पर एक ही फ्रीक्वेंसी पर वोल्टेज अधिक रहती है क्रिटिकल कपलिंग कहलाता है ।



चित्र 77.

पकलिंग का रेज़ोनेन्ट फ्रीक्वेंसी पर प्राप्त वोल्टेज पर प्रभाव.

कपलिंग के विभिन्न प्रकार—चित्र (77) में दिखाये गये सरकिट पारस्परिक उपपादन द्वारा जोड़े गये (कपिल्ड) हैं । दो सरकिट पारस्परिक उपपादन के अतिरिक्त भी अन्य कई प्रकार जोड़े जा सकते हैं । उस अवस्था में भी ऊपर का सारा वर्णन ठीक रहता है । चित्र (78) में जोड़ने (कपलिंग) के विभिन्न प्रकार दिखाये गये हैं ।

(i) *(ii)* *(iii)*

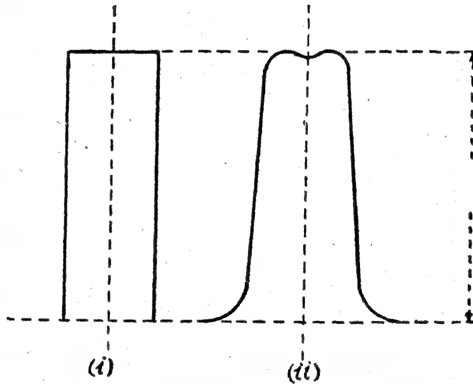
चित्र 78. विभिन्न प्रकार के जोड़ने (कपलिंग) के उपाय.

(i) **पारस्पारिक उपपादन** (ii) **इन्डक्टेन्स द्वारा और** (iii) **कन्डेन्सर द्वारा.**

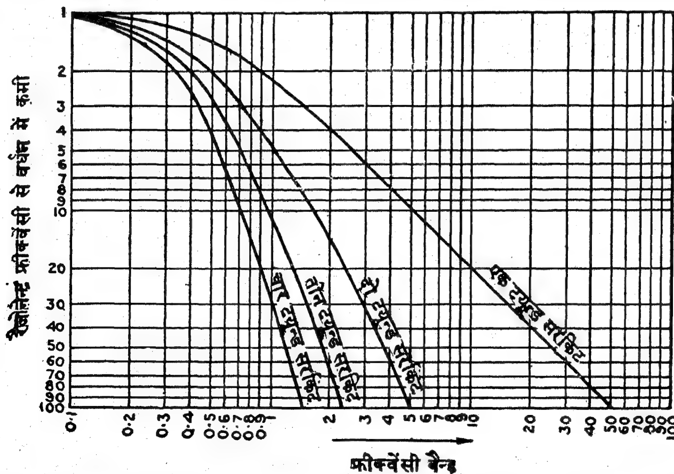
रेडियो रिसीवरों में कई स्थानों पर ऐसे सरकिटों की आवश्यकता होती है

जहाँ पर कि सरकिट केवल एक निश्चित फ्रीक्वेंसी वर्ग (frequency band) को जाने दें तथा अन्य फ्रीक्वेंसियाँ न जा सकें। इस कार्य के लिये आदर्श (ideal) सरकिट की फ्रीक्वेंसी के साथ उत्पन्न वोल्टेज (response curve) चित्र 79(i) जैसी होनी चाहिये। चित्र 79(ii) में एक व्यवहारिक सरकिट द्वारा प्राप्त होने वाला सम्बन्ध (response) दिखाया गया है। यह प्राय: दो क्रिटिकल कपिल्ड ट्यूण्ड सरकिटों के प्रयोग से प्राप्त किया जाता है।

रेडियो में ट्यूण्ड सरकिटों का प्रयोग चुनने की शक्ति (selectivity) प्राप्त करने के लिये किया जाता है। रिसीवर की चुनने की शक्ति इस प्रकार के सरकिटों की संख्या पर निर्भर रहती है। साधारणतया रेडियो में चुनने की शक्ति (सैलेक्टिविटी) प्राप्त करने के लिये तीन से लेकर दस ट्यूण्ड सरकिटों तक का प्रयोग किया जाता है। चित्र (80) में एक रिसीवर में चुनने की शक्ति और ट्यूण्ड सरकिटों की संख्या का सम्बन्ध दिखाया गया है। चित्र से यह बिलकुल स्पष्ट हो जायगा कि चुनने की शक्ति किस प्रकार ट्यूण्ड सरकिटों की संख्या पर निर्भर करती है।



चित्र 79. रिसीवर में चुनने की शक्ति.
(i) आदर्श (ii) व्यवहारिक



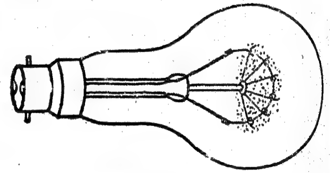
चित्र 80. रिसीवर में छांटने की शक्ति और ट्यूण्ड सरकिटों की संख्या का सम्बन्ध.

प्रकरण नौ

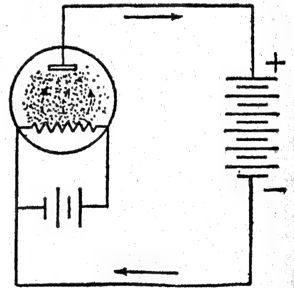
वाल्व (Valves)

एक रेडियो में मुख्यत: कुछ कन्डेन्सर, बाधक, इंडक्टेंस, वाल्व तथा जोड़ने वाले तार रहते हैं। इनमें से बाधक, कन्डेन्सर और इंडक्टेंस का वर्णन पिछले प्रकरणों में किया जा चुका है। प्रस्तुत प्रकरण में वाल्वों का वर्णन किया गया है।

डायोड वाल्व (diode valve)—पदार्थों की रचना के अन्तर्गत बताया जा चुका है कि सभी पदार्थ ऋण विद्युतकण तथा कुछ अन्य कणों (प्रोटोन, न्यूट्रोन आदि) से बनते हैं। साधारण तापक्रम पर ये कण पदार्थ के अन्दर ही रहते हैं। परन्तु यदि कुछ धातुयें गरम की जायें तो उनकी सतह से ऋण विद्युत कण (electron) निकलने लगते हैं। जैसे-जैसे यह तापक्रम अधिक होता जाता है वैसे-वैसे ही इन निकलने वाले कणों की संख्या भी बढ़ती जाती है। यदि यह पदार्थ शून्य में गरम किये जायें तो कण अधिक सरलता से निकलते हैं। विद्युत बल्ब (electric lamp) में उसके गरम तार के चारों ओर के स्थान में असंख्य विद्युत कण भरे रहते हैं (चित्र 81)। परन्तु इन विद्युत कणों का उस समय तक कोई उपयोग नहीं किया जा सकता जब तक कि उस गरम तार के पास एक और परिचालक नहीं लगा देते। दूसरा परिचालक लगा देने से प्राप्त युक्ति में होकर विद्युतधारा केवल एक ही दिशा में बह सकती है अतः यह वाल्व[1] कहलाती हैं। इस प्रकार के वाल्व में दो अलग परिचालक होते हैं अतः यह डायोड वाल्व (Diode[2] Valve) कहलाता है।



चित्र 81.



चित्र 82.
डायोड वाल्व का सिद्धान्त

---

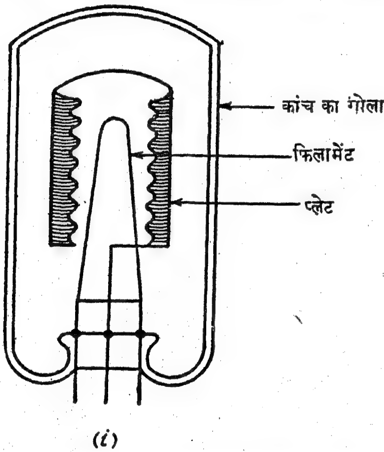
1. वाल्व वह युक्ति है जिसमें होकर द्रव अथवा गैस एक ही ओर जा सकते हैं। उदाहरण के लिए साइकिल ट्यूब के वाल्व में होकर हवा अन्दर जा सकती है पर बाहर नहीं आ सकती।

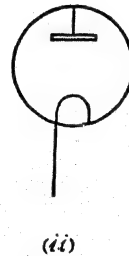
2. dia=दो।

चित्र (82) में डायोड वाल्व का सिद्धान्त दिखाया गया है। इसमें गरम किया जाने वाला भाग फिलामेंट तथा दूसरा प्लेट कहलाता है।

डायोड वाल्व का सिद्धान्त—डायोड वाल्व में गरम तार से निकले हुए कण इसके अन्दर फैले रहते हैं। जब इसके दानों इलैक्ट्रोडों (प्लेट **और** फिलामेंट) के बीच में एक बैटरी लगाते हैं तो एक विचित्रता रहती है। यदि वाल्व की प्लेट पर धन विद्युत का सिरा लगाया हो और फिलामेंट पर ऋण तो उस समय वाल्व में होकर विद्युतधारा बहती है। परन्तु यदि प्लेट पर ऋण और फिलामेंट पर धन विद्युत सिरा लगायें तो वाल्व में होकर विद्युतधारा नहीं बहती। डायोड वाल्व के इस व्यवहार का कारण नीचे दिया गया है।

प्रकरण तीन में बताया जा चुका है कि विद्युतधारा ऋण विद्युत-कणों के बहने का प्रभाव है इसके अतिरिक्त ऋण और धन विद्युत एक दूसरे को आकर्षित





चित्र 83. डायोड वाल्व की रचना (i), और चिन्ह (ii).

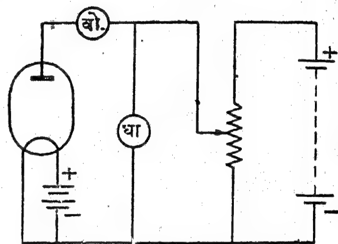
करते हैं। इन्हीं दो कारणों से वाल्व इस प्रकार का व्यवहार करता है। गरम फिलामेंट से निकलकर ऋण विद्युतकण (electron) वाल्व के शून्य (खाली स्थान, vacuum) में भर जाते हैं। जब प्लेट धन (+ive) होती है उस समय ऋण विद्युत कण प्लेट की ओर खिचते हैं। जैसे-जैसे यह कण प्लेट की ओर खिचते जाते हैं वैसे-वैसे ही फिलामेंट से और अधिक निकलते आते हैं अतः वाल्व में होकर विद्युतधारा (प्लेट से फिलामेंट की ओर)[1] बहने लगती है। जब प्लेट ऋण होती है तो फिलामेंट से

1. यहाँ यह ध्यान देने योग्य है कि वाल्व में ऋण विद्युत कण (electron) फिलामेंट से प्लेट की ओर बहते हैं परन्तु यह मान लिया गया है कि विद्युत धारा धन छोर से ऋण छोर की ओर बहती है। अतः यहाँ विद्युत धारा विद्युत कणों के बहाव से विपरीत दिशा में अर्थात् प्लेट से फिलामेंट की ओर बहती है।

निकलने वाले विद्युत-कण फिलामेंट की ओर ही खिंचते हैं। प्लेट डी रहती है इसलिये प्लेट से ऋण विद्युत-कण (electron) नहीं निकलते। फलस्वरूप वाल्व में होकर धारा नहीं बहती।

डायोड वाल्व की रचना—चित्र (83) में डायोड वाल्व की रचना और उसके लिये प्रयुक्त चिन्ह दिखाया गया है। इसमें काँच के एक गोले के अन्दर फिलामेंट रहता है। फिलामेंट के चारों ओर धातु का बेलनाकार घेरा रहता है। यह घेरा प्लेट होता है। काँच के गोले के अन्दर से हवा निकाल दी जाती है। हवा निकालकर गोले को बन्द कर दिया जाता है ताकि हवा फिर प्रवेश न कर सके।

डायोड वाल्व में प्लेट की वोल्टेज और धारा का सम्बन्ध—यदि किसी डायोड वाल्व की प्लेट पर वोल्टेज दी जाए तो उसमें धारा उसी समय बहेगी जब कि प्लेट धन हो। इसके अतिरिक्त प्लेट की धारा उसकी वोल्टेज पर भी निर्भर रहती है। चित्र (84) में दिये गये सरकिट द्वारा प्लेट वोल्टेज और धारा का सम्बन्ध जाना जा सकता है। जैसे-जैसे प्लेट की वोल्टेज बढ़ायी जाती है वैसे-वैसे ही धारा भी बढ़ती है। चित्र (85) में एक डायोड वाल्व की प्लेट वोल्टेज और धारा का सम्बन्ध दिखाया गया है।

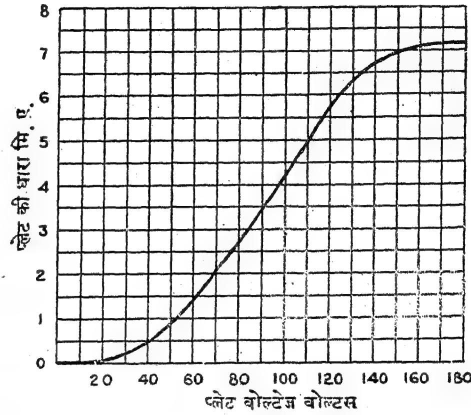


चित्र 84.
डायोड में प्लेट की वोल्टेज और धारा का सम्बन्ध प्राप्त करने के लिये प्रयुक्त सरकिट.

डायोड वाल्व के उपयोग—डायोड वाल्व में होकर धारा एक ही दिशा में जा सकती है। इसलिए इस वाल्व का उपयोग, ए. सी. (A. C.) को डी. सी. (D.C.) बनाने और समन्वित लहर में से ध्वनि की लहरें अलग करने के लिए किया जाता है। ए. सी. में विद्युत धारा की दिशा बार-बार बदलती है। इसलिए यदि एक वाल्व में फिलामेंट और प्लेट के बीच ए. सी. दें तो प्लेट कुछ देर के लिए धन (+ive) होगी और कुछ देर के लिए ऋण (—ive) वाल्व में होकर धारा उसी समय बहेगी जब कि प्लेट धन होगी। इस प्रकार वाल्व में होकर धारा एक ही दिशा में बहेगी और ए. सी. (A. C.) डी. सी. (D. C.) में बदल जावेगी। (विशेष प्रकरण 17 में देखिये)।

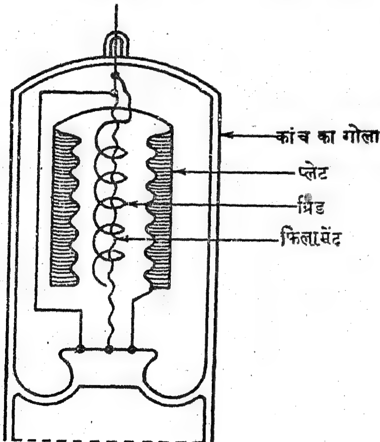
डिटेक्शन—प्रकरण दो में बताया जा चुका है कि प्रेषक (ट्रांसमीटर) से रेडियो और ध्वनि की लहरें समन्वित (modulate) करके भेजी जाती हैं। इन लहरों से ध्वनि प्राप्त करने के लिए रेडियो और ध्वनि की लहरें अलग करना आवश्यक होता है। अंग्रेजी में समन्वित रेडियो-लहरों में से ध्वनि अलग करने की इस

क्रिया को डिटेक्शन (detection) कहते हैं । डिटेक्शन के लिए डायाड वाल्व प्रयुक्त किये जाते हैं । डिटेक्शन का विस्तृत वर्णन प्रकरण (12) में किया गया है ।



चित्र 85.
डायोड वाल्व में प्लेट की वोल्टेज और धारा का सम्बन्ध.

ट्रायोड वाल्व (Triode valve)–ऊपर डायोड वाल्व का वर्णन किया जा चुका है । डायोड वाल्व का उपयोग डिटेक्शन के लिए किया जाता है परन्तु इस वाल्व द्वारा लहरों का परिमाण नहीं बढ़ाया जा सकता यदि डायोड वाल्व में फिलामेंट के पास एक इलैक्ट्रोड और लगा दें तो इस वाल्व द्वारा विद्युत-लहरें वर्धित की जा सकती हैं । यह नया लगाया हुआ इलैक्ट्रोड तार की कुछ लपेटों के रूप में होता है और इस प्रकार की रचना के कारण ग्रिड कहलाता है । इस प्रकार प्राप्त वाल्व 'ट्रायोड' (triode valve)



(i)



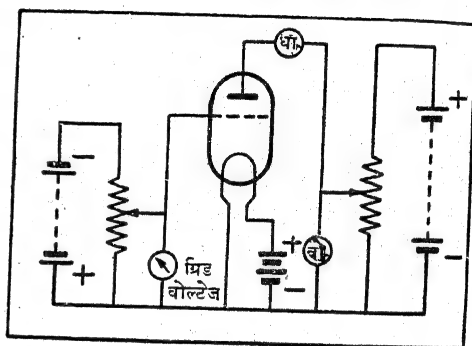
(ii)

चित्र 86.
ट्रायोड वाल्व की रचना (i) और चिन्ह (ii).

कहलाता है। चित्र (86) में ट्रायोड वाल्व की रचना और उसके लिए काम में लाया जाने वाला चिन्ह (symbol) दिखाया गया है।

ट्रायोड वाल्व में प्लेट तथा ग्रिड की वोल्टेज और प्लेट की धारा का सम्बन्ध—ट्रायोड वाल्व में प्लेट की धारा ग्रिड तथा प्लेट इन दोनों की वाल्टेज पर निर्भर रहती है। यदि एक ट्रायोड वाल्व में चित्र 87 के अनुसार बैटरी लगा दें और ग्रिड वोल्टेज बदलें तो ग्रिड वोल्टेज तथा प्लेट पर बहने वाली धारा में चित्र (88) के अनुसार सम्बन्ध प्राप्त होगा।

प्लेट पर एक निश्चित वोल्टेज देने पर वाल्व की धारा ग्रिड वोल्टेज पर निर्भर करती है। यदि ग्रिड की वोल्टेज कम की जाये तो धारा कम होने लगती है। यदि ग्रिड की वोल्टेज अधिक ऋण की जाये तो एक निश्चित् वोल्टेज पर वाल्व में होकर धारा बहना बंद हो जाती है। ग्रिड की वह वोल्टेज जिस पर वाल्व में होकर धारा बहना बंद हो जाती है, उस वाल्व की 'कट ऑफ़' वोल्टेज कहलाती है।



चित्र 87.

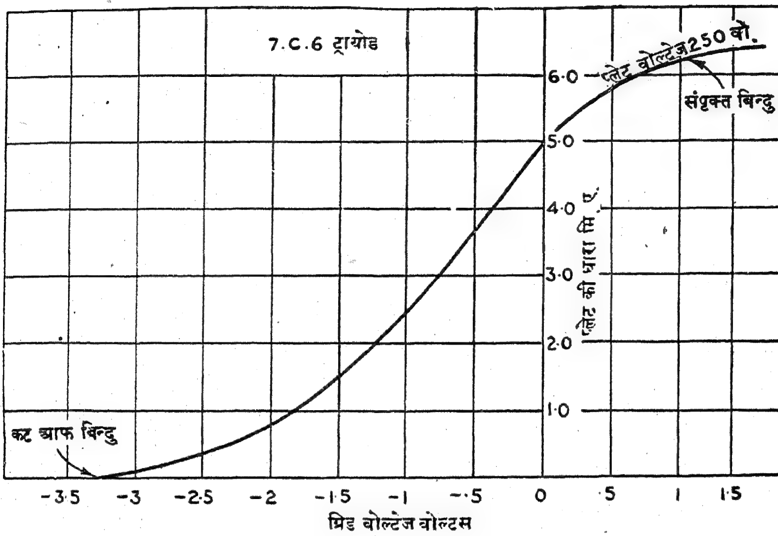
ट्रायोड वाल्व में प्लेट की वोल्टेज तथा ग्रिड की वोल्टेज और प्लेट की धारा का सम्बन्ध प्राप्त करने के लिए प्रयुक्त सरकिट.

अब यदि ग्रिड की वोल्टेज कम करने के स्थान पर बढ़ायी जाये तो वाल्व में होकर बहने वाली धारा बढ़ेगी परन्तु ग्रिड की वोल्टेज अधिक बढ़ाने पर एक ऐसी स्थिति आ जायेगी जब कि ग्रिड वोल्टेज बढ़ाने पर वाल्व में होकर बहने वाली धारा ज़्यादा नहीं बढ़ेगी। इस स्थिति में फ़िलामेंट (अथवा कैथोड) से निकले हुए समस्त विद्युत-कण (electron) प्लेट द्वारा खींच लिये जाते हैं। उस वाल्व में होकर इससे अधिक धारा नहीं बह सकती है। वह धारा इस वाल्व की संपृक्त धारा (सैचुरेशन करेंट) कहलाती है। ग्राफ़ में जिस बिन्दु पर यह धारा बहना प्रारम्भ करती है वह संपृक्त बिन्दु (सैचुरेशन पॉइन्ट) कहलाता है।

वर्धन चित्र (89) में वाल्व के विभिन्न प्लेट वोल्टजों पर ग्रिड वोल्टेज और प्लेट की धारा का सम्बन्ध[1] एक ग्राफ़ (रेखाचित्र) द्वारा दिखाया गया है।

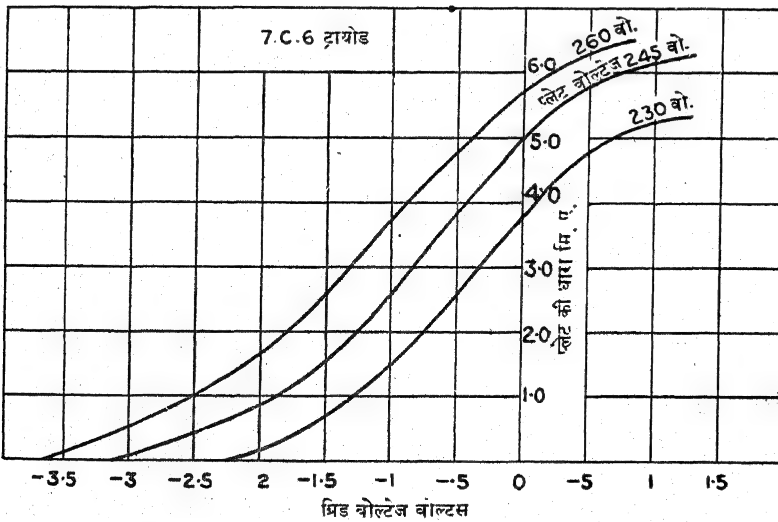
1. अंग्रेजी में यह सम्बन्ध दिखाने वाले ग्राफ़ कैरक्टरस्टिक कर्व (characteristic curve) कहलाते हैं।

इस ग्र.फ़ को अच्छी तरह देखने के बाद यह दिखाई पड़ता है कि यदि ग्रिड



चित्र 88.

ट्रायोड वाल्व में ग्रिड की वोल्टेज और प्लेट की धारा में सम्बन्ध.

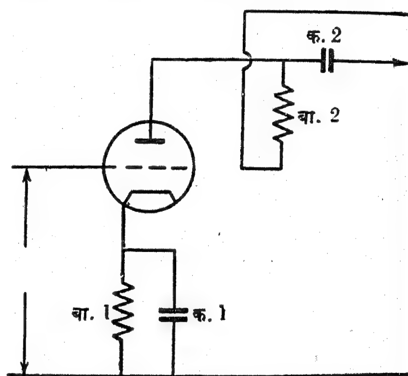


चित्र 89.

की वोल्टेज एक वोल्ट (—·5 से —1·5 तक) कम कर दें तो उसकी कमी पूरी करने के लिए (वाल्व में होकर उतनी ही धारा बहते रहने के लिए, प्लेट की वोल्टेज 30 वोल्ट (230 से 260 तक) बढ़ानी पड़ेगी। इसका यह अर्थ हुआ कि ग्रिड पर दी हुई एक वोल्ट उतनी धारा घटा-बढ़ा सकती है जितनी कि प्लेट पर दी हुई 30 वोल्ट।

ऊपर के वर्णन से ज्ञात होता है कि वाल्व की धारा पर प्लेट की वोल्टेज की अपेक्षा में ग्रिड की वोल्टेज का प्रभाव कई गुना अधिक होता है। इसका कारण यह है कि ग्रिड प्लेट की अपेक्षा फिलामेंट के अधिक पास होती है। पास होने के कारण ग्रिड का प्रभाव अधिक होता है। ग्रिड का प्रभाव अधिक होने के कारण ग्रिड पर दी हुई थोड़ी वोल्टेज प्लेट पर दी गई कई गुनी वोल्टेज के बराबर प्रभाव डालती है और इस प्रकार ग्रिड की वोल्टेज प्लेट पर कई गुनी हो जाती है। ट्रायोड वाल्व के इस गुण कारण इसके द्वारा विद्युत लहरों का परिमाण (amplitude) बढ़ाया जा सकता है। लहरों के परिमाण (जो कि वोल्टेज पर निर्भर है) का इस प्रकार बढ़ाया जाना वर्धन (amplification) कहलाता है।

किसी वाल्व द्वारा वर्धन प्राप्त करने के लिए यह आवश्यक है कि बर्धित वोल्टेज किसी युक्ति के सिरों पर प्राप्त हो। चित्र (90) में एक वर्धक का सरकिट दिखाया गया है। इसमें वाल्व की ग्रिड पर वर्धित की जाने वाली ए. सी. वोल्टेज दी जाती है। इस वोल्टेज के कारण प्लेट की धारा बदलती है और इस कारण बाधक बा. 1. में धारा बढ़ती घटती है। इस परिवर्तन के कारण बाधक पर प्राप्त वोल्टेज भी बढ़ती घटती है। अगर वाल्व ठीक प्रकार से प्रयुक्त किया जाय तो बाधक पर प्राप्त वोल्टेज ग्रिड पर दी हुई वोल्टेज की



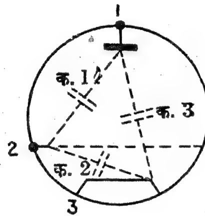
चित्र 90.
बाधक संयुक्त वर्धक.

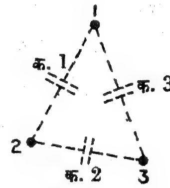
उदाहरण के लिए जब प्लेट वोल्टेज 230 वोल्ट है तो ·5 ग्रिड वोल्टेज पर 2·5 मि. ए. धारा बह रही है। यदि ग्रिड वोल्टेज 1 वोल्ट कम कर दी जावे यह —1·5 होगी और अब धारा ·8 मि. ए. होगी। इस धारा को फिर से 2·5 मि.ए. करने के लिए प्लेट वोल्टेज 260 तक बढ़ानी पड़ेगी।

जैसी ही होगी। केवल उसके परिमाण में वृद्धि हो जायेगी। कन्डेंसर (1) के कारण डी. सी. रुक जायेगी और वर्धक के सिरों पर वर्धित लहर प्राप्त हो जायेगी।

टैट्रोड वाल्व—ट्रायोड वाल्व में ग्रिड, प्लेट और फिलामेंट (अथवा कैथोड) में आपस में कैपेसिटी होती है। यह कैपेसिटी ग्रिड तथा प्लेट, प्लेट तथा फिलामेंट और ग्रिड तथा फिलामेंट के बीच रहती है (चित्र 91)। यह कैपेसिटी अंग्रेज़ी में इन्टर इलैक्ट्रोड (इलैक्ट्रोड मध्यवर्ती) कैपेसिटी कहलाती है। इनमें से प्लेट और ग्रिड के बीच की कैपेसिटी अधिक महत्त्वपूर्ण होती है। ध्वनि फ्रीक्वेंसी की लहरों पर यह कैपेसिटी कोई विशेष प्रभाव नहीं डालती परन्तु रेडियो फ्रीक्वेंसी की लहरों पर कई प्रकार से प्रभाव डालती है। इसलिए ट्रायोड वाल्व रेडियो फ्रीक्वेंसी की लहरों के वर्धन के लिए उपयुक्त नहीं होता।

ट्रायोड की इस कमी को दूर करने के लिए यह आवश्यक है कि ग्रिड और प्लेट के बीच की कैपेसिटी कम कर दी जाये। ग्रिड और प्लेट के बीच की यह कैपेसिटी ग्रिड और प्लेट के बीच एक और इलैक्ट्रोड लगा देने से बहुत कम हो जाती है। यह नया इलैक्ट्रोड, जो कि स्क्रीन कहलाता है ग्रिड के ही समान तार की कुछ लपेटों के रूप में होता है। इस नये इलैक्ट्रोड को लगा देने के बाद वाल्व में चार इलैक्ट्रोड हो जाते हैं अतः यह वाल्व टैट्रोड वाल्व (tetra=चार) कहलाता है।

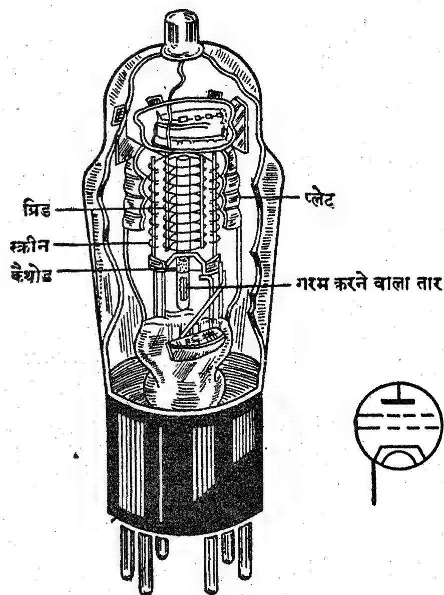




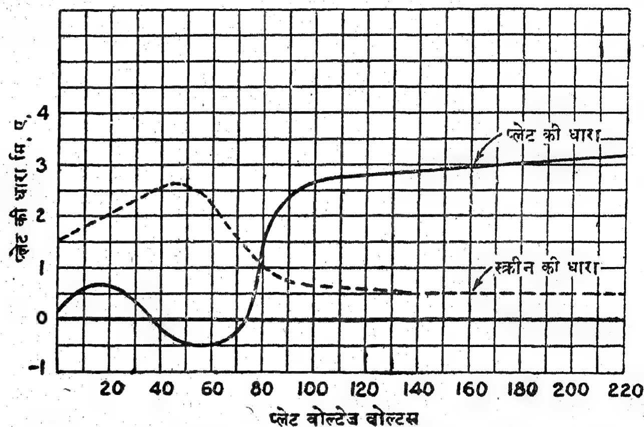
चित्र 91.
ट्रायोड में इलैक्ट्रोड मध्यवर्ती कैपेसिटी.

टैट्रोड वाल्व में स्क्रीन के कारण प्लेट की वोल्टेज का प्रभाव कम हो जाता है। इस वाल्व में स्क्रीन अधिकतर धन (+ive) रखा जाता है और यह फिलामेंट से ऋण विद्युत-कणों (electrons) को अपनी ओर खींचता है। स्क्रीन की जालीदार रचना होने के कारण अधिकांश विद्युत-कण इसके बीच से निकलकर प्लेट पर पहुँच जाते हैं। इस प्रकार स्क्रीन, फिलामेंट (अथवा कैथोड) से इलैक्ट्रोनों को खींचता है और प्लेट का फिलामेंट पर प्रभाव बहुत कम कर देता है। स्क्रीन के इस प्रभाव के कारण टैट्रोड वाल्व का वर्धनांश ट्रायोड वाल्व की अपेक्षा कई गुना अधिक हो जाता है ग्रिड और प्लेट के बीच कैपेसिटी कम होने के कारण टैट्रोड वाल्व का प्रयोग रेडियो फ्रीक्वेंसी की लहरें वर्धित करने के लिए भी किया जा सकता है। चित्र 92 में टैट्रोड वाल्व की रचना दिखाई गई है।

टैट्रोड वाल्व में प्लेट वोल्टेज, ग्रिड वोल्टेज और धारा का सम्बन्ध (characterstic of tetrode valve)—चित्र (93) में एक टैट्रोड वाल्व की प्लेट वोल्टेज और प्लेट की धारा का सम्बन्ध दिखाया गया है। चित्र से दो बातें स्पष्ट हैं। प्रथम तो यह कि जैसे-जैसे प्लेट की वोल्टेज बढ़ाई जाती है वैसे वैसे प्लेट की धारा बढ़ती है परन्तु एक निश्चित वोल्टेज (जो कि स्क्रीन की वोल्टेज पर निर्भर करती है) के बाद प्लेट पर बहने वाली धारा घटने लगती है और यहाँ तक कि जब प्लेट की वोल्टेज 40 से 70 वोल्ट तक होती है तो प्लेट की धारा वस्तुतः ऋण होती है। दूसरे यह कि प्लेट को वोल्टेज 120 हो जाने के बाद प्लेट वोल्टेज बढ़ाने पर प्लेट की धारा में बहुत कम अंतर पड़ता है। इसका अर्थ यह हुआ कि प्लेट के वोल्टेज 120 वोल्ट होने के बाद प्लेट का



चित्र 92. टैट्रोड वाल्व की रचना.

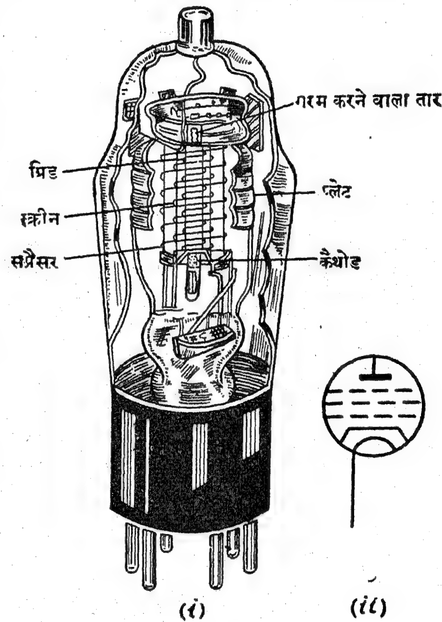


चित्र 93. टैट्रोड वाल्व में प्लेट की वोल्टेज और धारा का सम्बन्ध.

प्रभाव बहुत कम हो जाता है। प्लेट की वोल्टेज का प्रभाव कम होने के कारण वाल्व का वर्धनांश (प्रकरण 10) बहुत अधिक होता है। उदाहरण के लिए यदि एक सामान्य ट्रायोड का वर्धनांश 30 के लगभग हो तो उसी प्रकार से टैट्रोड का वर्धनांश 300 से भी अधिक हो सकता है।

सैकेन्डरी एमिसन (secondary emission)—ऊपर बताया जा चुका है कि टैट्रोड वाल्व में प्लेट की वोल्टेज बढ़ाने पर धारा कम होने लगती है तथा कुछ वोल्टेज के लिए यह धारा ऋण हो जाती है। इसका कारण यह है कि प्लेट से टकराने वाला प्रत्येक ऋण विद्युत-कण यदि वह पर्याप्त गति से चल रहा है तो प्लेट से कई इलैक्ट्रोन निकाल सकता है। ट्रायोड वाल्व में केवल प्लेट ही धन (+ive) होती है। अतः प्लेट से निकले हुए यह इलैक्ट्रोन प्लेट पर ही वापिस चले जाते हैं परन्तु टैट्रोड में स्क्रीन भी धन होता है अतः वे ऋण विद्युत-कण (electron) स्क्रीन की ओर आकर्षित होते हैं। जब स्क्रीन प्लेट से अधिक धन (+ive) होता है तो जितने इलैक्ट्रोन प्लेट पर पहुँचते हैं उससे कहीं अधिक उससे निकलकर स्क्रीन द्वारा खींच लिए जाते हैं इस कारण प्लेट की धारा ऋण हो जाती है।

पैंटोड वाल्व—टैट्रोड वाल्व में ऊपर वर्णित प्रभाव के कारण उसका उपयोग सीमित हो जाता है। यदि टैट्रोड वाल्व में स्क्रीन और प्लेट के बीच एक और इलैक्ट्रोड लगा दिया जाये तो ऊपर वर्णित प्रभाव नहीं रहत नया लगाया हुआ इलैक्ट्रोड भी ि ड और स्क्रीन के समान तार की कुछ लपेटों के रूप में होत है तथा सप्रैसर (suppresso. =दबाने वाला) कहलाता है। यह इलैक्ट्रोड प्रायः ऋण (—ive) रखा जाता है। इस कारण प्लेट से निकले हुए इलैक्ट्रोन वापिस प्लेट पर पहुँच जाते हैं और यह दोष नहीं रहता। इस प्रकार प्राप्त वाल्व में पाँच इलैक्ट्रोड होते हैं

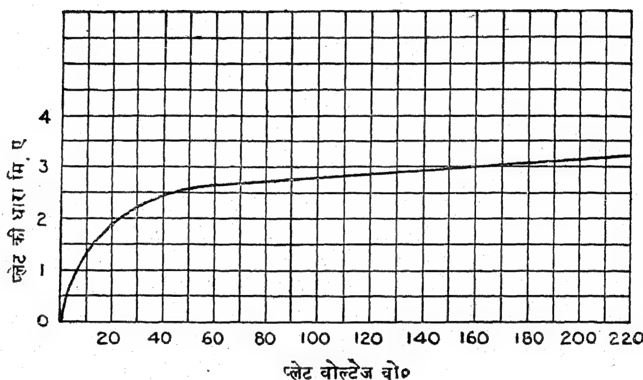


चित्र 94.

पैंटोड वाल्व की रचना (i) **और उसके लिए प्रयुक्त चिन्ह** (ii).

अतः यह पेंटोड (pentode, penta=पाँच) वाल्व कहलाता है। चित्र (94) में पेंटोड वाल्व की रचना तथा उसके लिए प्रयुक्त चिन्ह दिखाया गया है।

पेंटोड वाल्व के उपयोग—चित्र (95) में पेंटोड वाल्व में प्लेट वोल्टेज और प्लेट की धारा का सम्बन्ध दिखाया गया है। ऊपर के वर्णन से यह स्पष्ट हो जाता



चित्र 95.

पेंटोड वाल्व में प्लेट की वोल्टेज और धारा का सम्बन्ध.

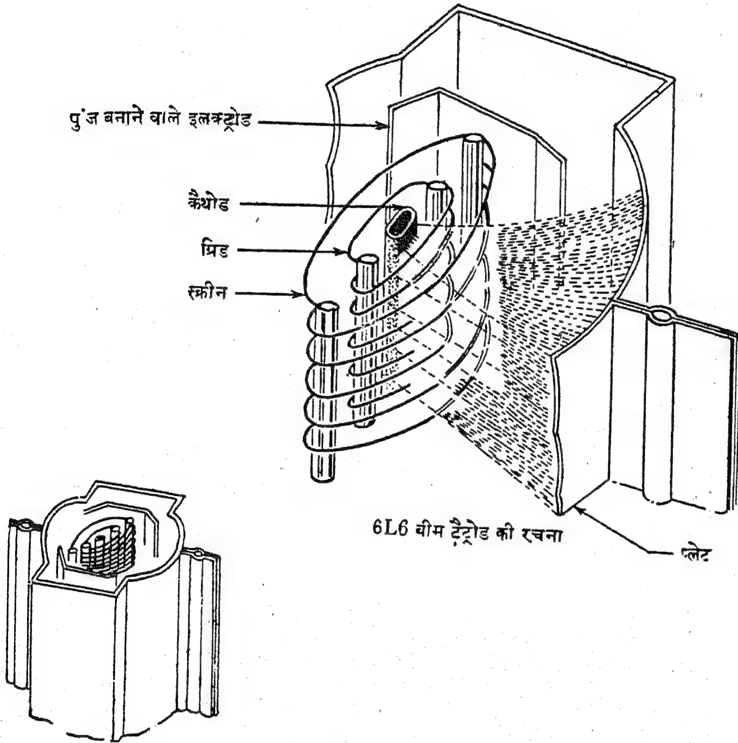
है कि इस वाल्व में टैट्रोड की अच्छाइयाँ तो हैं परन्तु खराबियाँ नहीं हैं। इसलिए इस वाल्व का उपयोग ध्वनि और रेडियो दोनों ही फ्रीक्वेंसी की लहरें वर्धित करने के लिए किया जा सकता है। वर्धकों का विशेष वर्णन प्रकरण (12) में किया गया है।

बीम टैट्रोड—पेंटोड में जो प्रभाव सप्रैसर के द्वारा प्राप्त किया जाता है वही प्रभाव बीम टैट्रोड में अन्य प्रकार से प्राप्त किया जाता है। चित्र (96) में एक बीम टैट्रोड की रचना दिखाई गई है। इसमें दो प्लेटें, इलैक्ट्रोनों को एक निश्चित पुंज (Beam=बीम) में सीमित रखती हैं। यह प्लेटें कैथोड से जुड़ी रहती हैं। यह प्लेटें ऋण होने के कारण इलैक्ट्रोनों को दूर हटाती हैं तथा इस प्रकार इलैक्ट्रोन इकट्ठे होकर प्लेट पर पहुँचते हैं।

इस वाल्व में स्क्रीन इस प्रकार लगाया जाता है कि स्क्रीन इलैक्ट्रोनों के लिए ग्रिड की छाया में आ जाता है। इसलिए स्क्रीन पर बहुत कम इलैक्ट्रोन रुकते हैं और प्रायः सभी इलैक्ट्रोन प्लेट पर पहुँच जाते हैं। इस वाल्व में सप्रैसर का काम इलैक्ट्रोन स्वयं करते हैं। इलैक्ट्रोन-पुंज बनने के कारण प्लेट और स्क्रीन के बीच में जो इलैक्ट्रोन रहते हैं वे सैकेन्डरी एमिसन के कारण प्लेट से निकले हुए इलैक्ट्रोनों को फिर प्लेट पर वापिस कर देते हैं। इस प्रकार के वाल्व अधिक शक्ति देने के काम में

लाये जाते हैं ।

विभिन्न प्रकार के वाल्व—ऊपर वर्णित वाल्वों के अतिरिक्त भी कई अन्य



चित्र 96.

प्रकार के वाल्व उपयोग में लाये जाते हैं । इनमें से कुछ वाल्वों में एक ही गोले के अन्दर दो या अधिक वाल्व होते हैं । डबल डायोड—ट्रायोड इसका एक उदाहरण है । इस वाल्व में एक ही गोले के अन्दर एक ट्रायोड और दो डायोड वाल्व होते हैं । इसके अतिरिक्त कुछ वाल्व विशेष कार्यों के लिए प्रयुक्त होते हैं । इनमें से कुछ जैसे ट्यूनिंग बताने वाला, ट्रायोड हैक्सोड इत्यादि, का वर्णन आगे के प्रकरणों में किया गया है ।

प्रकरण दस

वाल्वों की कुछ विशेषताएँ

प्रकरण नौ में डायोड, ट्रायोड, टैट्रोड, और पेंटोड इन चार प्रकार के वाल्वों का वर्णन किया जा चुका है। इन प्रकारों में भी वाल्व विभिन्न होते हैं। इनकी विभिन्नता का कारण वाल्व के कुछ प्रमुख गुण हैं। वस्तुतः कौनसा वाल्व किस कार्य के लिए उपयुक्त होगा यह उसके उन गुणों पर निर्भर करेगा। डायोड के अतिरिक्त अन्य वाल्वों (ट्रायोड, टैट्रोड एवं पेंटोड) के यह गुण निम्नानुसार हैं।

1. उस वाल्व द्वारा कितना वर्धन प्राप्त किया जा सकता है।

2. उस वाल्व द्वारा वर्धन प्राप्त करने के लिए प्रयुक्त रुकावट (impedance) का अर्घ (value) क्या होना चाहिए।

3. उस वाल्व से कितनी शक्ति मिल सकती है।

किसी भी वाल्व के उपर्युक्त गुण निम्न विशेषताओं (कान्सटेन्टस) पर निर्भर करते हैं।

1. वर्धनांश (amplification factor μ)
2. प्लेट की बाधा (plate resistance, Rp)
3. पारस्परिक परिचालन (mutual conductance, Gm)
4. वाल्व का आकार तथा विभिन्न इलैक्ट्रोड कितनी शक्ति व्यय कर सकते हैं।

इनका विस्तृत वर्णन नीचे किया गया है।

वर्धनांश—पिछले प्रकरण में यह बताया जा चुका है कि किसी ट्रायोड वाल्व की धारा में परिवर्तन के लिए प्लेट की तुलना में ग्रिड पर बहुत कम वोल्टेज आवश्यक होती है। इसका कारण वाल्व में ग्रिड का प्लेट की अपेक्षा कैथोड के अधिक निकट होना है और इसी प्रभाव के कारण वाल्व वर्धन कर सकता है।

किसी वाल्व में प्लेट की धारा में एक निश्चित परिवर्तन करने के लिए आवश्यक प्लेट वोल्टेज में परिवर्तन और उतना ही परिवर्तन करने के लिए आवश्यक ग्रिड वोल्टेज में परिवर्तन, इन दोनों का अनुपात वाल्व का वर्धनांश (amplification factor, μ) कहलाता है।

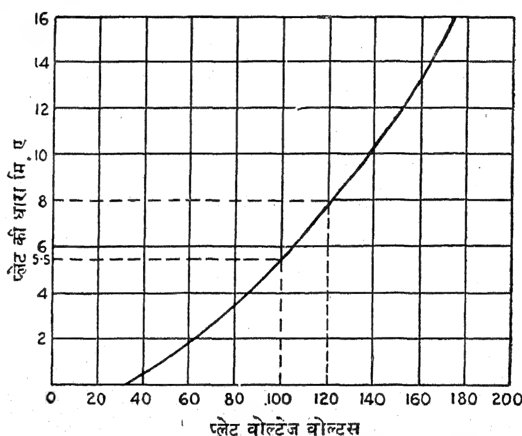
अथवा

$$\text{वर्धनांश} = \frac{\left\{\begin{array}{c}\text{वाल्व की धारा में एक निश्चित परिवर्तन के लिए आवश्यक} \\ \text{प्लेट की वोल्टेज में परिवर्तन.}\end{array}\right\}}{\text{उतने ही परिवर्तन के लिए आवश्यक ग्रिड वोल्टेज में परिवर्तन.}}$$

उदाहरण के लिए यदि प्लेट की वोल्टेज 20 वोल्ट बढ़ाने पर प्लेट की धारा

1 मि. ए. बढ़ती है और फिर ग्रिड की वोल्टेज 1 वोल्ट बढ़ाने पर भी प्लेट की धारा 1 मि. ए. बढ़ती है तो उस वाल्व का वर्धनांश (20 : 1) 20 होगा। वर्धनांश अनुपात होने के कारण संख्या है। किसी वाल्व का वर्धनांश उस वाल्व की वर्धन करने की सीमा बतलाता है

प्लेट की बाधा—किसी भी वाल्व की धारा उस वाल्व के विभिन्न इलैक्ट्रोडों पर दी गई वोल्टेजों पर निर्भर करती है; उदाहरण के लिए डायोड वाल्व में प्लेट की धारा प्लेट वोल्टेज पर तथा ट्रायोड वाल्व में प्लेट और ग्रिड इन दोनों की वोल्टेजों पर निर्भर करती है। यदि किसी वाल्व में अन्य इलैक्ट्रोडों की वोल्टेज स्थायी रखकर केवल प्लेट की वोल्टेज बदली जावे तो प्लेट की धारा भी वोल्टेज के साथ-साथ बदलेगी। चित्र (97) में एक ट्रायोड वाल्व में निश्चित ग्रिड वोल्टेज पर प्लेट की वोल्टेज और धारा का सम्बन्ध दिखाया गया है। इस चित्र से यह स्पष्ट हो जावेगा कि प्लेट की वोल्टेज बढ़ाने से प्लेट की धारा बढ़ती है और घटाने से घटती है। इस प्रकार वाल्व एक बाधक (resistance) की भाँति कार्य करता है। वाल्व की यह बाधा प्लेट की बाधा कहलाती है। इस बाधा का अर्घ प्लेट की वोल्टेज के साथ-साथ बदलता है। व्यवहार में किसी निश्चित बिन्दु पर यह बाधा निकाली जाती है। किसी बिन्दु पर 'प्लेट की बाधा' की परिभाषा निम्नानुसार की जा सकती है।



चित्र 97.

ट्रायोड वाल्व में प्लेट की धारा और प्लेट की वोल्टेज से बाधा निकालना.

$$\text{प्लेट की बाधा} = \frac{\text{प्लेट की वोल्टेज में थोड़ा परिवर्तन}}{\text{प्लेट की धारा में परिवर्तन}}$$

उदाहरण के लिए यदि ऊपर के चित्र में प्लेट की वोल्टेज 100 वोल्ट से 120 वोल्ट कर दी जावे तो प्लेट की धारा 5·5 मि. ए से 8 मि. ए. हो जावेगी।

$$\text{अत: प्लेट की बाधा} = \frac{120-100}{\frac{(8-5{\cdot}5)}{1000}} = \frac{20}{2{\cdot}5} \times 1000 = 8000 \text{ ओह्म.}$$

पारस्परिक परिचालन (mutual conductance, gm)—जैसा कि बताया जा चुका है, किसी भी वाल्व में प्लेट की धारा, प्लेट तथा अन्य इलैक्ट्रोडों की वोल्टेजों पर निर्भर करती है। यदि प्लेट (तथा अन्य इलैक्ट्रोडों) की वाल्टेज स्थायी रखकर केवल ग्रिड की वोल्टेज में परिवर्तन किया जावे तो प्लेट की धारा बदलेगी। ग्रिड की वोल्टेज एक वोल्ट बदलने पर प्लेट की धारा में जितना परिवर्तन होगा वह उस वाल्व का पारस्परिक परिचालन (म्युचुअल कन्डक्टेंस) कहलाता है।

अथवा

$$\text{पारस्परिक परिचालन} = \frac{\text{प्लेट की धारा में थोड़ा परिवर्तन}}{\text{उस परिवर्तन के लिए आवश्यक ग्रिड वोल्टज में परिवर्तन}}$$

परिचालन की इकाई म्हो (ohm का उल्टा mho) है। व्यवहार में माइक्रो म्हो (μ mho) का उपयोग किया जाता है।

1 म्हो = 1,000,000 माइक्रो म्हो। म्हो के स्थान पर कहीं-कहीं मि. ए. प्रति वोल्ट का भी उपयोग किया जाता है।

उदाहरण—यदि किसी वाल्व की ग्रिड वोल्टेज —4 वोल्ट से —2 वोल्ट करने पर उसकी धारा 8 मि. ए. से 14 मि. ए. हो जाती है तो उसका पारस्परिक परिचालन क्या होगा ?

पारस्परिक परिचालन

$$= \frac{\text{प्लेट की धारा में थोड़ा परिवर्तन}}{\text{उस परिवर्तन के लिये आवश्यक ग्रिड वोल्टेज में परिवर्तन}}$$

अतः उस वाल्व का पारस्परिक परिचालन

$$= \frac{14-8}{2} \text{ मि. ए./वोल्ट} = 3 \text{ मि, ए./वोल्ट} = 3000 \text{ माइक्रो म्हो।}$$

किसी भी वाल्व का वर्धनांश, प्लेट की बाधा और पारस्परिक परिचालन इन तीनों में से कोई भी दो ज्ञात होने पर तीसरा निकाला जा सकता है। इनके यह यह सम्बन्ध निम्न गुर द्वारा प्रदर्शित किये जा सकते हैं—

वर्धनांश = पारस्परिक परिचालन $\times$ प्लेट की बाधा,

$$(\mu = gm \times Rp).$$

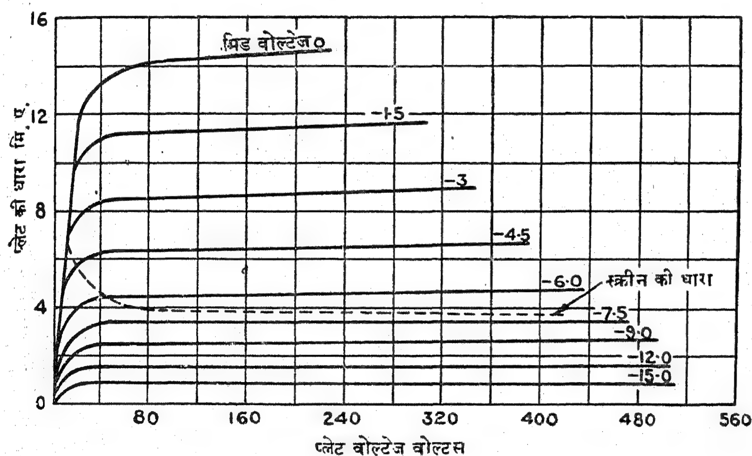
$$\text{प्लेट की बाधा} = \frac{\text{वर्धनांश}}{\text{पारस्परिक परिचालन}},$$

$$\left(Rp = \frac{\mu}{gm}\right).$$

$$\text{और पारस्परिक परिचालन} = \frac{\text{वर्धनांश}}{\text{प्लेट की बाधा}}$$

$$\left(gm = \frac{\mu}{Rp}\right).$$

वाल्वों की उपर्युक्त विशेषताएँ (constants) उनके ग्रिड वोल्टेज, प्लेट की वाल्टेज और प्लेट की धारा इन तीनों के पारस्परिक सम्बन्ध से निकाले जा सकते हैं। वाल्वों के यह सम्बन्ध रेखाचित्रों द्वारा प्रदर्शित किये जाते हैं। प्रकरण 9 में ट्रायोड, टैट्रोड और पैंटोड वाल्वों के सम्बन्ध दिखाये गये हैं। यह सम्बन्ध दो विभिन्न प्रकारों से दिखाये जा सकते हैं। पहिली प्रकार में स्थायी प्लेट वोल्टेज पर ग्रिड वोल्टेज और प्लेट की धारा में सम्बन्ध दिखाया जाता है। प्रायः केवल एक रेखा वाल्व के पूरे गुणों को नहीं बता सकती। अतः विभिन्न प्लेट वोल्टेजों पर अलग-अलग रेखाएँ खींची जाती हैं। प्रकरण 9 चित्र (89) में एक ट्रायोड में यह सम्बन्ध दिखाए जा चुके हैं। दूसरी प्रकार में ग्रिड वोल्टेज स्थायी रखते हुए प्लेट वोल्टेज और प्लेट की धारा का सम्बन्ध दिखाया जाता है। इनमें यह सम्बन्ध विभिन्न ग्रिड वोल्टेजों पर अलग-अलग रेखाओं के रूप में प्रदर्शित किये जाते हैं। चित्र (98) में एक पैंटोड वाल्व में यह सम्बन्ध दिखाये गये हैं। इस



चित्र 98.

पैंटोड वाल्व में विभिन्न ग्रिड वोल्टेजों पर प्लेट की वोल्टेज और धारा में सम्बन्ध.

वाल्व में तथा अन्य अधिक इलैक्ट्रोडों के वाल्वों में अन्य इलैक्ट्रोडों की वोल्टेज भी निर्देशित की जाती है। उपर्युक्त चित्र के लिए स्क्रीन की वोल्टेज 100 वोल्ट है। तथा सप्रेसर कैथोड में जोड़ दिया गया है।

वाल्व के उपर्युक्त गुणों के अतिरिक्त वाल्व के अन्य प्रमुखताएँ निम्नानुसार हैं।

1. वाल्व के फिलामेंट पर दी जाने वाली वोल्टेज।
2. वाल्व के अन्य इलैक्ट्रोडों पर दी जाने वाली अधिकतम वोल्टेज।
3. वाल्व में होकर अधिक से अधिक कितनी धारा बह सकती है।
4. वाल्व की प्लेट अधिक से अधिक कितनी शक्ति व्यय कर सकती है।

1. वाल्व के फिलामेंट (अथवा गरम करने वाले तार) पर दी जाने वाली वोल्टेज वाल्व के निर्माता पर निर्भर करती है। शुष्क बैटरियों पर चलने वाले वाल्व 1·5 और तीन वोल्ट, सैकण्डरी बैटरी एवं ए. सी. विद्युत स्रोत से गरम होने वाले वाल्व 6·3 वोल्ट तथा ए. सी., डी. सी. दोनों से गरम होने वाले वाल्व विभिन्न वोल्टेजों से गरम होते हैं।

2. वाल्व के अन्य इलैक्ट्रोडों पर दी जाने वाली वोल्टेज वाल्व के आकार एवं रचना पर निर्भर करती है। प्रत्येक दशा में वाल्व के बनाने वाले इन वोल्टेजों का निर्देश कर देते हैं।

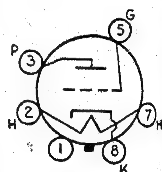
3. वाल्व में होकर कितनी धारा बह सकती है यह वाल्व के कैथोड के क्षेत्रफल एवं गरम करने में व्यय होने वाली शक्ति पर निर्भर करता है।

4. वाल्व की प्लेट कितनी शक्ति व्यय कर सकती है यह प्लेट के पदार्थ एवं क्षेत्रफल पर निर्भर करता है।

वाल्वों के निर्माता तालिकाओं और रेखाचित्रों में वाल्व के गुणों को प्रदर्शित करते हैं। वाल्व को किसी भी नये यन्त्र बनाने के लिए प्रयुक्त करते समय अथवा समतुल्य (equivalent) वाल्व ढूंढ़ते समय निर्माताओं के विवरण से बहुत सहायता मिलती है। नीचे के वर्णन में उदाहरण के लिए रेडियो कार्पोरेशन आफ़ अमेरिका (R. C. A.) द्वारा निर्मित एक ट्रायोड का विवरण दिया गया है।

वाल्व 6J5.[1]

ट्रायोड मध्यम वर्धनांश (medium μ)—यह वाल्व रेडियों में डिटेक्टर, वर्धक एवं असिलेटर के रूप में प्रयुक्त किया जाता है। चित्र (99) में वाल्व की किस पिन पर कौन सा इलैक्ट्रोड जुड़ा हुआ है यह दिखाया गया है। यह वाल्व आठ पिन के वाल्व बेस में लगाया जा सकता है। शेष वर्णन निम्नानुसार है।



चित्र 99. 6J5 वाल्व में इलैक्ट्रोडों के कनेक्शन

1. R. C. A. रिसीविंग ट्यूब मैनुअल 1952 पृष्ठ 146-147 के आधार पर।

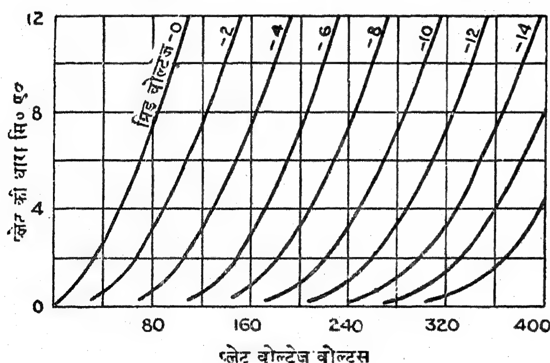
गरम करने के लिए आवश्यक वोल्टेज		6·3 वोल्ट
,, ,, ,, धारा		·3 एम्पीयर
इलैक्ट्रोडों के बीच की कैपेसिटी	लगभग	
ग्रिड और प्लेट में	3·4 पिको फैरड (μμF)	
ग्रिड और कैथोड में	3·4 ,, ,, ,,	
प्लेट और कैथोड में	3·6 ,, ,, ,,	

अधिकतम

प्लेट वोल्टेज	300 वोल्ट अधिकतम
ग्रिड वोल्टेज धन	0 ,, ,,
प्लेट पर व्यय शक्ति	2·5 वाल्ट ,,
गरम करने वाले तार और कैथोड में वोल्टेज का अन्तर	± 90 वोल्ट ,,
कैथोड की धारा	20 मि. ए. ,,

व्यवहार में (एक स्थान पर प्रयोग)

प्लेट वोल्टेज	250 वोल्ट
ग्रिड वोल्टेज	—8 ,,
वर्धनांश	20 ,,
प्लेट की बाधा	7700 ओह्म
म्यूच्यूअल कन्डक्टेंस	2600 माइक्रो म्हो
कट आफ़ वोल्टेज	—18 वोल्ट (लगभग)
प्लेट की धारा	9 मि. ए.



चित्र 100.

6J5 ट्रायोड वाल्व में विभिन्न ग्रिड वोल्टेजों पर प्लेट की वोल्टेज और धारा में सम्बन्ध.

चित्र (100) में इस वाल्व की विभिन्न ग्रिड वोल्टेजों पर प्लेट की वोल्टेज और धारा का सम्बन्ध दिखाया गया है।

नोट—अधिकतम स्थिति में ग्रिड और कैथोड के बीच की बाधा (डी. सी.) एक मैगा ओह्म से अधिक न होनी चाहिए।

ग्यारहवाँ प्रकरण

वर्धक (Amplifier)

रेडियो में वर्धक का प्रमुख भाग रहता है। वर्धक के लिए वाल्व उपयोग में लाये जाते हैं। प्रस्तुत प्रकरण में यह बताया गया है कि वर्धन के लिए वाल्व किस प्रकार उपयोग में लाये जाते हैं। प्रकरण 9 में वर्धक का सिद्धान्त बताया जा चुका है। वहाँ पर वर्धित वोल्टेज प्राप्त करने के लिए एक बाधक का प्रयोग किया गया है। बाधक के स्थान पर किसी अन्य रुकावट (इंडक्टेंस अथवा ट्रान्सफॉर्मर) का भी उपयोग किया जा सकता है। इस प्रकार प्रयुक्त बाधक अथवा अन्य कोई रुकावट 'जोड़ने वाली रुकावट' (coupling impedance) कहलाती है। इसके इस नाम का कारण यह है कि इसके द्वारा इस वर्धक से आगे के भाग जोड़े जाते हैं।

वर्धकों का वर्गीकरण—वर्धकों का वर्गीकरण उनके उपयोग के आधार पर कई प्रकार से किया जा सकता है। इनमें से वाल्व लहर के कितने भाग का वर्धन करता है इस आधार पर आधारित वर्गीकरण मुख्य है। इस वर्गीकरण में श्रेणी 'अ' (class A) 'ब' (class B) तथा 'स'(class C) यह तीन भाग किये जाते हैं।

श्रेणी 'अ'—के वर्धक में इतनी स्थायी ऋण वोल्टेज ग्रिड पर दी जाती है कि वाल्व में होकर धारा सब समय बहती रहती है। सब समय धारा बहने के कारण इस प्रकार के वर्धक में दी हुई डी० सी० का एक छोटा-सा भाग ही उपयोग में आता है परन्तु लहर ज्यों की त्यों वर्धित हो जाती है।

श्रेणी 'ब'—इस प्रकार के वर्धक में ग्रिड वोल्टेज लगभग कटऑफ तक ऋण कर दी जाती है। इस कारण वाल्व में धारा केवल आधे समय ही बहती है और 'अ' श्रेणी के वर्धक की अपेक्षा डी० सी० का अधिक भाग उपयोग में आता है। इस प्रकार के वर्धक में लहर का केवल आधा भाग वर्धित होता है।

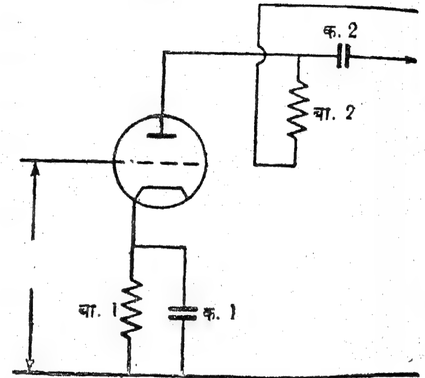
श्रेणी 'स'—इस प्रकार के वर्धक में ग्रिड वोल्टेज कट ऑफ बिन्दु से भी अधिक ऋण रखी जाती है और इस कारण वाल्व में धारा आधी से भी कम देर बहती है। इस प्रकार के वर्धक में 'ब' श्रेणी के वर्धक की अपेक्षा डी० सी० का अधिक भाग उपयोग में आता है।

ऊपर वर्णित श्रेणियों में से रेडियो में रेडियो तथा ध्वनि की लहरों के वर्धन के लिए श्रेणी 'अ' के ही वर्धक प्रयोग में आते हैं। श्रेणी 'ब' तथा 'स' के वर्धकों का ट्रान्समीटर में अधिक उपयोग होता है। यथास्थान इनका विस्तृत वर्णन किया गया है।

अन्य वर्गीकरण—ऊपर वर्णित वर्गीकरण के अतिरिक्त निम्न दो प्रकार से भी वर्गीकरण किया जा सकता है—

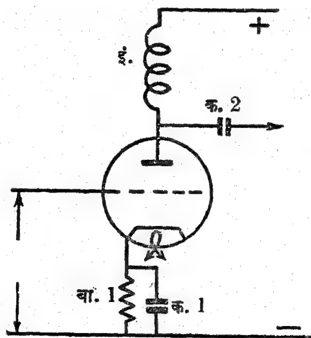
1. जोड़ने वाले भाग के आधार पर; 2. वर्धक के उपयोग पर।

इनमें से प्रथम वर्गीकरण में जोड़ने वाले भाग के आधार पर वर्गीकरण किया जाता है। इस प्रकार इसमें बाधक संयुक्त, इंडक्टेंस संयुक्त तथा ट्रान्सफॉर्मर संयुक्त वर्धक होते हैं। दूसरे वर्गीकरण में वाल्व केवल वर्धित वोल्टेज देता है अथवा अधिक शक्ति देता है। इसके आधार पर दो श्रेणियाँ होती हैं। पहली श्रेणी के वर्धक 'वोल्टेज वर्धक' (voltage amplifier) कहलाते हैं तथा दूसरी श्रेणी के 'शक्तिवर्धक' (power amplifier)। प्रायः रेडियो तथा अन्य वर्धकों में पहले कुछ वाल्वों द्वारा वोल्टेज बढ़ाई जाती है फिर अन्तिम भाग अधिक वोल्टेज के साथ अधिक धारा देता है। इस प्रकार अधिक शक्ति प्राप्त होती है। (शक्ति = धारा × वोल्टेज)। रिसीवरों में यह अन्तिम भाग आउटपुट भाग कहलाता है। नीचे वर्धकों को जोड़ने वाले भाग के आधार पर वर्णन किया गया है।



चित्र 101. बाधक संयुक्त वर्धक.

बाधक संयुक्त वर्धक—चित्र (101) में एक बाधक संयुक्त वर्धक का सरकिट दिखाया गया है। जैसा कि नाम से ही विदित है इस सरकिट में जोड़ने के लिए एक बाधक का प्रयोग किया गया है। इस प्रकार के वर्धक का वर्णन प्रकरण 10 में किया जा चुका है।

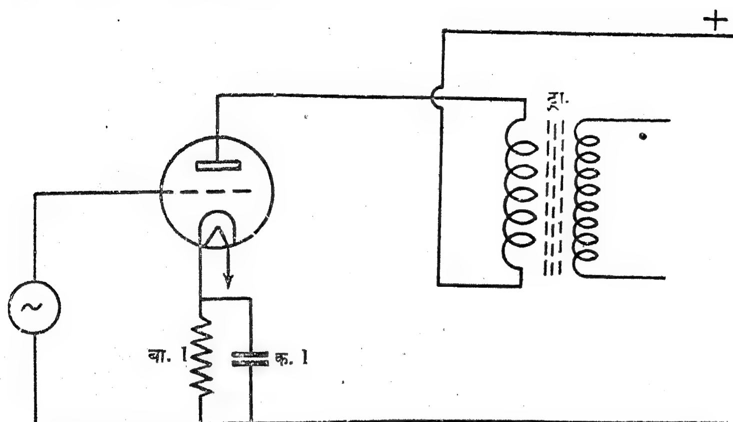


चित्र 102.
इंडक्टेंस संयुक्त वर्धक.

चित्र (102) में एक इंडक्टेंस संयुक्त वर्धक का सरकिट दिखाया गया है। इसमें और बाधक संयुक्त वर्धक में केवल इतना ही अंतर है कि बाधक के स्थान पर इंडक्टेंस का प्रयोग किया गया है।

चित्र (103) में एक ट्रांसफॉरमर संयुक्त वर्धक का सरकिट दिखाया गया है। इसमें तथा ऊपर वर्णित दो वर्धकों में इतना ही अंतर है कि इसमें जोड़ने के लिए एक ट्रांस-

फॉरमर का प्रयोग किया गया है। ट्रांसफॉरमर यदि स्टेप अप हो तो इससे प्राप्त वर्धन अन्य उपायों से अधिक होगा।



चित्र 103. ट्रान्सफार्मर संयुक्त वर्धक.

ग्रिड ऋण रखने के लिए प्रबंध (biasing)—रेडियो (ग्राहक) तथा ध्वनि वर्धक इन सभी में अधिकांश वाल्व वर्ग अ वर्धक का कार्य करते हैं। जैसा कि बताया जा चुका है इन वाल्वों के इस प्रकार कार्य करने के लिए ग्रिड ऋण होनी चाहिए। इस ऋण वोल्टेज के दो लाभ होते हैं।

1. वाल्व की ग्रिड ऋण होने के कारण ग्रिड इलैक्ट्रोनों को नहीं खींचती। इस कारण वर्धित की जाने वाली वोल्टेज में से बहुत कम शक्ति की आवश्यकता होती है।

2. वर्ग 'अ' के वर्धकों में वाल्व की ग्रिड केवल इतनी ऋण की जाती है कि वाल्व करक्टरस्टिक कर्व के केवल सीधे भाग पर ही कार्य करे। ऐसा होने से वर्धित की जाने वाली वोल्टेज जैसी की तैसी वर्धित हो जाती है।

वर्धकों में ग्रिड ऋण करने के लिए अलग बैटरी काम में लाई जा सकती है, परन्तु बिजली से चलने वाले रेडियो आदि में अलग बैटरी का प्रयोग असुविधाजनक होता है। अतः अधिकतर वर्धकों में ग्रिड को ऋण करने के लिए चित्र (101) में दिखाया गया प्रबंध काम में लाया जाता है।

चित्र 101 में दिखाये गये सरकिट में वाल्व के कैथोड और ऋण विद्युत छोर के बीच एक बाधक और इसके समानान्तर एक कन्डेन्सर लगाया गया है। वाल्व में होकर जाने वाली धारा इस बाधक में होकर जावेगी। बाधक में होकर वाल्व

की धारा जाने के कारण इस बाधक के दोनों सिरों के बीच में कुछ वोल्टेज होगी। यह वोल्टेज इस बाधक के अर्घ और उसमें होकर बहने वाली धारा के गुणनफल के बराबर होगी (वो.=धारा×बाधा)। इसके अतिरिक्त कैथोड इस बाधक के दूसरे सिरे की अपेक्षा धन होगा। प्रत्येक सरकिट में ग्रिड एक बाधक द्वारा ऋण विद्युत सिरे पर जोड़ दी जाती है। यह बाधक ग्रिड लीक बाधक कहलाता है। इस प्रकार ग्रिड कैथोड की अपेक्षा ऋण रहती है। ग्रिड की यह ऋण वोल्टेज कैथोड में लगाये गये बाधक के अर्घ पर निर्भर करती है। वर्धित होने वाली वोल्टेज समानान्तर लगाये गये कन्डेन्सर में होकर चली जाती है। यह कंडेंसर डी. सी. पर काई प्रभाव नहीं डालता परन्तु इसके कारण वर्धित की जाने वाली वोल्टेज को बाधक में होकर नहीं जाना पड़ता है।

ऊपर वर्णित बाधक और कंडेंसर प्रायः प्रत्येक वर्धक में काम में लाये जाते हैं। इस प्रकार प्रयुक्त बाधक, बाईसिंग बाधक (biasing) और कंडेंसर बाई पास कंडेंसर (by pass) कहलाता है।

चित्र 101 में दिखाये गये सरकिट में विभिन्न भागों का कार्य निम्नानुसार है—

वाल्व	वर्द्धक
बा. 1.	बाइसिंग बाधक
बा. 2.	कपलिंग बाधक
क. 1.	बाई पास कंडेंसर
क. 2.	यह कंडेंसर डी. सी. को रोकता है परन्तु

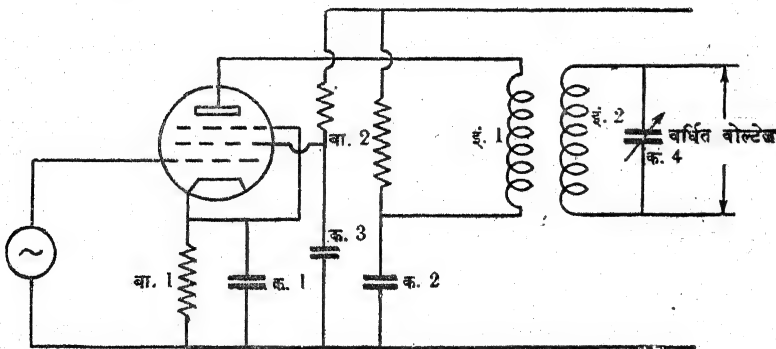
वर्धित की जाने वाली ए. सी. इसमें होकर अगले वाल्व की ग्रिड पर पहुँच जाती है।

तुलनात्मक विवेचन—नीचे बाधक इंडक्टेंस तथा ट्रांसफॉर्मर द्वारा जुड़े हुए वर्धकों की तुलना की गई है।

बाधक संयुक्त	**इंडक्टेंस संयुक्त**	**ट्रांसफॉर्मर संयुक्त**
1. इसमें जोड़ने (coupling) के लिए बाधक का प्रयोग होता है।	इसमें जोड़ने (coupling) के लिए इंडक्टेंस का प्रयोग होता है।	इसमें जोड़ने (coupling) के लिए ट्रांसफॉर्मर का प्रयोग होता है।
2. इसके द्वारा वर्धन अन्य प्रकार के वर्धकों से कम होता है।	इसके द्वारा प्राप्त वर्धन बाधक संयुक्त वर्धक से अधिक तथा ट्रांसफार्मर संयुक्त वर्धक से कम होता है।	इसके द्वारा वर्धन सबसे अधिक होता है।

3. इसका प्रयोग प्रायः ध्वनि की लहरें वर्धन करने के लिए होता है ।	इसका प्रयोग ध्वनि की लहरें वर्धित करने के लिए होता है ।	इसका प्रयोग ध्वनि की लहरें प्रयुक्त करने के लिए होता है ।
4. इसके लिए ट्रायोड और पेंटोड दोनों वाल्व प्रयुक्त होते हैं ।	इसके लिए ट्रायोड तथा पेंटोड दोनों प्रकार के वाल्व प्रयुक्त किये जा सकते हैं ।	इसमें पेंटोड वाल्व का प्रयोग रेडियो की लहरों एवं ट्रायोड का प्रयोग ध्वनि वर्धन के लिए होता है ।

ट्यून्ड सरकिट तथा ट्यून्ड ट्रांसफॉर्मर संयुक्त वर्धक—ऊपर वर्णित तीनों ही प्रकार के वर्धक प्रमुखतः ध्वनि की लहरों के वर्धन (amplification) के लिए प्रयोग किये जाते हैं । ध्वनि वर्धन के लिए प्रायः 50 सा. प्र. से. लेकर 6000 सा. प्र. से. तक की लहरों का समान वर्धन करना आवश्यक होता है । परन्तु रेडियो लहरों के वर्धन में अपेक्षाकृत बहुत छोटे लहर समूह का वर्धन करना होता है । इसके अतिरिक्त वांछित स्टेशन को अन्य स्टेशनों से पृथक् करना भी आवश्यक होता है । इन सभी बातों को प्राप्त करने के लिए ट्यून्ड सरकिटों का प्रयोग करना पड़ता है । इसीलिए रिसीवर के रेडियो वर्धक (r. f. amplifier) में कपलिंग (coupling) के लिए ट्यून्ड सरकिटों तथा ट्यून्ड ट्रांसफार्मरों का प्रयोग किया जाता है। रेडियो लहर वर्धन के लिए पेंटोड वाल्व का प्रयोग किया जाता है । चित्र 104 में एक रेडियो लहर वर्धक का सरकिट दिखाया गया है ।



चित्र 104. ट्यून्ड ट्रांसफार्मर संयुक्त रेडियो लहर वर्धक.

इस सरकिट में वाल्व के अतिरिक्त निम्नलिखित भाग प्रयोग किये गये हैं । साथ ही साथ उनका उपयोग भी बताया गया है ।

वाल्व की सप्रेसर ग्रिड कैथोड से जुड़ी हुई है। यह प्लेट पर पहुँचने वाले इलैक्ट्रोनों (विद्युत-कणों) की गति कम करती है और इस कारण प्लेट पर से यह विद्युत कण वापिस नहीं आ सकते।

स्क्रीन ग्रिड एक बाधक के द्वारा धन विद्युत छोर से जुड़ी रहती है।

कंडेंसर तथा इंडक्टेंस मिलकर ट्यून्ड सरकिट बनाते हैं। इस ट्यून्ड सरकिट की रेज़ोनेन्ट (resonant) फ्रीक्वेंसी उस कंडेंसर की कैपेसिटी बदलने से बदली जा सकती है। यह ट्यून्ड सरकिट आगे के भागों को भी जोड़ता है(couples)।

कई वाल्व के वर्धक—एक वाल्व से एक निश्चित सीमा से अधिक वर्धन (amplification) नहीं किया जा सकता। यदि इससे अधिक वर्धन की आवश्यकता हो तो दो अथवा अधिक वाल्वों का उपयोग करना पड़ता है।

डि-कपलिंग[1] (de-coupling)—जब वर्धन के लिए एक के बाद एक इस प्रकार कई वाल्व काम में लाये जाते हैं तो यह आवश्यक हो जाता है कि प्रत्येक वाल्व की प्लेट तथा स्क्रीन पर दी जाने वाली वोल्टेजों में आपस में सम्बन्ध न हो। साधारणतः बैटरी अथवा जो भी अन्य स्रोत वाल्वों की प्लेट पर वोल्टेज देने के काम में लाया जाता है उसकी रुकावट सभी वाल्वों की प्लेट के सरकिट में होती है। इसलिए वर्धित की जाने वाली फ्रीक्वेंसी की वोल्टेज उत्पन्न होती है। सभी वाल्वों के लिए एक ही बैटरी होने के कारण यह वोल्टेज विभिन्न वाल्वों की प्लेट तथा स्क्रीन पर पहुँच जाती है। यदि कई वाल्व के वर्धक इस प्रकार काम में लाये जावें तो उस वर्धक के आस्सिलेट करने की संभावना के कारण उसका कार्य अनिश्चित हो जाता है।

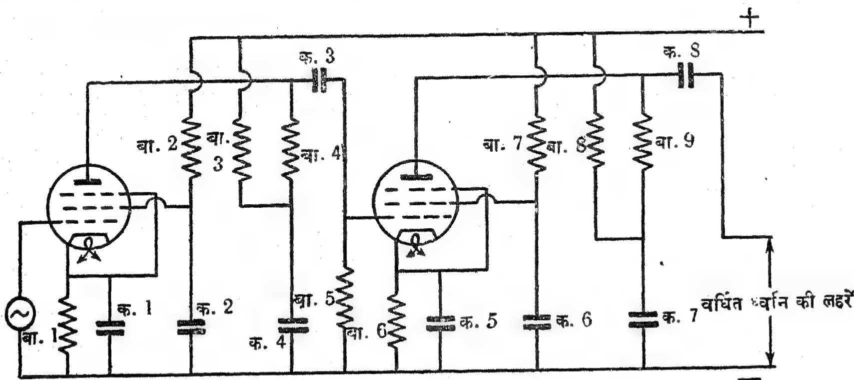
इस खराबी को दूर करने के लिये प्रत्येक वाल्व की प्लेट और स्क्रीन के लिए एक अलग बैटरी का उपयोग किया जा सकता है। परन्तु प्रत्येक वाल्व के लिए अलग बैटरी (अथवा किसी अन्य स्रोत) का उपयोग बहुत कठिनाई देगा। इस कठिनाई को दूर करने के लिए एक उपाय यह भी है कि वर्धित की जाने वाली वोल्टेज बिभिन्न वाल्वों की प्लेट और स्क्रीन से बैटरी तक न पहुँचने पावे। वाल्वों की प्लेट एवं स्क्रीन पर, इस वोल्टेज को रोकने के लिए एक बाधक (अथवा इंडक्टेंस) और कंडेंसर का उपयोग किया जाता है। चित्र 104 में दिखाये गये सरकिट में यह उपयोग दिखाया गया है।

चित्र 104 में एक पेंटोड प्रयुक्त रेडियो फ्रीक्वेंसी वर्धक का सरकिट दिखाया

---

1. De-coupling De+Couple
Couple=जोड़ना
De=नहीं=De-coupling=अलग करना।

गया है । इस सरकिट में बाधक बा (1) तथा कंडेंसर क (1) का उपयोग वाल्व की ग्रिड के लिए ऋण वोल्टेज प्राप्त करने के लिए किया गया है। ट्यून्ड सरकिट आगे के भागों को संयुक्त करता है । बाधक बा (3) और कंडेंसर क (4) प्लेट को बैटरी से अलग करने के लिए (डिकपलिंग) के काम में लाये गये हैं । इसमें बाधक वर्धित की जाने वाली वोल्टेज को बैटरी तक पहुँचने से रोकता है । वर्धित की जाने वाली वोल्टेज ए. सी. होती है अतः यह कन्डेन्सर में होकर निकल जाती है । इस प्रकार यह वोल्टेज बैटरी तक नहीं पहुँचती अतः अस्सि-लेशन होने की संभावना नहीं रहती ।



चित्र 105. दो वाल्व प्रयुक्त बाधक संयुक्त वर्धक.

चित्र 105 में दो वाल्व प्रयुक्त बाधक संयुक्त ध्वनि वर्धक का सरकिट दिखाया गया है । इस सरकिट में प्रयुक्त विभिन्न भागों का कार्य निम्नानुसार है ।

दोनों वाल्व—वर्धक

कन्डेन्सर	क. 1.	कैथोड बाई पास प्रथम वाल्व
,,	क. 2.	स्क्रीन डिकपलर ,, ,,
,,	क. 3.	यह कंडेंसर डी. सी. को रोककर ए. सी. को अगले वाल्व की ग्रिड तक पहुँच जाने देता है ।
,,	क. 4.	प्लेट डिकपलर ,, ,,
,,	क. 5.	कैथोड बाई पास दूसरा वाल्व
,,	क. 6.	स्क्रीन डिकपलर ,, ,,
,,	क. 7.	प्लेट डिकपलर ,, ,,
,,	क. 8.	क. 8. का कार्य क. 3 का जैसा ही है ।

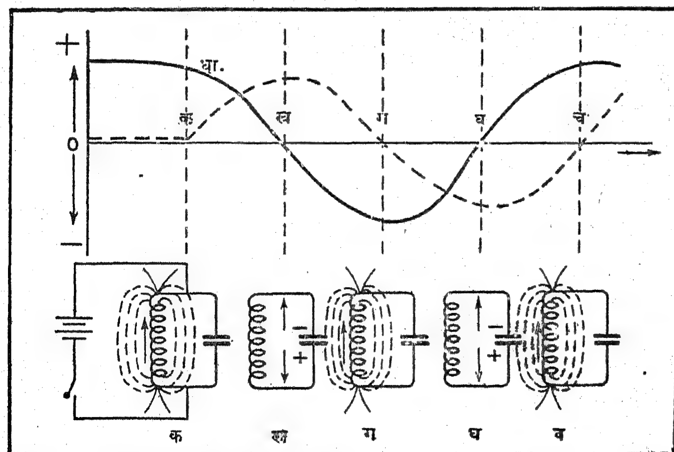
बाधक	बा. 1.	बाइसिंग बाधक	प्रथम	वाल्व
,,	बा. 2.	स्क्रीन डिकपलर	,,	,,
,,	बा. 3.	प्लेट डिकपलर	,,	,,
,,	बा. 4.	जोड़ने वाली बाधक	,,	,,
,,	बा. 5.	ग्रिड लीक	दूसरा	वाल्व
,,	बा. 6.	बाइसिंग बाधक	,,	,,
,,	बा. 7.	स्क्रीन डिकपलर	,,	,,
,,	बा. 8.	प्लेट डिकपलर	,,	,,
,,	बा. 9.	जोड़ने वाला बाधक	,,	,,

बारहवाँ प्रकरण

आस्सिलेटर (Oscillator)

ट्रांसमीटर में तथा और भी कई जगह रेडियो फ्रीक्वेंसी की विद्युत-लहरों की आवश्यकता होती है। साधारणतः ए. सी. उत्पादक (alternator) 50 सा./से. (C/S) फ्रीक्वेंसी की विद्युत देते हैं परंतु रेडियो में 100,000 सा./सें. से लेकर 30,000,000 सा./सें. तथा इससे भी अधिक फ्रीक्वेंसी की विद्युत आवश्यक होती है। इतनी अधिक फ्रीक्वेंसी की विद्युत किसी भी यांत्रिक उपाय जैसे विद्युत उत्पादक इत्यादि से उत्पन्न नहीं की जा सकती। इन फ्रीक्वेंसियों की विद्युत उत्पन्न करने के लिए ट्यून्ड सरकिट और वाल्वों का उपयोग किया जाता है। रेडियो एवं ध्वनि फ्रीक्वेंसी की लहरें उत्पन्न करने के लिए प्रयुक्त वाल्व और ट्यून्ड सरकिट का प्रबंध आस्सिलेटर कहलाता है।

आस्सिलेशन उत्पन्न करने के लिए ट्यून्ड सरकिट का प्रयोग—यदि एक समानान्तर ट्यून्ड सरकिट के सिरे किसी बैटरी से जोड़ दिये जावें तो कुछ समय बाद कंडेंसर बैटरी की वोल्टेज से चार्ज हो जावेगा और इंडक्टेंस में होकर धारा बहती रहेगी (चित्र 106)। कुछ समय बाद यदि बैटरी अलग कर दी जावे तो इंडक्टेंस में



चित्र 106. ट्यूण्ड सरकिट का आस्सिलेशन उत्पन्न करने के लिए प्रयोग.

बहने वाली धारा कम होगी। परंतु इसके साथ ही इंडक्टेंस में धारा के इस परिवतन

का विरोध करने वाली वोल्टेज पैदा होगी। इस वोल्टेज के कारण विद्युत-धारा बहती है परंतु और सब रास्ते बंद होने के कारण यह विद्युत-धारा कन्डेन्सर को ही चार्ज करती है। कुछ समय बाद इंडक्टेंस में उत्पन्न होने वाली वोल्टेज समाप्त हो जाती है परंतु इस समय तक कन्डेन्सर कुछ अधिक वोल्टेज तक चार्ज हो जाता है चित्र 106 (ख) अतः कन्डेन्सर से इंडक्टेंस में होकर धारा बहने लगती है। इस बार धारा पहले से विपरीत दिशा में बहती है चित्र 106 (ग)। कुछ समय बाद कन्डेन्सर का चार्ज समाप्त हो जाता है परंतु इंडक्टेंस में उत्पन्न वोल्टेज के कारण कंडेंसर विपरीत दिशा में चार्ज हो जाता है। इस प्रकार यह क्रिया बराबर चलती रहती है। इसके फलस्वरूप इंडक्टेंस और कन्डेन्सर के इस सरकिट में धारा की दिशा बार-बार बदलती है अतः इस सरकिट से ए. सी. उत्पन्न हो जाती है। इस प्रकार उत्पन्न ए. सी. की फ्रीक्वेंसी सरकिट की रेजोनेन्ट फ्रीक्वेंसी के बराबर होती है। यदि कॉइल की इंडक्टेंस L तथा कन्डेन्सर की कैपेसिटी C हो तो रेजोनेन्ट फ्रीक्वेंसी[1] $\frac{1}{2\pi\sqrt{LC}}$ के बराबर होगी। इंडक्टेंस और कैपेसिटी कम या अधिक लेकर सरकिट की रेजोनेन्ट फ्रीक्वेंसी भी आवश्यकतानुसार बदली जा सकती है।

यदि ऊपर वर्णित इंडक्टेंस और कन्डेन्सरों में बाधा बिल्कुल न हो तो उनमें एक बार उत्पन्न आस्सिलेशन बरावर जारी रहेंगे। परंतु प्रत्येक कॉइल में बाधा होती है इसलिए प्रत्येक आस्सिलेशन में वोल्टेज कम होती जाती है और कुछ समय बाद आस्सिलेशन समाप्त हो जाते हैं। यदि इनको बनाये रखना हो तो यह आवश्यक है कि जितनी शक्ति उस आस्सिलेटर से ली जाती है और जितनी शक्ति कॉइल, कंडेंसर और उनको जोड़ने वाले तारों में व्यय होती है वह उस सरकिट को दी जावे।

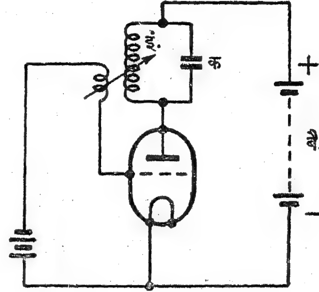
घड़ी का पैन्डुलम आस्सिलेट करती हुई वस्तु का अच्छा उदाहरण है। घड़ी में पैन्डुलम (दोलक) को चलाने के लिए यंत्र द्वारा ऐसा प्रबंध किया जाता है जिससे प्रत्येक आस्सिलेशन में एक बार शक्ति दी जा सके। यह शक्ति इस प्रकार दी जाती है कि प्रत्येक बार आस्सिलेशनों का परिमाण कुछ बढ़ जावे। विद्युत आस्सिलेटर में भी इसी प्रकार के प्रबंध की आवश्यकता होती है परंतु इसमें यंत्र द्वारा शक्ति नहीं दी जा सकती। इसमें शक्ति देने के लिए वाल्व का उपयोग किया जाता है।

चित्र 107 में वाल्व आस्सिलेटर का सिद्धान्त दिखाया गया है। इसमें वाल्व वर्धक (एम्पलीफायर) के रूप में काम में लाया गया है। इसकी प्लेट पर लगे ट्यून्ड

---

1. विशेष प्रकरण 8.

सरकिट पर प्राप्त वोल्टेज का एक अंश ग्रिड को दूसरे कॉइल द्वारा दे दिया जाता है। यह कॉइल ट्यूनिंग इंडक्टेंस के निकट रखा जाता है जिससे कि उपपादन द्वारा कुछ वोल्टेज इस पर उत्पन्न हो जाती है। इस आस्सिलेटर का कार्य निम्नानुसार समझा जा सकता है।



चित्र 107.

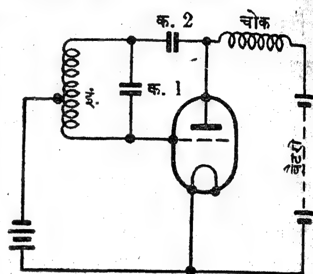
जिस समय आस्सिलेटर में विद्युत-धारा प्रारंभ की जावेगी उस समय प्लेट के ट्यून्ड सरकिट में क्षणिक आस्सिलेशन प्रारंभ हो जाते हैं। सामान्यतः कुछ समय बाद ये आस्सिलेशन समाप्त हो जाते परंतु इस सरकिट में इनका एक अंश काइलों की पारस्परिक उपपादन द्वारा ग्रिड को वापिस दे दिया जाता है। वाल्व इसका वर्धन करता है और यह वर्धित अंश प्लेट पर लगाये गये ट्यून्ड सरकिट में आस्सि-लेशनों का परिमाण बढ़ाता है। इसके फलस्वरूप ग्रिड पर कुछ अधिक वोल्टेज पहुँचती है और प्लेट के ट्यून्ड सरकिट की वोल्टेज कुछ और बढ़ती है। ऊपर वर्णित क्रिया से ग्रिड पर दी जाने वाली वोल्टेज एक निश्चित वोल्टेज तक पहुँच जाती है और वाल्व आस्सिलेट करता रहता है। आस्सिलेशनों का परिमाण स्थायी रहने के लिए यह आवश्यक है कि ग्रिड पर वापिस दी जाने वाली शक्ति, कॉइलों की बाधा के कारण व्यय होने वाली शक्ति के बराबर हो। यदि वापिस दी जाने वाली शक्ति इससे अधिक होगी तो आस्सिलेशनों का परिमाण बढ़ेगा और यदि कम होगी तो परिमाण कम होगा।

ऊपर के वर्णन के अनुसार आस्सिलेटर में एक ट्यून्ड सरकिट और प्लेट से ग्रिड पर कुछ वोल्टेज वापिस देने का प्रबन्ध आवश्यक है। इसके साथ ही यह भी आवश्यक है कि ग्रिड को वापिस दी जाने वाली वोल्टेज इस प्रकार दी जावे कि वर्धन के पश्चात वह प्लेट की वोल्टेज को बढ़ाये। यदि चित्र (107) के सरकिट में ग्रिड पर लगाई गई इंडक्टेंस, के दोनों तार बदलकर लगा दिये जावें अर्थात् ग्रिड का तार बैटरी पर और बैटरी का तार ग्रिड पर लगा दिया जावे तो आस्सिलेशन प्रारम्भ ही नहीं होंगे।

विभिन्न आस्सिलेटर सरकिट—ऊपर वर्णित सिद्धान्त पर अनेकों सरकिटों का विकास किया जा चुका है। सिद्धांततः वे सभी समान हैं परंतु वोल्टेज का अंश वापिस देने के प्रबंधों में कुछ अंतर है। इनमें से कुछ प्रमुख सरकिटों का वर्णन यहाँ दिया गया है।

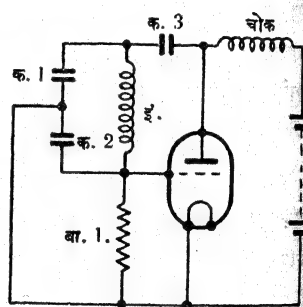
हार्टले आस्सिलेटर—चित्र 108 में हार्टले (Hartley) आस्सिलेटर का

सरकिट दिखाया गया है। इसमें ट्यून्ड सरकिट प्लेट और ग्रिड के बीच में लगाया गया है। ग्रिड पर वोल्टेज का अंश देने के लिए इंडक्टेंस का एक भाग फिलामेंट (अथवा कैथोड) से जोड़ दिया गया है। इसके कारण ट्यून्ड सरकिट पर उत्पन्न वोल्टेज का एक अंश ग्रिड और फिलामेंट के बीच में मिल जाता है। यह वर्धित होकर ट्यून्ड सरकिट की वोल्टेज बढ़ाता है और फिर ग्रिड की वोल्टेज बढ़ जाती है। इस प्रकार वाल्व आस्सिलेट करने लगता है। इसमें प्रयुक्त कन्डेन्सर क.2 बैटरी की वोल्टेज को ग्रिड पर नहीं पहुँचने देता। चोक में होकर डी. सी. प्लेट पर पहुँचती है। चोक प्लेट पर उत्पन्न ए. सी. वोल्टेज को बैटरी द्वारा शार्ट नहीं होने देती।



चित्र 108.
हार्टले आस्सिलेटर.

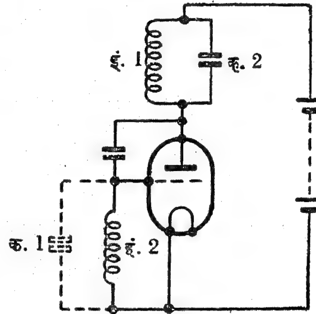
इस सरकिट में डी. सी. वोल्टेज ट्यून्ड सरकिट के समानान्तर (शंट) चोक लगाकर दी जाती है अतः यह शंट (समानान्तर) फीड सरकिट कहलाता है। यह डी. सी. वोल्टेज समानान्तर के स्थान पर श्रेणीबद्ध भी दी जा सकती है। उस स्थिति में ग्रिड की बैटरी पर लगाया गया सिरा प्लेट की बैटरी पर लगाया जाता है और कन्डेन्सर क. 2 ग्रिड और ट्यून्ड सरकिट के बीच में आ जाता है। इसके अतिरिक्त ग्रिड से अधिक बाधा का एक बाधक फिलामेंट से जोड़ दिया जाता है। इस सरकिट में चोक आवश्यक नहीं रहती। इस वर्णन के आधार पर पाठक स्वयं सरकिट बना सकते हैं।



चित्र 109.
कालपिट आस्सिलेटर.

कालपिट आस्सिलेटर—चित्र 109 में कालपिट के आस्सिलेटर (Colpitts oscillator) का सरकिट दिखाया गया है। यह हार्टले सर्किट के ही समान है। केवल ग्रिड पर देने के लिए वोल्टेज इंडक्टेंस के एक भाग के स्थान पर कन्डेन्सर को दो भागों में बाँटकर एक भाग से प्राप्त की जाती है। इस प्रकार प्रस्तुत सरकिट में यह वोल्टेज क-2 से प्राप्त की जाती है। इस सरकिट की रेजोनेन्ट फ्रीक्वेंसी क. 1 और क. 2, जो कि श्रेणीबद्ध हैं, की सम्मिलित कैपेसिटी एवं इं, की इन्डक्टेंस इन दोनों पर निर्भर करती है।

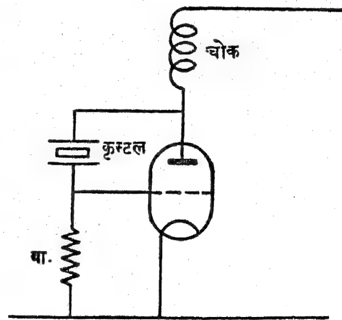
ट्यून्ड प्लेट ट्यून्ड ग्रिड आस्सिलेटर—चित्र (110) में ट्यून्ड प्लेट ट्यून्ड ग्रिड आस्सिलेटर का सरकिट दिखाया गया है। इसमें प्लेट और ग्रिड दोनों ही सरकिट ट्यून्ड रहते हैं। ग्रिड पर वोल्टेज प्लेट और ग्रिड के बीच की कैपेसिटी से दी जाती है। यदि यह कैपेसिटी अपर्याप्त हो तो प्लेट और ग्रिड के बीच एक कम अर्घ का कन्डेन्सर भी लगाया जा सकता है। चित्र में यह कन्डेन्सर दिखाया गया है।



चित्र 110.

आस्सिलेटर की फ्रीक्वेंसी में परिवर्तन—बहुत से स्थानों पर भिन्न-भिन्न फ्रीक्वेंसियों की आवश्यकता होती है। इन कार्यों के लिए प्रयुक्त आस्सिलेटरों की फ्रीक्वेंसी बदलना आवश्यक है। इसके लिए ट्यून्ड सरकिट में वैरियेबिल (परिवर्तनशील) कन्डेन्सर प्रयोग किये जाते हैं।

फ्रीक्वेंसी स्थायी रखना—ट्रांसमीटर तथा और भी अनेकों यंत्रों में आस्सिलेटर की फ्रीक्वेंसी स्थायी रहना आवश्यक है। जैसा कि बताया जा चुका है कि आस्सिलेटर की फ्रीक्वेंसी लगभग ट्यून्ड सरकिट की रेजोनेन्ट फ्रीक्वेंसी के बराबर होती है। तापक्रम तथा वोल्टेज बदलने पर यह फ्रीक्वेंसी बदल जावेगी। फ्रीक्वेंसी को इस परिवर्तन से बचाने के लिए विशेष सरकिटों के प्रयोग के साथ-साथ इस प्रकार के इंडक्टेंस और कन्डेन्सरों का भी प्रयोग किया जाता है जिनका अर्घ तापक्रम बदलने पर बहुत कम बदले। इसके साथ ही ट्यून्ड सरकिट को स्थायी तापक्रम के बक्से में भी बन्द किया जा सकता है। बहुत से स्थानों पर ट्यून्ड सरकिट के स्थान पर कृस्टल[1] का भी प्रयोग किया जाता है।



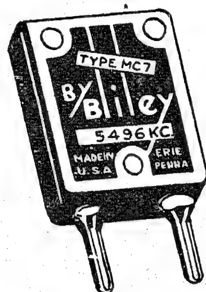
चित्र 111.
कृस्टल आस्सिलेटर.

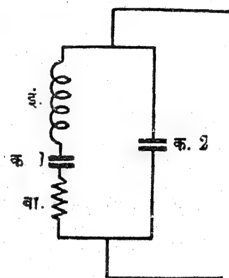
कृस्टल आस्सिलेटर—चित्र 111 में कृस्टल आस्सिलेटर का सरकिट दिखाया गया है। कृस्टल प्लेट और ग्रिड के बीच में लगाया गया

---

1. यह कृस्टल डिटेक्शन के लिए प्रयुक्त कृस्टलों से बिल्कुल भिन्न हैं। यह स्फटिक (quartz) को काटकर पतली प्लेटों के आकार में बनाये जाते हैं। यह प्लेटें विशेष प्रकार के आवरणों (होल्डर) में बंद की जाती हैं।

है। कृस्टल वस्तुतः ट्न्यूड सरकिट के ही समान व्यवहार करता है। चित्र 112 में होल्डर में बन्द कृस्टल और उसका समकक्ष (equivalent) सरक्टि दिखाया गया है। कृस्टल आस्सिलेटरों की फ्रीक्वेंसी बहुत स्थायी होती है।





चित्र 112. कृस्टल और उसके समकक्ष सरकिट.

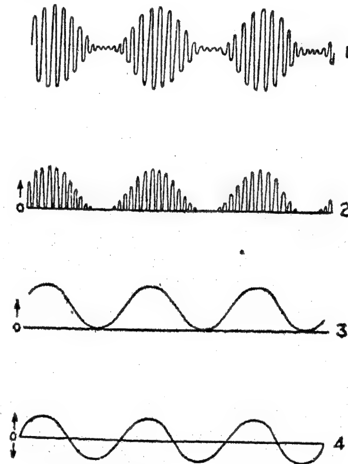
आसिसलेटर—ट्रांसमीटर, सुपर हैट्रोडाइन रेडियो व अनेकों यंत्रों में प्रयोग किये जाते हैं। इनमें से पहले दो का वर्णन पुस्तक में यथास्थान किया गया है।

तेरहवाँ प्रकरण

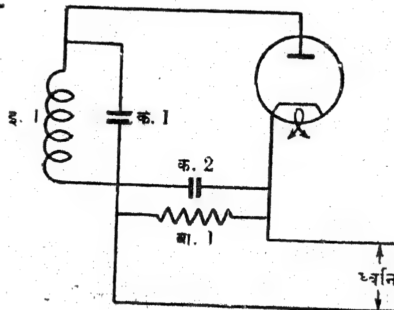
डिटेक्शन (Detection)

प्रकरण एक में बताया जा चुका है कि ग्राहक (रेडियो) द्वारा प्राप्त लहरों में ध्वनि और रेडियो की लहरें मिली हुई होती हैं। सुनने से पहिले इनमें से ध्वनि की लहरें अलग करना आवश्यक है। सम्मिलित लहरों में से ध्वनि की लहरें अलग करने की क्रिया को डिटेक्शन कहते हैं। डिटेक्शन तथा इसके लिए काम में लाये जाने वाले साधनों का प्रस्तुत प्रकरण में वर्णन किया गया है।

डिटेक्शन—प्रकरण दस में डिटेक्शन का वर्णन किया जा चुका है। डिटेक्शन द्वारा समन्वित लहर में से ध्वनि की लहरें प्राप्त की जाती हैं। समन्वित लहर में रेडियो की लहर का परिमाण (amplitude) ध्वनि की लहरों के अनुसार घटता-बढ़ता है। चित्र (113) (1) में एक समन्वित लहर दिखाई गई है। इस लहर के ऊपर तथा नीचे के दोनों भाग ध्वनि की लहरों के अनुसार घटते-बढ़ते हैं अतः इसमें से ध्वनि प्राप्त करने के लिए इसका एक ही भाग आवश्यक है। एक डायोड के प्रयोग द्वारा इसका एक भाग प्राप्त हो जाता है (2)। इस प्रकार प्राप्त लहर वस्तुतः बदलती हुई डी. सी. होती है। यह डी. सी. रेडियो तथा ध्वनि दोनों के अनुसार बदलती है। यदि इसमें से रेडियो लहर के अनुसार परिवर्तन निकाल दिया जाये तो ध्वनि प्राप्त हो जायेगी (3)। परिप्रेषण (broad casting) के लिए प्रायः 500 सहस्र साइकिल से अधिक फ्रीक्वेंसी काम में लायी जाती है तथा ध्वनि में 10 सहस्र साइकिल (10 स. सा./से.) तक की ही फ्रीक्वेंसी होती हैं अतः इन्हें सरलता से



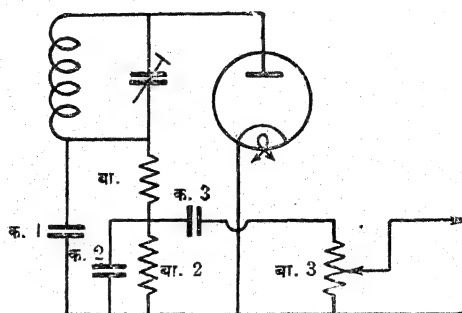
चित्र 113. डिटेक्टर का सिद्धान्त



चित्र 114. डायोड डिटेक्टर का सरल किया गया सरकिट

अलग किया जा सकता है। चित्र (114) में एक डायोड प्रयुक्त डिटेक्टर का सरकिट दिखाया गया है। इसमें इंडक्टेंस इ 1 तथा कन्डेन्सर क 1 पर रेडियो लहर प्राप्त होती हैं। डायोड वाल्व के कारण केवल इसका आधा भाग ही निकल पाता है। इसमें से क 2 में होकर रेडियो लहर निकल जाती है तथा बाधक बा 1 पर ध्वनि की लहरें प्राप्त हो जाती हैं।

उपर्युक्त डिटेक्टर सरकिट में ही कुछ परिवर्तन करके व्यवहार किया जाता है। चित्र (115) में यह परिवर्तित सरकिट सिखाया गया है।



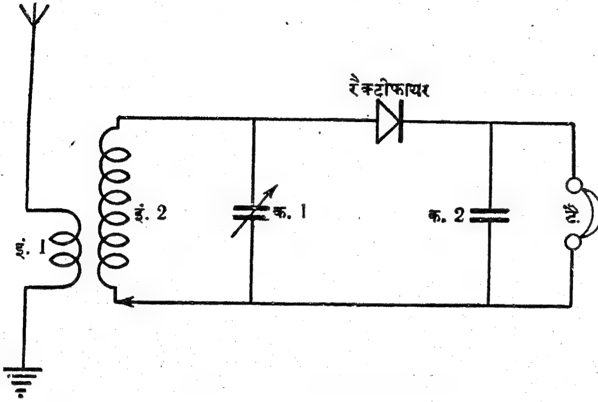
चित्र 115. डायोड डिटेक्टर का सरकिट.

यद्यपि इसका भी सिद्धान्त वही है परन्तु इसमें रेडियो लहर अधिक प्रभावी रूप से अलग हो जाती हैं। वस्तुतः इसमें बाधक बा. तथा कन्डेन्सर क. 1 और क. 2 मिलकर रेडियो फ्रीक्वेंसी की लहरों को अलग कर देते हैं। यह प्रबंध एक कन्डेन्सर की अपेक्षा अधिक प्रभावी रहता है। क. 3 डी. सी. को रोकता है और ध्वनि फ्रीक्वेंसी इसमें होकर बा. 3 पर पहूँच जाती हैं। बा. 3 ध्वनि नियंत्रक है।

ऊपर डिटेक्शन के लिए डायोड वाल्व का वर्णन किया जा चुका है। डायोड के अतिरिक्त कृस्टल तथा ट्रायोड वाल्व द्वारा भी डिटेक्शन किया जा सकता है। नीचे के वर्णन में इनमें से प्रत्येक के द्वारा किस प्रकार डिटेक्शन किया जाता है यह बताया गया है।

कृस्टल डिटेक्टर—चित्र (116) में कृस्टल डिटेक्टर का चित्र दिखाया गया है। कृस्टल में एक गैलीना के टुकड़े पर नोकदार तार का टुकड़ा लगा रहता है। इस कृस्टल में एक विशेषता यह रहती है कि इसमें महीन तार से होकर कृस्टल में धारा सरलता से गुजर जाती है परन्तु इसकी विपरीत दिशा में होकर नहीं गुजर

सकती इसलिए यह कृस्टल भी डायोड के सामान ही व्यवहार करता है। चित्र 116 के सरकिट में एरियल द्वारा प्राप्त संदेश इंडक्टेंस इ 2 में पहुँच जाते हैं। इ 2 पर प्राप्त

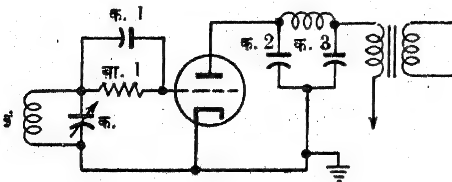


चित्र 116. कृस्टल डिटेक्टर

रेडियो लहर कृस्टल में होकर हैडफोन को दे दी जाती है। कृस्टल में से केवल एक ही दिशा में धारा जाने के कारण आधी लहर कट जायेगी। कंडेन्सर क. 2 में होकर रेडियो लहर निकल जायेगी और इस प्रकार हैडफोन के सिरों पर ध्वनि की लहरें मिल जायेंगी।

ट्रायोड वाल्व का डिटेक्शन के लिए प्रयोग

ग्रिडलीक डिटेक्टर (gridleak detector)—प्रारंभ में डिटेक्शन के लिये कृस्टल का प्रयोग किया गया था। यद्यपि डायोड तथा कृस्टल एक ही प्रकार से डिटेक्ट करते हैं परन्तु कृस्टल के उपरान्त ट्रायोड वाल्व डिटेक्शन के लिए प्रयुक्त



चित्र 117. ग्रिडलीक डिटेक्टर,

किये गये। डायोड बाद में प्रयुक्त हुए। चित्र (117) में एक ट्रायोड डिटेक्टर का सरकिट दिखाया गया है। इस सरकिट में ध्वनि की लहर ग्रिड सरकिट में लगाये

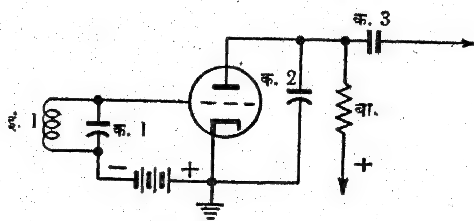
गये बाधक पर प्राप्त होती हैं। ग्रिड पर आये हुए इलक्ट्रोन इस बाधक में होकर जाते हैं, अतः यह ग्रिडलीक डिटेक्टर कहलाता है।

इस सरकिट में ग्रिड तथा फिलामेंट डायोड की प्लेट तथा फिलामेंट का जैसा व्यवहार करते हैं। वस्तुतः ग्रिड और फिलामेंट का डिटेक्टिंग सरकिट चित्र (114) में दिखाये गये डायोड डिटेक्टर का जैसा ही है। जब इस वाल्व की ग्रिड पर कुछ इलेक्ट्रोन आ जायेंगे तो यह इलक्ट्रोन ग्रिड पर लगाये हुए बाधक में होकर जाते हैं परन्तु ग्रिड पर लगाये हुए बाधक की बाधा अधिक होने के कारण (प्रायः 2 से 10 मैगा ओहम बाधा के बाधक ग्रिड में लगाये जाते हैं) रेडियो लहर के ऋण भाग में वोल्टेज का परिमाण रेडियो लहर के परिमाण के साथ घटता-बढ़ता है। रेडियो लहर भेजी जाने वाली ध्वनि लहरों के अनुसार घटती-बढ़ती है अतः ग्रिड की वोल्टेज भी ध्वनि की लहरों के अनुसार घटती-बढ़ती है।

अब उपर्युक्त सरकिट का एक वर्धक के रूप में विचार किया जा सकता है। ग्रिड पर एक ए. सी. लहर है जो कि ठीक वैसी ही है जैसी कि प्रेषक द्वारा रेडियो लहर में समन्वित की गई थी। ट्रायोड वाल्व इस लहर का वर्धन कर देता है।

इस प्रकार का डिटेक्टर बहुत कम वोल्टेज की लहर को भी डिटेक्ट कर सकता है, क्योंकि इसमें डिटेक्शन तथा वर्धन दोनों ही संपन्न किये जाते हैं। परन्तु इस प्रकार के डिटेक्टर में एक दोष यह है कि यह अधिक वोल्टेज के सिगनल को ठीक प्रकार डिटेक्ट नहीं कर सकता।

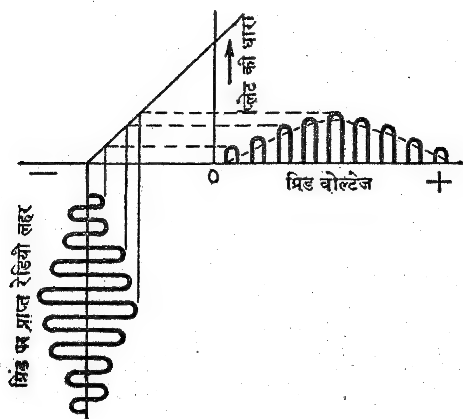
उपर्युक्त सरकिट के अतिरिक्त एक अन्य सरकिट में भी ट्रायोड वाल्व डिटेक्ट कर सकता है। चित्र (118) में यह दिखाया गया है। इस सरकिट में बैटरी द्वारा ग्रिड की वोल्टेज कट ऑफ़ विन्दु तक ऋण कर दी जाती है। इस कारण



चित्र 118. ऋणग्रिड ट्रायोड डिटेक्टर

इस वाल्व में होकर धारा उसी समय बहेगी जब कि ग्रिड धन हो। इस प्रकार इस वाल्व द्वारा भी डिटेक्शन हो जाता है। इस डिटेक्टर का यह कार्य चित्र (119) में दिखाया गया है। डिटेक्शन के साथ-साथ यह लहर वर्धित भी हो

जाती है। इस प्रकार का डिटेक्टर बड़े परिमाण की लहर भी डिटेक्ट कर सकता है।



चित्र 119. ऋणग्रिड ट्रायोड डिटेक्टर का सिद्धान्त

ऊपर के वर्णन में विभिन्न प्रकार के डिटेक्टरों का वर्णन किया गया है। आजकल डिटेक्शन के लिए प्रायः डायोड वाल्व ही प्रयुक्त किये जाते हैं। डायोड वाल्व का डिटेक्शन के लिए पसंद किये जाने का कारण यह है कि अन्य डिटेक्टरों की अपेक्षा डायोड वाल्व आवाज़ को अच्छी रखता है। हाल में ही एक नये प्रकार का कृस्टल डिटेक्टर बनाया गया है। इनमें जरमेनियम कृस्टल का प्रयोग किया जाता है। इस प्रकार का कृस्टल गैलीना कृस्टल की अपेक्षा बहुत उपयोगी है। यद्यपि कीमत अधिक होने के कारण इस प्रकार के कृस्टल अभी अधिक उपयोग में नहीं आते हैं परन्तु भविष्य में विकास होने पर इनका अधिक उपयोग संभव है।

चौदहवाँ प्रकरण

रेडियो रिसीवर

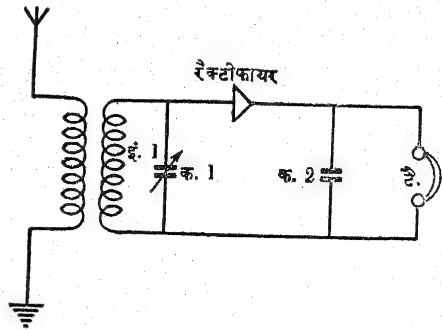
(Radio Receiver)

प्रथम प्रकरण में रेडियो की प्रमुख आवश्यकताओं का वर्णन किया जा चुका है। संक्षेप में रेडियो में निम्न गुणों का होना आवश्यक है—

1. अनेक स्टेशनों में से वांछित स्टेशन छाँटना।
2. यदि आवश्यक हो तो छाँटी हुई लहर का वर्धन करना।
3. छाँटी हुई लहर को डिटेक्ट करना।
4. डिटेक्शन से प्राप्त ध्वनि की लहर को ध्वनि में बदलना।

रेडियो में छाँटने की शक्ति टयून्ड सरकिटों के प्रयोग से प्राप्त की जाती है। वर्धन तथा डिटेक्शन के लिए वाल्वों का उपयोग किया जाता है। लाउडस्पीकर प्राप्त ध्वनि की लहरों को ध्वनि में बदल देता है। कहीं-कहीं पर लाउडस्पीकर के स्थान पर हैडफोन का भी प्रयोग किया जाता है। रेडियो में उपर्युक्त विभिन्न भागों का वर्णन पिछले प्रकरणों में किया जा चुका है। प्रस्तुत प्रकरण में यह बताया गया है कि वे सब मिलकर किस प्रकार रेडियो बनाते हैं।

क्रस्टल रेडियो—चित्र 120 में एक क्रस्टल रिसीवर का सरकिट दिखाया गया है। यह सबसे सरल रेडियो है। इसमें एरियल संदेश प्राप्त करता है। कन्डेन्सर **क 1** इंडक्टेंस **इ 1** को टयून करता है। जिस फ्रीक्वेंसी पर यह टयून्ड होते हैं उसी फ्रीक्वेंसी का स्टेशन इस पर प्राप्त होगा। इसमें केवल प्राप्त लहरों का डिटेक्शन[1] किया जाता है। डिटेक्शन द्वारा प्राप्त ध्वनि की लहरें हैडफोन को दे दी जाती हैं। हैडफोन इन लहरों को ध्वनि



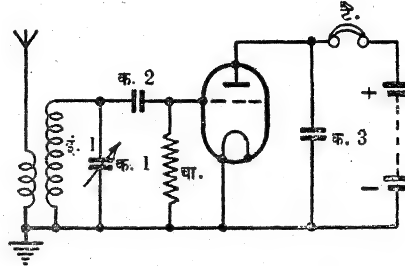
चित्र 120. क्रस्टल रेडियो.

---

1 डिटेक्शन के लिए इस सरकिट का वर्णन प्रकरण (13) में किया जा चुका है।

में बदल देता है। इस रिसीवर में लहरों का वर्धन नहीं किया जाता अतः इसके द्वारा केवल स्थानीय स्टेशन ही प्राप्त किये जा सकते हैं।

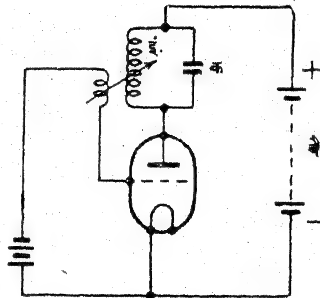
एक वाल्व का रिसीवर—चित्र 121 में एक वाल्व के रिसीवर का सरकिट दिखाया गया है। वस्तुतः यह ट्रायोड डिटेक्टर[1] का ही सरकिट है इसमें भी क. 1, इ. 1 को ट्यून करता है। यह ट्यून्ड सरकिट वांछित स्टेशन छांटता है। ट्रायोड वाल्व प्राप्त समन्वित रेडियो लहरों को डिटेक्ट करता है और डिटेक्शन से प्राप्त लहरें वर्धित करके हैडफोन को दे दी जाती है।



चित्र 121. एक वाल्व का रेडियो.

रिएक्शन रिसीवर
(reaction receiver)

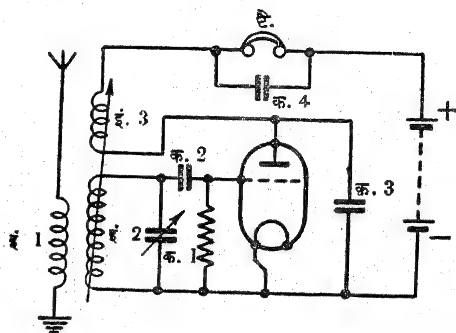
रिएक्शन—सामान्यतः वर्धक वाल्व की ग्रिड पर दी हुई वोल्टेज का वर्धन करता है। यदि वर्धन से प्राप्त लहर का एक भाग, प्लेट से फिर ग्रिड पर वापस दे दिया जाय तो उस वाल्व का वर्धन बहुत बढ़ सकता है। चित्र 122 में इस प्रकार अधिक वर्धन प्राप्त करने के लिए प्रयुक्त सरकिट दिखाया गया है। यदि इस सरकिट की तुलना प्रकरण (12) के चित्र (107) से की जाय तो दोनों की समानता स्पष्ट दिखाई देगी। वास्तव में यह सरकिट एक ऑस्सिलेटर का सरकिट है। इसमें ऑस्सिलेशन बनाये रखने के लिए प्लेट से कुछ वोल्टेज इ1 और इ. 2 के पारस्परिक उपपादन द्वारा ग्रिड पर पापिस दे दी जाती है। यह वोल्टेज वर्धित होकर फिर प्लेट पर पहुँच जाती है। यदि प्लेट से ग्रिड पर वापिस दी जाने वाली वोल्टेज किसी युक्ति[2] से धीरे-धीरे कम की जाय तो एक स्थिति ऐसी आयेगी कि वाल्व ऑस्सिलेट नहीं करेगा। जैसा कि प्रकरण (12) में बताया गया है कि जितनी शक्ति ग्रिड सरकिट में नष्ट होती है उतनी शक्ति यदि ग्रिड पर वापिस दी जाय तो वाल्व ऑस्सिलेटर करता रहेगा। यदि वापिस दी हुई शक्ति इससे कम होगी तो वाल्व ऑस्सिलेट नहीं करेगा परन्तु इस



चित्र 122. रिएक्शन.

1. ग्रिडलीक डिटेक्टर।
2. इ. 2 और इ. 3 का पारस्परिक उपपादन कम करके वापिस दी जाने वाली वोल्टेज कम की जा सकती है।

अवस्था में वाल्व का वर्धन बहुत बढ़ जायगा । वर्धन बढ़ने का कारण ग्रिड पर वापिस दी हुई वोल्टेज है । वापिस दी हुई वोल्टेज के कारण ग्रिड वोल्टेज कुछ बढ़ जाती है अतः वर्धित वोल्टेज भी बढ़ जाती है । इस वोल्टेज का एक अंश फिर ग्रिड पर पहुंच जाता है और इस कारण ग्रिड की वोल्टेज कुछ और अधिक हो जाती है। ग्रिड की वोल्टेज बढ़ने से प्लेट पर अधिक वोल्टेज प्राप्त होती है और वाल्व का वर्धन बहुत बढ़ जाता है। वाल्व के वर्धन को इस प्रकार बढ़ाने की क्रिया अंग्रेज़ी में रिएक्शन (reaction) कहलाती है।



चित्र 123. एक वाल्व के रिएक्शन रेडियो का सरकिट

चित्र 123 में एक वाल्व के रिएक्शन रिसीवर का सरकिट दिखाया गया है। रेडियो लहरें एरियल पर प्राप्त होती हैं । कन्डेन्सर क. 1 इन्डक्टेंस इ. 2 को टयून करता है । यह ट्यून्ड सरकिट वांछित स्टेशन को छांट लेता है। यह लहरें वाल्व द्वारा वर्धित तथा डिटेक्ट की जाती हैं । डिटेक्शन के लिए यह सरकिट ग्रिड-लीक डिटेक्टर का कार्य करता है।

इस प्रकार प्राप्त ध्वनि वोल्टेज हैडफोन को दे दी जाती है । इस रिसीवर का वर्धन अधिक होने के कारण इसके द्वारा वह स्टेशन भी सुने जा सकते हैं जो कि दूर होने के कारण अन्य एक वाल्व के रिसीवरों पर नहीं सुने जा सकते।

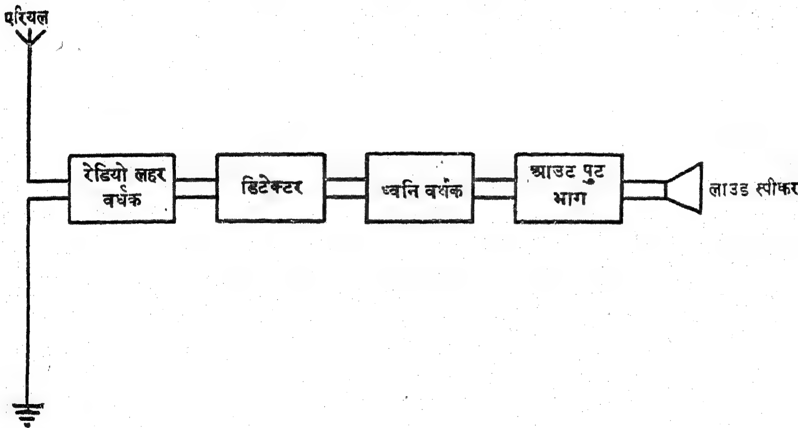
ऊपर के वर्णन से ज्ञात होगा कि रिएक्शन बहुत उपयोगी है परन्तु व्यवहार में इसका उपयोग निम्नलिखित कठिनाइयों के कारण बहुत ही कम किया जाता है।

1. रिएक्शन के कारण टयून्ड सरकिट का Q बहुत बढ़ जाता है और इस कारण उस सरकिट की छाँटने की शक्ति बहुत अधिक बढ़ जाती है । वैसे तो छाँटने की शक्ति का बढ़ना लाभ दिखाई देगा परन्तु वास्तव में ऐसा नहीं है । ध्वनि प्राप्त करने के लिए यह आवश्यक है कि रिसीवर की छाँटने की शक्ति (सैलोक्टिविटी) एक

सीमा से अधिक न हो । यदि छाँटने की शक्ति अधिक बढ़ जायगी तो ध्वनि की कुछ फ्रीक्वेंसियाँ भी प्राप्त न होंगी और इस प्रकार आवाज़ साफ़ न रहेगी ।

2. जब इस रिसीवर पर कोई स्टेशन ट्यून किया जाता है तो प्रत्येक बार रिएक्शन बदलना आवश्यक[1] होता है । यदि किसी समय रिएक्शन आवश्यकता से अधिक बढ़ गया तो वाल्व ऑसिलेट करने लगता है । यदि रिएक्शन कम हो गया तो वाल्व का वर्धन कम हो जाता है । अतः यह आवश्यक है कि रिएक्शन बिल्कुल ठीक मात्रा में हो । व्यवहार में रिएक्शन का ठीक रखना असुविधा देता है ।

सरल रेडियो (straight receivers)—ऊपर वर्णित रिसीवरों में एक ही वाल्व का उपयोग किया गया है । एक वाल्व द्वारा न तो पर्याप्त वर्धन ही किया जा सकता है और न लाउडस्पीकर के लिए प्रर्याप्त शक्ति ही मिल सकती है । इनके द्वारा, जैसा कि पहले बताया जा चुका है, केवल स्थानीय स्टेशन ही प्राप्त किये



चित्र 124. सरल रिसीवर का ब्लाक चित्र.

जा सकते हैं । दूर के स्टेशन प्राप्त करने के लिए रिसीवरों में अधिक वाल्वों का उपयोग आवश्यक है । चित्र 124 में अधिक वाल्वों के सरल रेडियो का ब्लाक चित्र (block diagram) दिखाया गया है ।

---

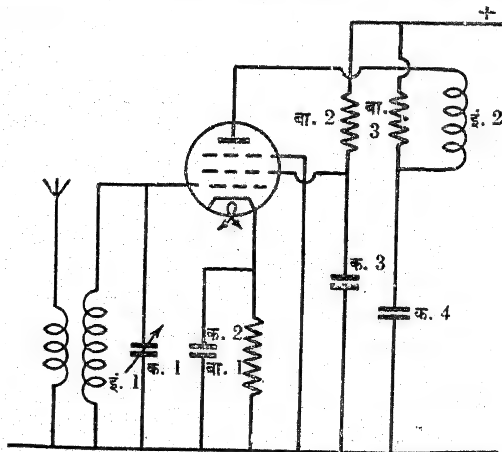
1 फ्रीक्वेंसी बदलने से रिएक्शन भी बदल जाता है । इसे ठीक करने के लिए फिर बदलना पड़ता है ।

इसमें निम्नलिखित भाग हैं—

1. रेडियो लहरवर्धक (R. F. amplifier)
2. डिटेक्टर (detector)
3. ध्वनिवर्धक (audio amplifier)
4. आउटपुट भाग (output stage)
5. लाउडस्पीकर (loudspeaker)

इसमें से प्रत्येक का वर्णन आगे किया गया है।

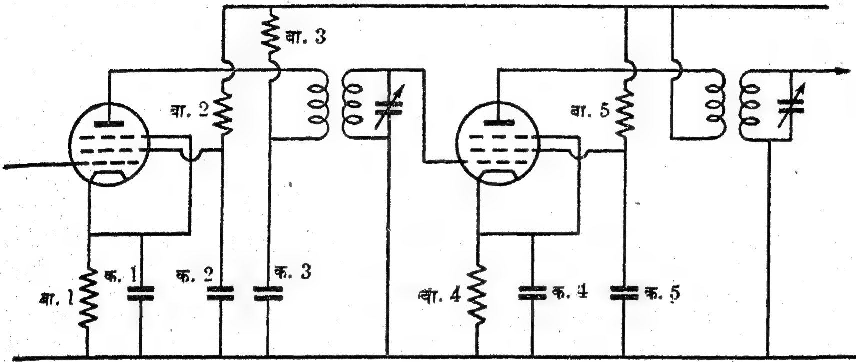
रेडियो लहर वर्धक (R. F. amplifier)—डिटेक्टर के ठीक प्रकार से कार्य करने के लिए एक निश्चित सीमा से अधिक वोल्टेज आवश्यक है। यदि इससे कम वोल्टेज मिले तो डिटेक्टर अच्छी तरह कार्य नहीं कर सकता। प्रायः रेडियो के एरियल पर प्राप्त लहर बहुत कम होती है इसलिए वांछित स्टेशन सुनने के लिए डिटेक्शन से पूर्व वर्धन आवश्यक है। रेडियो लहर वर्धन के लिए ट्यून्ड सरकिट और



चित्र 125. रेडियो लहर वर्धक.

पेंटोड वाल्वों का उपयोग किया जाता है। चित्र 125 में एक रेडियो लहर वर्धक का सरकिट दिखाया गया है। बहुत से रिसीवरों में रेडियो लहर वर्धन के लिए दो अथवा तीन वाल्वों का भी प्रयोग किया जाता है। इनमें ट्यूनिंग के लिए गैंग कन्डेन्सर का प्रयोग किया जाता है। चित्र 126 में दो वाल्व के रेडियो लहर वर्धक का सरकिट दिखाया गया है।

चित्र 126 में दिखाये गये सरकिट में एक ही फ्रीक्वेंसी पर ट्यून्ड कई कॉइलों का प्रयोग किया गया है। सब कॉइलों में आपस में कैपेसिटी तथा पारस्परिक उपपादन (induction) होगा। यद्यपि यह कैपेसिटी और उपपादन (इन्डक्टेंस) साधारण



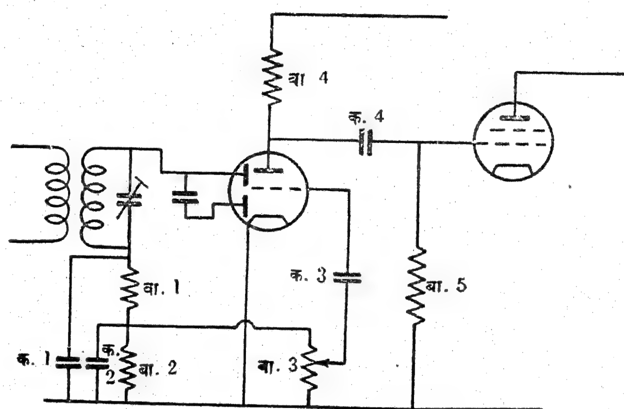
चित्र 126. दो वाल्व प्रयुक्त रेडियो लहर वर्धक.

फ्रीक्वेंसी पर कोई विशेष प्रभाव नहीं डालते परन्तु रेडियो फ्रीक्वेंसी पर यह कई प्रकार से प्रभाव डालते हैं। कॉइलों और अन्य भागों में इस कैपेसिटी और उपपादन द्वारा कपलिंग होने के कारण रेडियो लहर एक कॉइल से दूसरे कॉइल पर पहुँच सकती है इसलिए वाल्व ऑस्सिलेट कर सकते हैं। रिएक्शन रिसीवर में वर्धन बढ़ाने के लिए कुछ वोल्टेज वापिस दी गई थी परन्तु यहाँ पर इसका नियंत्रण नहीं किया जा सकता अतः कोई ऐसा उपाय आवश्यक है जिसके द्वारा इन कॉइलों आदि की पारस्परिक कैपेसिटी और उपपादन समाप्त किया जा सके।

वाल्वों के अन्तर्गत इस प्रकार के उपाय का वर्णन किया जा चुका है। वहाँ वाल्व के इलैक्ट्रोडों के बीच की कैपेसिटी कम करने के लिए स्क्रीन का उपयोग किया गया था। वही उपाय यहाँ भी काम में लाया जा सकता है। इसके लिए प्रत्येक कॉइल और वाल्व धातु के बक्से में बन्द कर दिये जाते हैं।

डिटेक्टर—डिटेक्टरों का विस्तृत वर्णन प्रकरण (12) में किया जा चुका है। आधुनिक रिसीवरों में डिटेक्शन और ध्वनि वर्धन के लिए डबल डायोड ट्रायोड अथवा डायोड ट्रायोड वाल्व काम में लाये जाते हैं।

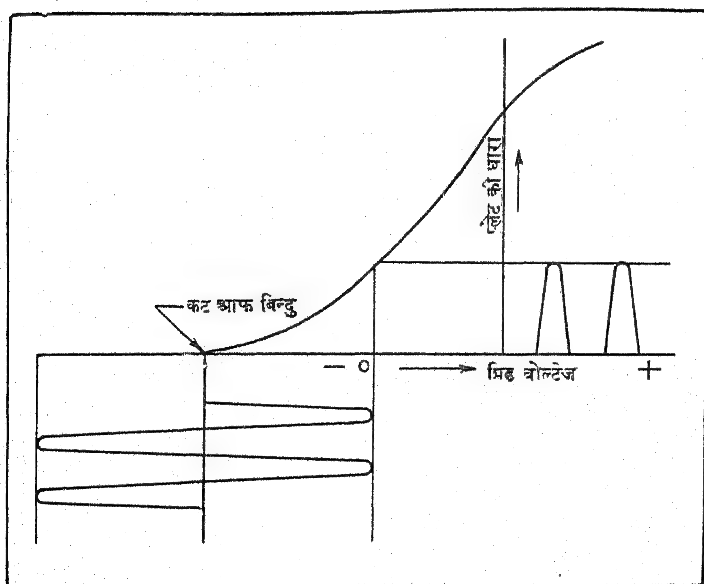
ध्वनिवर्धक—डिटेक्शन से प्राप्त ध्वनि की वोल्टेज आउटपुट वाल्व के लिए कम होती है अतः इसका वर्धन आवश्यक होता है। इस वर्धन के लिए अधिकतर बाधक संयुक्त ट्रायोड वाल्व का उपयोग किया जाता है। डिटेक्शन और ध्वनि वर्धन के लिए एक ही वाल्व का उपयोग किया जाता है। चित्र 127 में एक डायोड-ट्रायोड प्रयुक्त डिटेक्टर और ध्वनिवर्धक का सरकिट दिखाया गया है। इसमें से एक डायोड का डिटेक्शन के लिए तथा ट्रायोड का ध्वनिवर्धन के लिए उपयोग किया गया है।



चित्र 127. डिटेक्टर व ध्वनिवर्धक.

आउटपुट भाग—रिसीवर में आउटपुट से पहले के सभी भाग केवल वोल्टेज का वर्धन करते हैं। इस अन्तिम भाग को अधिक धारा भी देनी पड़ती है। इस आवश्यकता की पूर्ति के लिए ऐसे वाल्वों का उपयोग किया जाता है जो कि अधिक धारा दे सकें। प्रायः इन वाल्वों का वर्धनांश अन्य वाल्वों की अपेक्षा कम होता है। इस कार्य के लिए प्रायः बीम टैट्रोड अथवा आउटपुट पैंटोड प्रयुक्त किये जाते हैं।

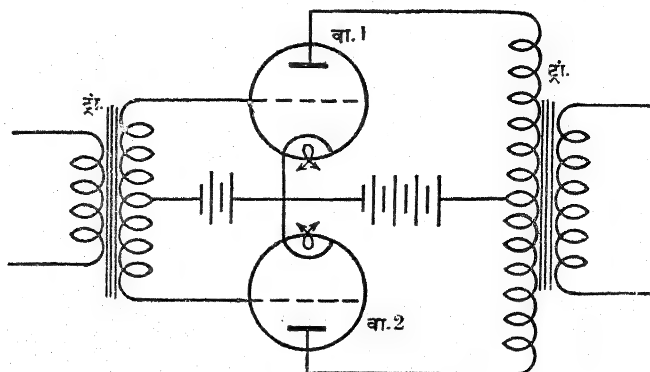
पुश पुल वर्धक (push pull amplifier)—प्रकरण ग्यारह में विभिन्न प्रकार के वर्धकों का वर्णन किया जा चुका है। रेडियो तथा ध्वनिवर्धन के लिए काम में लाये जाने वाले वर्धकों में अधिकतर वर्ग अ के वर्धक काम में लाये जाते हैं। इस प्रकार का वर्धक दी हुई डी. सी. के बहुत कम भाग को काम में ला सकता है। यदि वर्धन करने वाले वाल्व की ग्रिड कट ऑफ बिन्दु तक ऋण कर दी जाये (चित्र 128)



चित्र 128. वर्ग ब. वर्धक का कार्य.

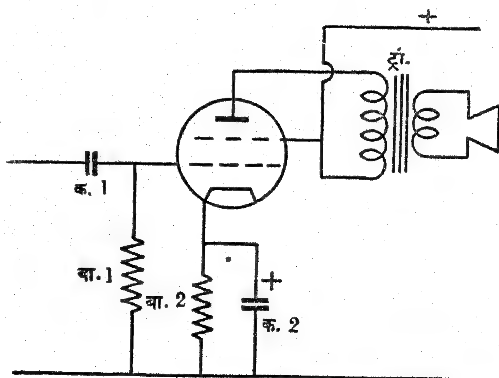
तो यह वाल्व केवल आधी लहर का वर्धन करेगा, परन्तु इस प्रबन्ध से डी. सी. का अधिक भाग काम में आ सकता है। इस प्रकार का वर्धक वर्ग ब का वर्धक कहलाता है। यह वर्धक ध्वनि लहरों के वर्धन के लिए प्रयोग में नहीं लाया जा सकता, परन्तु यदि चित्र 129 के अनुसार दो वाल्व लगा दिये जायँ तो यह ध्वनि और रेडियो

दोनों प्रकार की लहरों के वर्धन के लिए काम में लाये जा सकते हैं।



चित्र 129. पुश पुल वर्धक.

इस सरकिट में लगाया गया प्रत्येक वाल्व आधी लहर का वर्धन करता है। ऊपर का वाल्व लहर के ऊपरी हिस्से को और नीचे का नीचे के हिस्से को वर्धित करता है और इस प्रकार पूरी लहर का वर्धन हो जाता है । इस प्रकार का वर्धक पुश पुल वर्धक कहलाता है। पुश पुल वर्धक के लाभ—



चित्र 130. एक सामान्य रिसीवर के आउटपुट भाग का सरकिट.

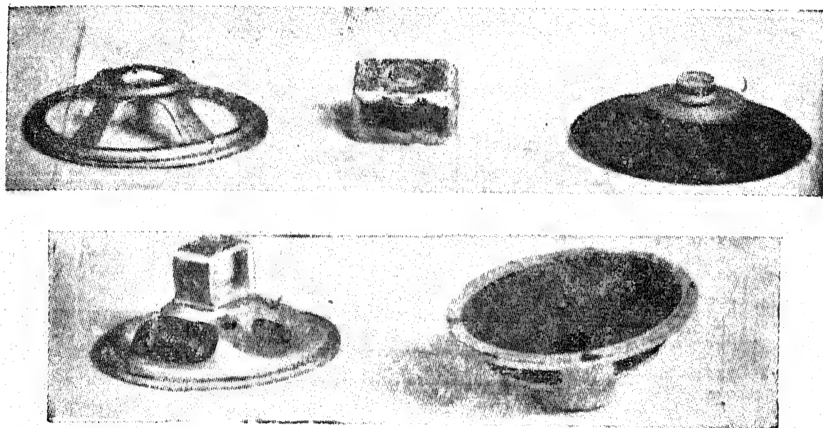
1. पुश पुल वर्धक से वर्ग ब की जितनी उपयोगी शक्ति तथा वर्ग अ के वर्धक जैसा वर्धन प्राप्त होता है। अतः इससे वर्ग अ और ब दोनों प्रकार के वर्धकों का लाभ प्राप्त होता है।

2. इस प्रकार के वर्धक में वर्धित लहर और ग्रिड पर दी हुई लहर इन दोनों में वर्ग अ से भी अधिक समानता होती है।

दो वाल्वों का प्रयोग होने के कारण इस प्रकार के वर्धक से एक वाल्व की अपेक्षा दूनी शक्ति प्राप्त की जा सकती है।

रिसीवरों में एक आउटपुट वाल्व के प्रयोग से पर्याप्त ध्वनि मिल जाती है। अतः केवल ध्वनिवर्धकों के आउटपुट भाग में तथा कुछ विशेष रिसीवरों में जहाँ अधिक ध्वनि आवश्यक होती है दो वाल्वों का पुश पुल में प्रयोग किया जाता है। चित्र 130 में एक सामान्य रिसीवर के आउटपुट भाग का सरकिट दिखाया गया है। इसमें एक वाल्व का प्रयोग किया गया है।

लाउडस्पीकर—आउटपुट भाग पर प्राप्त ध्वनि की विद्युत-लहरें एक ट्रांसफॉर्मर द्वारा लाउडस्पीकर को दे दी जाती हैं। लाउडस्पीकर उन विद्युत लहरों को ध्वनि में बदल देता है। रिसीवरों में अधिकतर मूविंग कॉइल लाउडस्पीकर का उपयोग किया जाता है। इस प्रकार के लाउडस्पीकर की रचना चित्र 131 में



चित्र 131. लाउडस्पीकर की रचना.

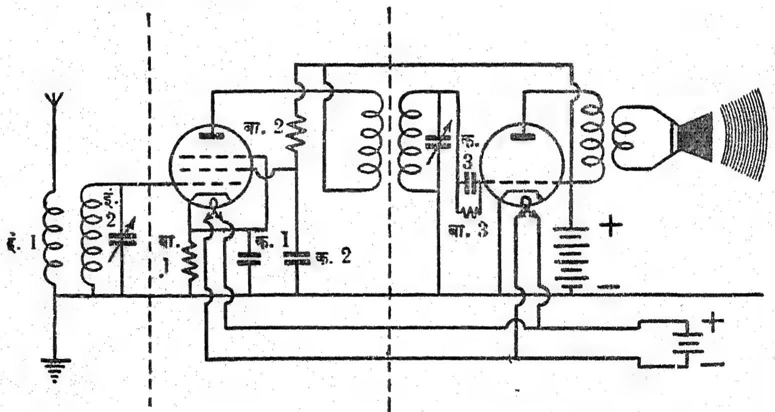
1. अल्यूमिनियम का आधार, 2. स्थायी चुम्बक, 3. कॉइल व कागज का पत्र, 4. पीछे का दृश्य, और 5. एक अन्य लाउडस्पीकर का सामने का दृश्य.

दिखाई गई है। इसमें एक शक्तिशाली चुम्बकीय क्षेत्र में एक कॉइल रहता है। चुम्बकीय क्षेत्र एक चुम्बक के द्वारा, उत्पन्न होता है। इस कॉइल के साथ एक कागज का पत्र (diaphragm) जुड़ा रहता है। जब इस कॉइल में होकर धारा

गुजरती है तो वह कॉइल कम्पन करने लगता है । उस कॉइल के कम्पन दी हुई फ्रीक्वेंसी पर निर्भर करते हैं । कागज का पत्र भी कॉइल के साथ कम्पन करता है। कम्पन करता हुआ पत्र अपने पास की वायु में लहरें उत्पन्न कर देता है । इस प्रकार ध्वनि फीक्वेंसी की विद्युत-लहरें ध्वनि में बदल जाती हैं ।

मैचिंग ट्रांसफॉर्मर—ऊपर बताया गया है कि लाउडस्पीकर को ध्वनि, आउटपुट वाल्व से एक ट्रांसफॉर्मर द्वारा दी जाती है । यह ट्रांसफॉर्मर स्टैप डाउन ट्रांसफार्मर होता है । यह वोल्टेज को कम करके लाउडस्पीकर को दे देता है । यद्यपि इसके द्वारा वोल्टेज कम की जाती है फिर भी लाउडस्पीकर पर प्राप्त शक्ति बढ़ जाती है । इसका कारण यह है कि वाल्व पर प्राप्त वोल्टेज अधिक होती है परन्तु वाल्व की रुकावट भी अधिक होती ह । लाउडस्पीकर की रुकावट कम होती है अतः अधिक शक्ति के लिए अधिक धारा आवश्यक है । मैचिंग ट्रांसफॉर्मर वोल्टेज कम करके धारा बढ़ा देता है । इस प्रकार शक्ति बढ़ जाती है । मैचिंग का विस्तृत वर्णन प्रथम परिशिष्ट में किया गया है ।

दो वाल्व का रिसीवर—चित्र 132 में दो वाल्व प्रयुक्त रेडियो रिसीवर का



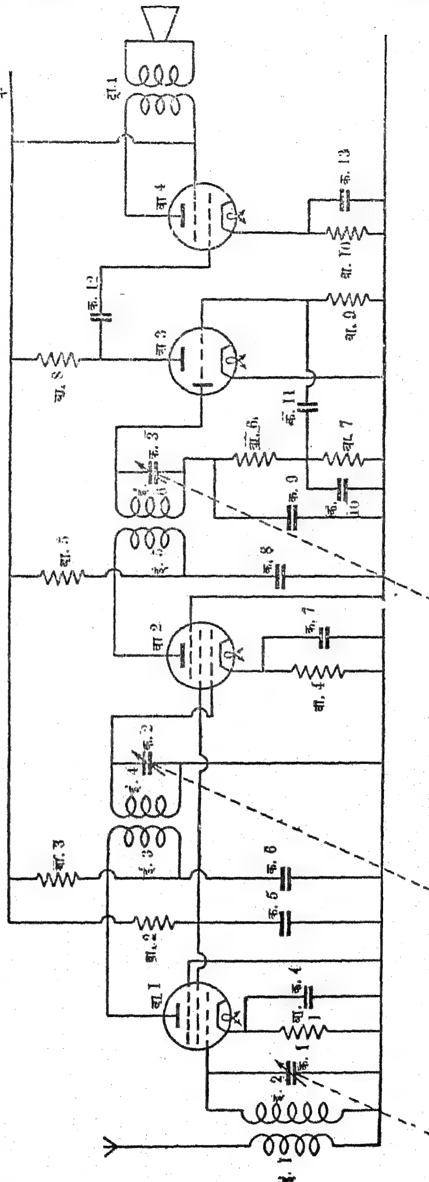
चित्र 132. दो वाल्व का सरल रेडियो.

सरकिट दिखाया गया है । इस चित्र को तीन भागों में बाँटा जा सकता है । बिन्दीदार रेखाओं द्वारा यह भाग चित्र पर अंकित हैं । पहले भाग में एरियल और एक ट्यून्ड सरकिट है । यह टयून्ड सरकिट वांछित स्टेशन छाँटता है । भाग दो में एक ट्रांसफॉर्मर प्रयुक्त रेडियो फ्रीक्वेंसी वर्धक है । इसके द्वारा एरियल पर प्राप्त लहरें वर्धित की जाती हैं । तीसरे भाग में एक ट्रायोड प्रयुक्त डिटेक्टर है । यह

समन्वित लहरों में से ध्वनि की लहरें अलग कर लेता है। यह ध्वनि की लहरें ट्रांसफॉर्मर द्वारा लाउडस्पीकर को दे दी जाती हैं। इस रिसीवर में दो ट्यून्ड सरकिटों का प्रयोग किया गया है। यह आवश्यक है कि दोनों ट्यून्ड सरकिट एक ही फ्रीक्वेंसी पर ट्यून्ड हों इसलिए ट्यूनिंग के लिए गैंग कन्डेन्सर का प्रयोग आवश्यक है। गैंग कन्डेन्सर के प्रयोग से दोनों सरकिट एक ही घुण्डी से ट्यून्ड किये जा सकते हैं।

चार वाल्व का रिसीवर—ऊपर दो वाल्व के सरल (straight) रिसीवर का वर्णन किया गया है। दो वाल्वों द्वारा प्राप्त वर्धन दूर के स्टेशनों द्वारा प्रसारित कार्यक्रम सुनने के लिए पर्याप्त नहीं होता। चित्र 133 में एक चार वाल्व के सरल (straight) रिसीवर का सरकिट दिखाया गया है।

इस रिसीवर में प्रयुक्त चार वाल्वों में से दो पेंटोड वाल्व रेडियो लहर वर्धन के लिए एक डायोड ट्रायोड डिक्टेशन और ध्वनिवर्धक के लिए तथा चौथा बीम टैट्रोड आउटपुट के लिए प्रयोग किया गया है।



चित्र 133. चार वाल्व का सरल रिसीवर.

इस प्रकार इस रेडियो (ग्राहक) में तीन अलग-अलग भाग हुए। पहला भाग दो वाल्व प्रयुक्त रेडियो लहर वर्धक है। दूसरा डिटेक्टर तथा ध्वनिवर्धक और चौथा

आउटपुट भाग है। इनमें से प्रत्येक भाग के सरकिट का वर्णन इसी प्रकरण में किया जा चुका है। इस सरकिट में प्रयुक्त विभिन्न भागों (components) का कार्य निम्नानुसार है।

वाल्व	वा. 1	रेडियो लहर वर्धक
,,	वा. 2	रेडियो लहर वर्धक
,,	वा. 3	डिटेक्टर और ध्वनिवर्धक
,,	वा. 4	आउटपुट वाल्व
इन्डक्टेंस	इ. 1	इसके द्वारा एरियल से वाल्व वा. 1 की ग्रिड पर वोल्टेज दी जाती है।
,,	इ. 2	यह कन्डेन्सर क. 1 से मिलकर ट्यून्ड सरकिट बनता है।
,,	इ. 3	इसके द्वारा वा. 1 की प्लेट से अगले सरकिट को वर्धित वोल्टेज दी जाती है।
,,	इ. 4	यह क. 2 से मिलकर वा. 2 की ग्रिड पर ट्यून्ड सरकिट बनाती है।
,,	इ. 5	इसका कार्य इ. 3 के समान है।
,,	इ. 6	इसका कार्य इ. 4 के समान है।
कन्डेन्सर	क. 1	यह एक ही गैंग के भाग है। यह क्रमशः वाल्व वा. 1, 2 और 3 की ग्रिड ट्यून्ड करने के काम में लाये गये हैं।
,,	क. 2	
,,	क. 3	
	क. 4	कैथोड बाई पास वा. 3. (विशेष प्रकरण 11)
	क. 5	स्क्रीन डिकपलर वा. 1 तथा 2. (विशेष प्रकरण 11)
	क. 6	प्लेट डिकपलर वा. (विशेष प्रकरण 11)
	क. 7	कैथोड बाई पास वा. 2 (विशेष प्रकरण 11)
	क. 8	प्लेट डिकपलर वा. 2 (विशेष प्रकरण 11)
	क. 9	ये बाधक क. 6 और 7 के साम मिलकर रेडियो फ्रीक्वेंसियों को निकल जाने देते हैं।
	क. 10	
	क. 11	यह डिटेक्टर पर उत्पन्न डी. सी. को रोक देता है। ध्वनि की लहरें इसमें होकर वा. 3 को ग्रिड पर पहुँच जाती है।
	क. 12	यह वा. 3 की प्लेट पर से ध्वनि की फ्रीक्वेंसियों को वा.4 को ग्रिड पर दे देता है पर डी. सी. को वहीं रोक देता है।
	क. 13	कैथोड बाई पास वाल्व वा. 4

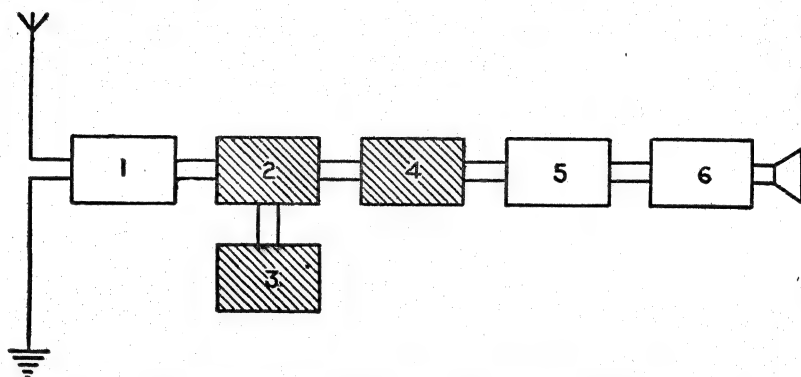
बाधक	बा. 1	बाईसिंग बाधक वा. 1
,,	बा. 2	स्क्रीन डिकपलर वा. 1 और वा. 2
,,	बा 3	प्लेट डिकपलर वा. 1
,,	बा. 4	बाइसिंग बाधक वा. 4
,,	बा. 5	प्लेट डिकपलर वा. 2
,,	बा. 6	यह क. 9 और 10 के साथ मिलकर ऐसा प्रबन्ध बनता
,,	बा. 7	कि इससे ध्वनि और रेडियो की लहरें अलग हो जाती हैं।
,,	बा. 8	कपलिंग बाधक वा 3
,,	बा. 9	ग्रिड लीक वा. 3
,,	बा. 10	बाइसिंग बाधक वा. 4
ट्रांसफॉर्मर	ट्रा. 1	मैचिंग ट्रॉसफार्मर : यह आउटपुट वाल्व की प्लेट से ध्वनि की वोल्टेज कम करके लाउडस्पीकर को देता है।

पन्द्रहवाँ प्रकरण

हैट्रोडाइन रिसीवर

(Hetrodyne Receiver)

पिछले प्रकरण में वर्णित रिसीवरों के अतिरिक्त एक अन्य प्रकार का रिसीवर जिसे सुपर हैट्रोडाइन रिसीवर कहते हैं विशेष प्रयोग में आता है । आजकल के अधिकांश रेडियो इसी प्रकार के होते हैं । चित्र 134 में एक सुपर हैट्रोडाइन रिसीवर का ब्लाक चित्र (block diagram) दिखाया गया है ।

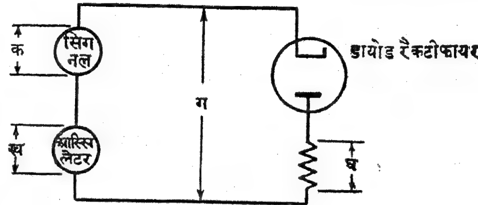


चित्र 134. सुपर हैट्रोडाइन रिसीवर का ब्लाक चित्र.
1. रेडियो लहर वर्धक, 2. फ्रीक्वेंसी चेंजर, 3. स्थानीय आस्सिलेटर, 4. मध्यम फ्रीक्वेंसी वर्धक, 5. डिटेक्टर, 6. आउट पुट.

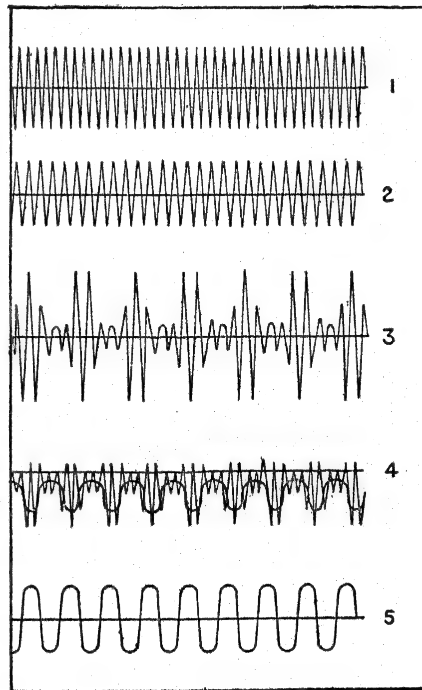
हैट्रोडाइन रिसीवर तथा पिछले प्रकरण में दिये हुए साधारण रिसीवर के ब्लाक चित्रों की तुलना करने पर ज्ञात होगा कि हैट्रोडाइन रिसीवर में स्थानीय ऑस्सिलेटर (लोकल ऑस्सिलेटर) फ्रीक्वेंसी चेंजर तथा मध्यम फ्रीक्वेंसी वर्धक (I. F. amplifier) भाग अधिक होते हैं । इस रिसीवर का कार्य समझने के लिए फ्रीक्वेंसी चेंजर का कार्य समझना आवश्यक है ।

फ्रीक्वेंसी चेंजर—यदि दो विभिन्न फ्रीक्वेंसी की धारायें मिला दें तो उनकी मिली हुई फ्रीक्वेंसी में चार फ्रीक्वेंसियाँ होंगी । दो वे जो मिलाई गई हैं, तीसरी उन दोनों के योग (sum) की फ्रीक्वेंसी तथा चौथी उन दोनों के अन्तर (difference) की फ्रीक्वेंसी । एक टयून्ड सरकिट के द्वारा इन चारों में से कोई भी फ्रीक्वेंसी अलग की जा सकती है और यदि दोनों मिलाई गई फ्रीक्वेंसियों में से कोई एक

समन्वित (माडयूलेटेड) होगी तो फ्रीक्वेंसी तीन तथा चार (योग तथा अन्तर की फ्रीक्वेंसी) भी उसी प्रकार समन्वित (माड़यूलेटेड) होंगी ।[1] रिसीवर में जो भाग दोनों फ्रीक्वेंसी मिलाने का कार्य करता है वह मिक्सर (mixer =मिलाने वाला) कहलाता है। चित्र 135 में फ्रीक्वेंसी बदलने वाले भाग की रूप रेखा तथा चित्र 136 में इसका कार्य दिखाया गया है। इसमें दो लहरें जो कि अलग-अलग फ्रीक्वेंसी की हैं मिला दी जाती हैं। चित्र 136 (1) में सन्देश की लहर दिखाई गई है। (2) में एक ऑस्सिलेटर द्वारा उत्पन्न लहर दिखाई गई है। दोनों वोल्टेज श्रेणी में दे दी जाती है। चित्र 136 (3) में मिली हुई लहरें दिखाई गई है। इन मिली हुई लहरों का परिमाण (amplitude) सदैव ही सिगनल तथा आसिलेटर इन दोनों की वोल्टेज के योग के बराबर होता है । विभिन्न फ्रीक्वेंसियाँ होने के कारण सिगनल और आस्सिलेटर की लहरों के परिमाण में अन्तर बढ़ता जाता है। इस कारण इनकी सम्मिलित लहर का परिमाण भी बदलता है। जिस समय दोनों लहरों का परिमाण अधिक होता है तथा एक ही दिशा में होता है उस समय मिली हुई लहर



चित्र 135. मिक्सर का सिद्धान्त.

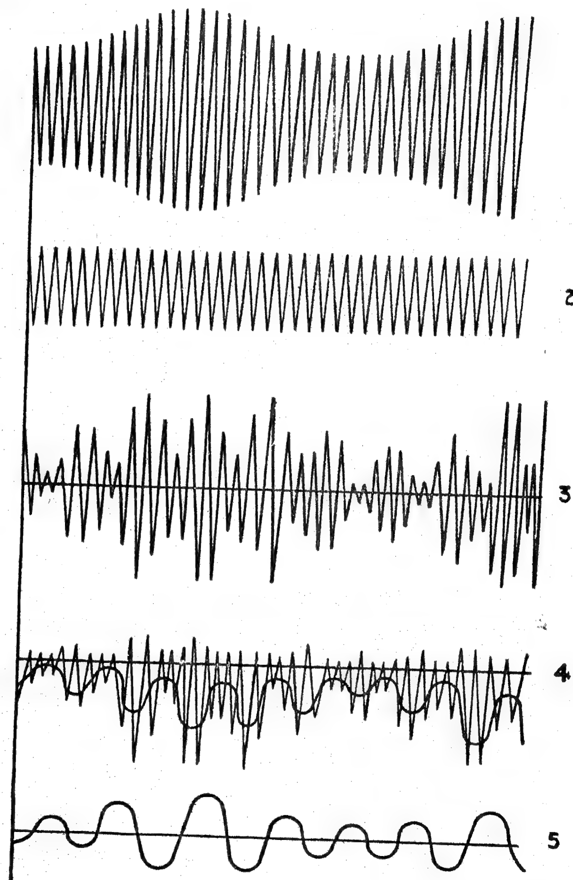


चित्र 136. मिक्सर का कार्य.

1. उदाहरण के लिए यदि 1150 कि. सा. तथा 700 कि. सा. इन दो फ्रीक्वेंसियों की लहरें मिलाई जायें तो इन मिलीं हुई लहरों में चार फ्रीक्वेंसियों की लहरें होंगी। तथा इनकी फ्रीक्वेंसी 1150 कि. सा. 700 कि. सा., 1850 कि. सा.

की वोल्टेज बढ़ जाती है । इसके विपरीत जिस समय दोनों फ्रीक्वेंसियों की वोल्टेज एक दूसरे के विरुद्ध होती है उस समय उनकी सम्मिलित वोल्टेज बहुत कम हो जाती है ।

चित्र (4) में डिटेक्शन के बाद यह लहर दिखाई गई है । यह डी. सी. है। जिसकी वोल्टेज दोनों फ्रीक्वेंसी के अन्तर की फ्रीक्वेंसी पर घटती-बढ़ती हैं । चित्र



चित्र 137. समन्वित रेडियो फ्रीक्वेंसी—मिक्सर का कार्य.

(700+1150 योग) तथा 450 कि. सा. (1150—700) होंगी । यदि मिलाई हुई फ्रीक्वेंसियों में से कोई एक समन्वित हो तो 1850 तथा 450 कि. सा. यह दोनों भी समन्वित होंगी ।

(5) में इस फ्रीक्वेंसी में से डी. सी. निकालकर प्राप्त लहर दिखाई गई है। इस लहर की फ्रीक्वेंसी (i) तथा (ii) इन दोनों फ्रीक्वेंसियों के अन्तर के बराबर होती है। इस फ्रीक्वेंसी को प्राप्त करने के लिए मिली हुई लहर का डिटेक्शन आवश्यक है।

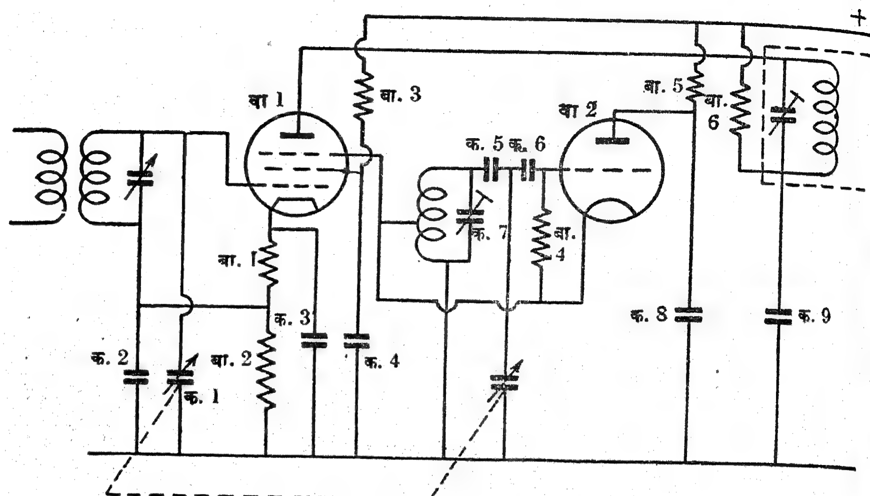
हैट्रोडाइन रिसीवर में एरियल पर आई हुई फ्रीक्वेंसियों को वर्धित करके (अथवा बिना वर्धित किये) इनमें एक ऑसिलेटर जो कि स्थानीय (local) ऑस्सिलेटर कहलाता है—द्वारा उत्पन्न लहरें मिलाई जाती हैं। स्थानीय ऑस्सिलेटर में ऐसा प्रबन्ध किया जाता है कि वह फ्रीक्वेंसी जिस पर रिसीवर ट्यून्ड है, तथा ऑस्सिलेटर की फ्रीक्वेंसी इन दोनों में सदैव एक निश्चित अन्तर रहे। इन मिली हुई लहरों में (जैसा कि ऊपर बताया जा चुका है) चार फ्रीक्वेंसियों की धारायें रहती हैं। इन फ्रीक्वेंसियों की धाराओं में से चौथी फ्रीक्वेंसी अर्थात् इन दोनों फ्रीक्वेंसियों के अन्तर की फ्रीक्वेंसी ट्यून्ड सरकिटों द्वारा अलग कर ली जाती है। यह ट्यून्ड सरकिट इन दोनों की अन्तर फ्रीक्वेंसी (difference frequency) पर ट्यून्ड रहते हैं। इस प्रकार प्राप्त फ्रीक्वेंसी मध्यम (intermediate) फ्रीक्वेंसी (I. F.) कहलाती है। यह मध्यम फ्रीक्वेंसी (म. फ्री.) ठीक उसी प्रकार समन्वित (modulated) होती है जिस प्रकार कि रिसीवर के एरियल पर प्राप्त फ्रीक्वेंसी होती है।

इस फ्रीक्वेंसी के डिटेक्शन के बाद ठीक उसी प्रकार के सन्देश प्राप्त होते हैं जैसे कि रिसीवर पर प्राप्त फ्रीक्वेंसी (वांछित स्टेशन की) के डिटेक्शन (detection) से। चित्र 137 में समन्वित फ्रीक्वेंसी के लिए मिक्सर का कार्य दिखाया गया है।

मध्यम फ्रीक्वेंसी सदैव एक ही रहती है अतः ट्यून्ड सरकिटों में निश्चित कैपेसिटी के कन्डेन्सरों का प्रयोग किया जा सकता है।

ऊपर बताया जा चुका है कि एक हैट्रोडाइन रिसीवर में एक साधारण रिसीवर की अपेक्षा तीन भाग अधिक होते हैं, स्थानीय ऑस्सिलेटर, फ्रीक्वेंसी चेंजर तथा मध्यम फ्रीक्वेंसी वर्धक (I. F. amplifier) नीचे इन तीनों का वर्णन दिया हुआ है।

स्थानीय ऑस्सिलेटर तथा फ्रीक्वेंसी चेंजर—चित्र 138 में एक स्थानीय ऑस्सिलेटर तथा फ्रीक्वेंसी चेंजर (changer=बदलने वाला) का सरकिट दिया हुआ है। इसमें एक वाल्व स्थानीय ऑस्सिलेटर है तथा दूसरा फ्रीक्वेंसी चेंजर है ऑस्सिलेटर में ट्रायोड प्रयुक्त ऑस्सिलेटरी सरकिट है तथा कन्डेन्सर क. 1 द्वारा जिस फ्रीक्वेंसी पर यह ऑस्सिलेट करता है वह बदली जाती है। साथ ही इसी कन्डेन्सर के दूसरे भाग ख, द्वारा रिसीवर को ट्यून्ड किया जाता है। इस प्रकार एक कन्डेन्सर की कैपेसिटी बदलने पर दूसरे की भी बदली जा सकती है।



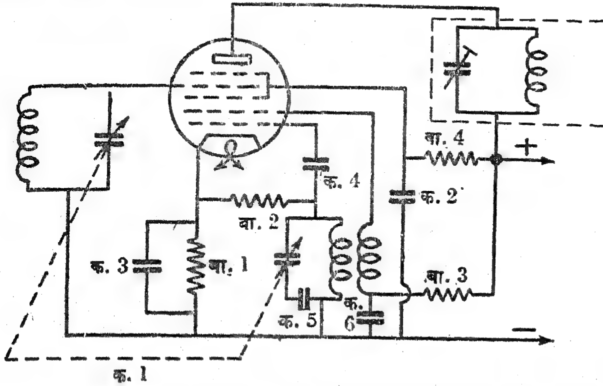
चित्र 138. दो वाल्व प्रयुक्त फ्रीक्वेंसी चेंजर का सरकिट.

कन्डेन्सर क. 5 तथा क. 7 के प्रयोग से ऑस्सिलेटर तथा रिसीवर की ट्यून्ड फ्रीक्वेंसियों के बीच एक निश्चित फ्रीक्वेंसी का अन्तर बनाये रखा जा सकता है। ऑस्सिलेटर में सीरीज़ फेड (series fed) हार्टले सरकिट काम में लाया गया है। यहाँ यह ध्यान देने योग्य है कि इस सरकिट में प्लेट के स्थान पर कैथोड को वोल्टेज कॉइल में होकर दी गई है। प्लेट पर वोल्टेज देने के लिए बा. 5 का प्रयोग किया गया है। वांछित स्टेशन की तथा ऑस्सिलेटर द्वारा उत्पन्न दोनों फ्रीक्वेंसियाँ फ्रीक्वेंसी चेंजर पर दे दी जाती हैं। फ्रीक्वेंसी चेंजर की प्लेट पर का सरकिट, जो कि इन दोनों के अन्तर की फ्रीक्वेंसी (म. फ्री. अथवा I. F.) पर ट्यून्ड रहता है, मध्यम फ्रीक्वेंसी छाँट लेता है। इसमें पैंटोड वाल्व को इस प्रकार काम में लाया जाता है कि यह वाल्व डिटेक्टर का भी कार्य करता है।

ऊपर के सरकिट में ऑस्सिलेटर तथा मिलाने के लिए अलग-अलग वाल्वों का प्रयोग किया गया है। परन्तु कुछ वाल्व इस प्रकार के हैं जो दोनों कार्य सम्पन्न कर सकते हैं। इस कार्य के लिए प्रमुखतः दो वाल्व पैंटाग्रिड कनवर्टर (pentagrid converter) तथा ट्रायोड हैक्सोड प्रयोग किये जाते हैं।

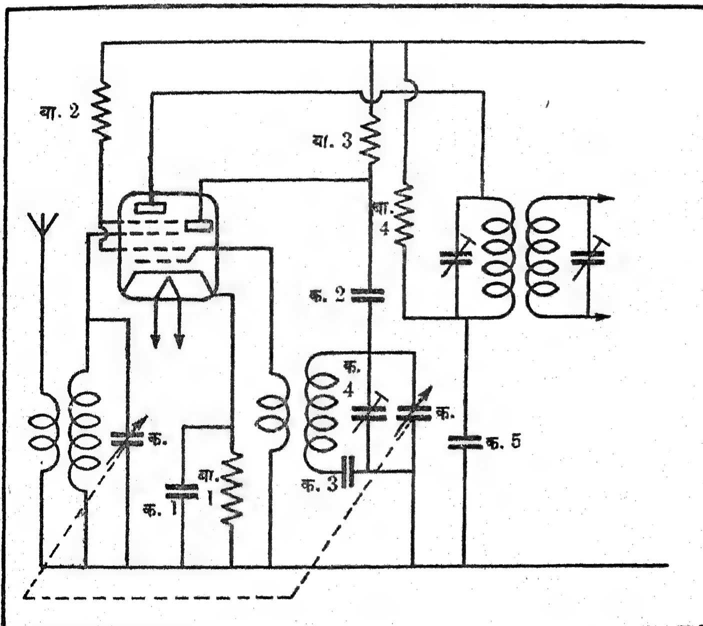
चित्र 139 के सरकिट में एक पैंटाग्रिड कनवर्टर का ऑस्सिलेटर तथा मिक्सर के रूप में प्रयोग किया गया है। ग्रिड 1, 2 तथा कैथोड मिलकर ऑस्सिलेटर बनाते

हैं और शेष भाग द्वारा दोनों फ्रीक्वेंसियाँ मिलाई जाती हैं । वाल्व की प्लेट का ट्यून्ड सरकिट मध्यम फ्रीक्वेंसी ले लेता है ।



चित्र 139. पेंटाग्रिड कनवर्टर का फ्रीक्वेंसी बदलने के लिए प्रयोग.

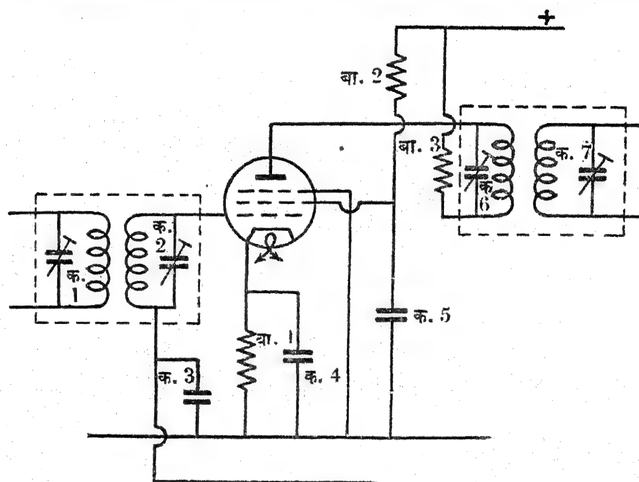
चित्र 140 में एक ट्रायोड हैक्सोड का प्रयोग ऑस्सिलेटर तथा फ्रीक्वेंसी



चित्र 140 ट्रायोड हैक्सोड का फ्रीक्वेंसी बदलने के लिए प्रयोग,

चेंजर के लिए किस प्रकार किया जाता है यह दिखाया गया है । जैसा कि नाम से ही विदित होता है ट्रायोड हैक्सोड दो वाल्वों (एक ट्रायोड तथा दूसरा हैक्सोड) का कार्य करता है । इसमें ायोड भाग का उपयोग ऑस्सिलेटर के रूप में तथा शेष फ्रीक्वेंसी बदलने के लिए प्रयोग किया गया है । शेष सब भागों का कार्य पैटाग्रिड कनवर्टर के समान है ।

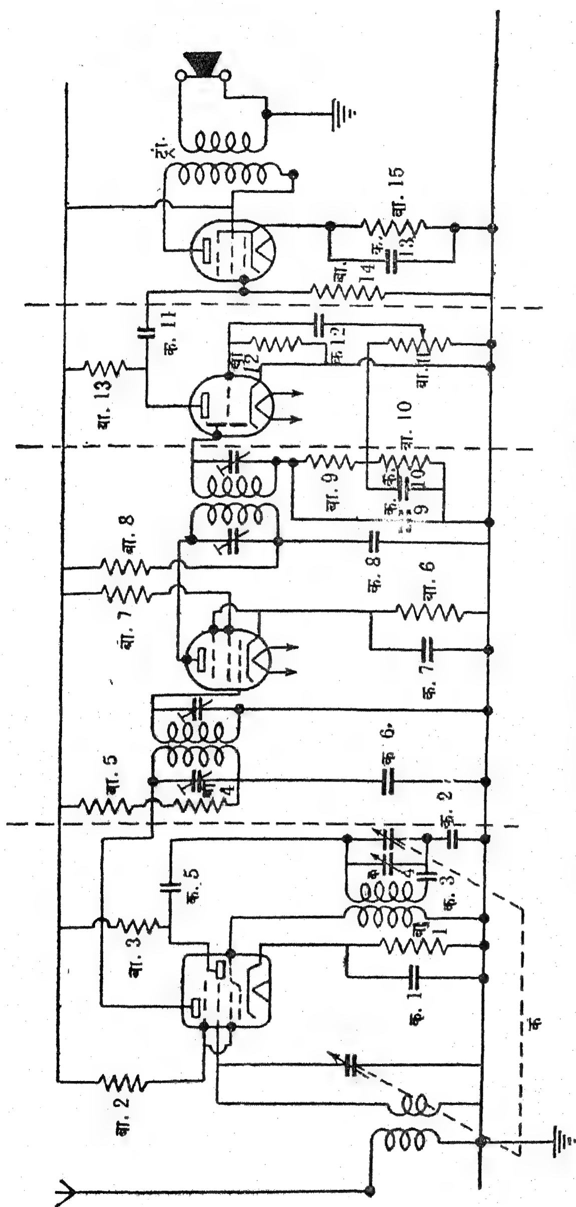
मध्यम फ्रीक्वेंसी वर्धक—यह एक रेडियो लहर वर्धक होता है परन्तु इस पर सदैव एक ही फ्रीक्वेंसी वर्धित की जाती है । आजकल मध्यम फ्रीक्वेंसी प्राय: 450 से



चित्र 141. मध्यम फ्रीक्वेंसी वर्धक.

470 कि. सा. प्रति सैकिण्ड तक प्रयुक्त की जाती है । मध्यम फ्रीक्वेंसी वर्धक पर एक फ्रीक्वेंसी वर्धित की जाती है इसलिए इस वर्धक में प्रयुक्त वाल्वों की प्लेट पर इसी फ्रीक्वेंसी पर ट्यून्ड सरकिटों का प्रयोग किया जाता है । चित्र 141 में एक मध्यम फ्रीक्वेंसी वर्धक का सरकिट दिखाया गया है । मध्यम फ्रीक्वेंसी वर्धक में प्रयुक्त ट्यून्ड सरकिट प्राय: इस प्रकार के बनाये जाते हैं कि उनमें होकर एक फ्रीक्वेंसी बैंड गुजर सके । (विशेष प्रकरण 8)

चित्र 142 में एक चार वाल्व प्रयुक्त हैट्रोडाइन रिसीवर का सरकिट दिखाया गया है । इस सरकिट में रेडियो लहर वर्धक (R. F. amplifier) का प्रयोग नहीं किया गया है । एरियल पर प्राप्त लहरें फ्रीक्वेंसी चेंजर में दे दी जाती हैं (भाग 1) । यहाँ से यह लहरें मध्यम फ्रीक्वेंसी वर्धक (म. फ्री. व.) (भाग 2) को दे दी जाती हैं । यहाँ पर वर्धित लहरें भाग 3 द्वारा डिटेक्ट की जाती हैं । यह डिटेक्टेड लहरें (भाग 4),



चित्र 142. चार वाल्व के सुपरहैट्रोडाइन रेडियो का सरकिट.

जो कि बाधक संयुक्त (resistance coupled) वर्धक है, के द्वारा वर्धित होकर लाउडस्पीकर को दे दी जाती हैं ।

रिसीवर के गुण तथा हैट्रोडाइनिंग के लाभ—संक्षेप में एक रिसीवर का कार्य निम्नलिखित है—

1. बहुत से स्टेशनों में से वांछित स्टेशन छाँटना ।
2. उस स्टेशन के सन्देश को वर्धित करके सुनने योग्य शक्ति उत्पन्न करना।
3. जैसी ध्वनि की लहरें प्रेषक द्वारा भेजी गई थी ठीक वैसी ही यहाँ उत्पन्न कर देना ।

अंग्रेज़ी में यह गुण क्रमशः सैलेक्टिविटी, सैन्सिटिविटी तथा फिडेलिटी कहलाते हैं । हैट्रोडाइन सिरीवर में यह तीनों गुण सरल रिसीवर की अपेक्षा अच्छे होते हैं । अच्छे होने के कारण निम्न- लिखित हैं—

हैट्रोडाइन रिसीवर में आने वाले स्टेशन की फ्रीक्वेंसी एक निश्चित फ्रीक्वेंसी में बदल दी जाती है। यह फ्रीक्वेंसी आने वाले स्टेशन की फ्रीक्वेंसी से सदैव ही कम रहती है । इससे उसकी सैलेक्टिविटी (selectivity) (छाँटने की शक्ति) दो प्रकार से बढ़ जाती है। प्रथम कम कीमत में अधिक टयून्ड सरकिटों के प्रयोग के कारण व दूसरे फ्रीक्वेंसी कम होने के कारण । रिसीवर में सैलेक्टिविटी टयून्ड सरकिट के प्रयोग से प्राप्त की जाती है और रेडियो लहर वर्धक पर जितने टयून्ड सरकिटों का प्रयोग किया जायेगा उतने ही अधिक वैरीएबिल (variable) (जिनकी कैपेसिटी बदली जा सके) कन्डेन्सरों की आवश्यकता होती है। इस प्रकार के कन्डेन्सर कीमती होते हैं अतः रिसीवरों में तीन से अधिक गैंग का कन्डेन्सर प्रायः प्रयुक्त नहीं किया जाता । हैट्रोडाइन रिसीवर में फ्रीक्वेंसी बदलकर सदैव एक निश्चित फ्रीक्वैंसी कर दी जाती है । अतः इस फ्रीक्वेंसी पर टयून्ड सरकिटों (tuned circuits) में निश्चित कैपेसिटी के कन्डन्सरों (fixed condensers) का प्रयोग किया जा सकता है । इस प्रकार के कन्डेन्सर पहली प्रकार के कन्डेन्सरों से कहीं सस्ते होते हैं । इसलिएं कई टयून्ड सरकिटों का प्रयोग करना सम्भव है और इस प्रकार रिसीवर की सैलेक्टिविटी बढ़ जाती है । दूसरे फ्रीक्वेंसी कम होने के कारण दो स्टेशनों के बीच में अन्तर (प्रतिशत) बढ़ जाता है अतः सैलेक्टिविटी बढ़ जाती है । उदाहरण के लिए यदि दो स्टेशनों की फ्रीक्वेंसी क्रमशः 3000 कि. सा. तथा 3050 कि. सा. है तो उनमें 50 कि. सा. का अन्तर है । परन्तु यह अन्तर 3000 कि. सा. पर होने के कारण केवल 1·6% है । अब यदि रिसीवर 3000 कि. सा. की फ्रीक्वेंसी के लिए टयून किया गया है तो यह

दोनों फ्रीक्वेंसी क्रमश: 465 कि. सा. तथा 515 कि. सा. में बदल जायेगी । यद्यपि इन दोनों फ्रीक्वेंसी में अब भी अन्तर केवल 50 कि. सा. का है परन्तु यह अन्तर 465 कि. सा. पर होने के कारण 10% से अधिक है। प्रतिशत अन्तर बढ़ जाने के कारण चुनने की शक्ति बढ़ जाती है।

सैन्सटिविटी—यदि एक वर्धक का उपयोग केवल एक निश्चित फ्रीक्वेंसी पर ही किया जाय तो उसके द्वारा विभिन्न फ्रीक्वेंसियों पर प्रयुक्त वर्धक की अपेक्षा अधिक वर्धन प्राप्त किया जा सकता है। इसके अतिरिक्त वर्धन फ्रीक्वेंसी पर भी निर्भर करता है। फ्रीक्वेंसी जितनी कम होगी उसका उतना ही अधिक वर्धन सम्भव है। हैट्रोडाइन रिसीवर में प्राप्त फ्रीक्वेंसी कम फ्रीक्वेंसी में बदल दी जाती है। इसी कारण रेडियो फ्रीक्वेंसी वर्धक की अपेक्षा मध्यम फ्रीक्वेंसी वर्धक अधिक वर्धन कर सकता है। इसका यह अर्थ हुआ कि एक स्टेशन जिसके द्वारा प्राप्त लहरें इतनी कम शक्ति की हैं कि वह स्टेशन एक साधारण (straight) रिसीवर पर नहीं सुना जा सकता वही स्टेशन उतने ही वाल्व के एक हैट्रोडाइन रिसीवर पर सुना जा सकता है क्योंकि मध्यम फ्रीक्वेंसी वर्धक (I. F. amplifier) के कारण हैट्रोडाइन रिसीवर अधिक वर्धन कर सकता है।

हैट्रोडाइन रिसीवर प्राय: प्रत्येक दृष्टि से एक साधारण रिसीवर की अपेक्षा अच्छा रहता है। परन्तु इसमें एक खराबी भी रहती है। हैट्रोडाइन रिसीवर में फ्रीक्वेंसी चेंजर (frequency changer) आने वाले स्टेशन की फ्रीक्वेंसी बदलकर एक निश्चित फ्रीक्वेंसी बनाता है जो कि म. फ्री. (I. F.) कहलाती है। परन्तु प्रत्येक फ्रीक्वेंसी पर दो फ्रीक्वेंसियां उसी फ्रीक्वेंसी में बदली जा सकती हैं। उदाहरण के लिए यदि प्राप्त स्टेशन की फ्रीक्वेंसी 1000 कि. सा. से है तथा मध्यम फ्रीक्वेंसी (I. F.) 465 कि. सा. है तो लोकल ऑस्सिलेटर 1465 कि. सा. से की लहरें उत्पन्न कर रहा होगा। यदि इस समय कोई स्टेशन जिसकी फ्रीक्वेंसी 1930 कि. सा. प्रति सैकिन्ड है वह भी रिसीवर पर आ रहा हो तो वह फ्रीक्वेंसी भी 465 कि. सा./से. में बदल जायगी । (1930—1465=465)। इस प्रकार एक ही समय में दो स्टेशन सुनाई देंगे । यह दूसरी फ्रीक्वेंसी इमेज फ्रीक्वेंसी (image frequency) कहलाती है और यह खराबी क्रास टाक (cross talk) कहलाती है। इस खराबी को दूर करने के लिए मध्यम-लहर वर्धक से पूर्व छाँटने की पर्याप्त शक्ति होना आवश्यक है । ऐसा होने से वांछित स्टेशन से मध्यम फ्रीक्वेंसी से दूनी फ्रीक्वेंसी के अन्तर पर के स्टेशन अलग किये जा सकते हैं तथा यह खराबी नहीं रहती है।

सोलहवाँ प्रकरण

रेडियो रिसीवर की कुछ विशेषताएँ

(Some Receiver refinements)

पिछले प्रकरणों में रेडियो रिसीवर के सिद्धान्त का वर्णन किया जा चुका है। व्यवहारिक रिसीवरों में सुविधा और उपयोगिता बढ़ाने की दृष्टि से कुछ विशेषताएँ दी जाती हैं। प्रस्तुत प्रकरण में रेडियो में सामान्यतः दी जाने वाली विशेषताओं का वर्णन किया गया है।

वेव बैन्ड्स—प्रसारित करने वाले स्टेशन अलग-अलग फ्रीक्वेंसियों पर कार्यक्रम प्रसारित करते हैं। इस कार्य के लिए 550 स. सा./से. से लेकर 30,000 स. सा/से. तक की फ्रीक्वेंसियों का उपयोग किया जाता है। एक कॉइल और उसके साथ एक वेरियेबिल कन्डेन्सर से यह सभी स्टेशन ट्यून नहीं किये जा सकते। साधारणतः ट्यूनिंग के लिए काम में लाये जाने वाले कन्डेन्सरों की कैपेसिटी 30 से 300 तक मा. फैराड तक बदलती है। इस कारण उनके द्वारा एक कॉइल के साथ ट्यून की जाने वाली कम से कम तथा अधिक से अधिक फ्रीक्वेंसी का अनुपात 1 : 3·16 होगा।[1] इस प्रकार यदि एक कॉइल द्वारा ट्यून की जाने वाली कम-से-कम फ्रीक्वेंसी 550 स. सा./से. हो तो अधिक-से-अधिक 1738 स. सा. से. तक की फ्रीक्वेंसी ट्यून की जा सकेगी। इस कारण 550 स. सा./से.—30,000 स. सा,/से. तक की

---

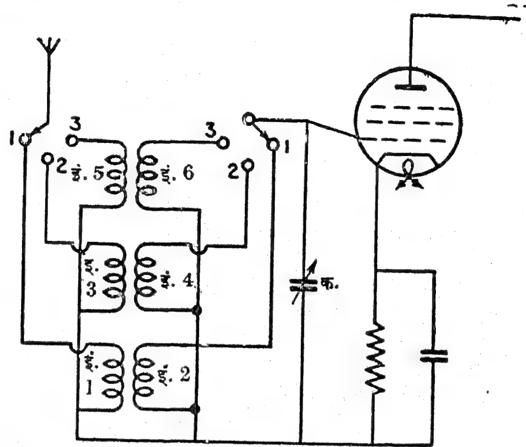
1. रेज़ोनेन्ट फ्रीक्वेंसी $F=\frac{1}{2\pi\sqrt{LC}}$

ट्यूनिंग कॉइल की इन्डक्टेंस न बदलने के कारण फ्रीक्वेंसी कैपेसिटी के वर्ग-मूल के विषम अनुपात में होगी।

$$\text{अथवा } F \propto \frac{1}{\sqrt{C}}$$

$$\text{अतः कुल ट्यूनिंग रेंज} = \sqrt{30} : \sqrt{300} = 1 : 3{\cdot}16$$

फ्रीक्वेंसियों को ट्यून करने के लिए कम-से-कम चार[2] अलग कॉइल आवश्यक है। (यदि रेडियो में बैंड स्प्रैड है तो और अधिक कॉइलों की आवश्यकता होगी।) प्रत्येक कॉइल से लहरों का एक वर्ग (बैन्ड) ट्यून किया जा सकता है। रिसीवरों में जितने कॉइल होंगे उतने ही बैन्ड ट्यून किये जा सकते हैं। प्राय: रिसीवरों में एक से आठ तक बैन्ड होते हैं। चित्र 143 में तीन बैन्ड के एक रिसीवर का वह भाग दिखाया गया है जिसके द्वारा यह बैन्ड प्राप्त किये जा सकते हैं। इसमें एक स्विच के प्रयोग से तीनों कॉइल में से कोई एक कॉइल लगाया जा सकता है। चित्र 144 में इस कार्य के लिए प्रयुक्त स्विच और चित्र 145 में उस स्विस की रचना तथा चिन्ह दिखाया गया है।



चित्र 143. रेडियो में कई बैंड प्राप्त करने का प्रबन्ध.

---

2. एक कॉइल 550 से 1700 स. सा/से. तक (550×3 16=1700) लगभग

दूसरा कॉइल 1700 से 5200 स. सा./से. तक (1700×3·16=5200 लगभग

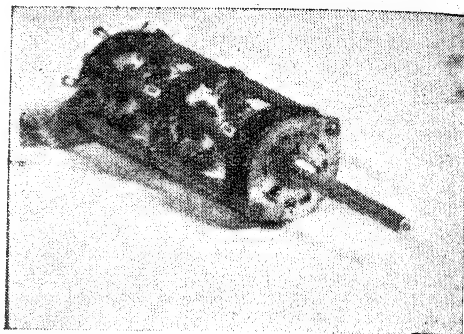
तीसरा कॉइल 5200 से 17000 स. सा /से. तक

चौथा कॉइल 17,000 से 30,000 स. सा /से. तक

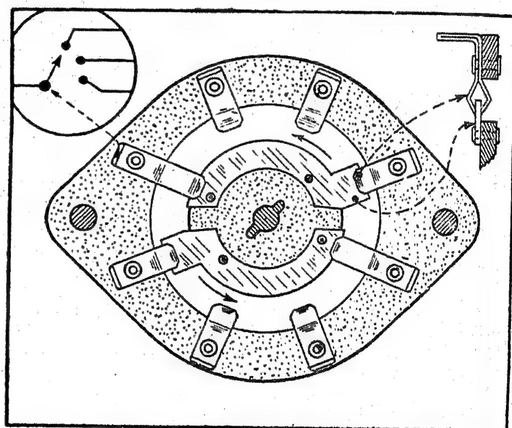
अधिकांश रिसीवरों में 550 से 30,000 स. सा. तक की सभी फ्रीक्वेंसियाँ प्राप्त करने का प्रबन्ध नहीं दिया जाता है। प्राय: उनसे कुछ विशेष बैन्ड प्राप्त किये जा सकते हैं। उदाहरण के लिए वैस्टिंग हाउस द्वारा निर्मित एक रेडियो में निम्न चार बैंड हैं।

पहला	550 से 1600 स. सा./से.	मीडियम वेव
दूसरा	3200 से 7500 स. सा./से.	शार्ट वेव 1
तीसरा	8200 से 12,000 स. सा./से.	शार्ट वेव 2
चौथा	15,000 से 22,000 स. सा./से.	शार्ट वेव 3

बैन्ड स्प्रेड—ऊपर यह बताया जा चुका है कि प्रत्येक स्टेशन एक अलग फ्रीक्वेंसी पर कार्यक्रम प्रसारित करता है। सुविधा की दृष्टि से यह निश्चित कर दिया गया है कि दो स्टेशनों की फ्रीक्वेंसियों में कम से कम 10 स. सा./से. का अन्तर होना आवश्यक है। लम्बी तथा मध्यम लहरों पर 10 स. सा. का अन्तर पर्याप्त होता है और रिसीवर पर वांछित स्टेशन सरलता से ट्यून किये जा सकते हैं। लेकिन छोटी लहरों पर ट्यून करने में कुछ असुविधा होती है। उदाहरण के लिए यदि एक कन्डेन्सर एक कॉइल के साथ कम से कम 5000 स. सा./से. ट्यून करता है तो वह कन्डेन्सर उसी कॉइल के साथ 15800 स. सा /से. तक टयून कर सकता है। इस प्रकार इन दोनों फ्रीक्वेंसियों में 10,800 स. सा. का अन्तर है। 10 स. सा. के अन्तर से इस बैन्ड में 1080 स्टेशन हो सकते हैं। इस कारण ट्यूनिंग कन्डेन्सर की घुण्डी थोड़ी घुमाने से ही कई स्टेशन बदल जायेंगे और किसी भी स्टेशन को ठीक ट्यून करना कठिन होगा। छोटी लहरों पर ट्यून करने की इस कठिनाई को दूर करने के लिए ऐसे उपाय प्रयोग में लाये जाते हैं जिनसे स्टेशन दूर-दूर ट्यून हों। यह उपाय बैन्ड स्प्रैड (स्प्रैड spread=फैलाना) कहलाते हैं।



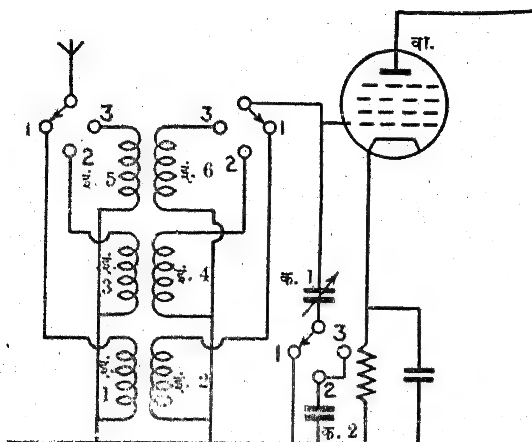
चित्र 144. स्विच.



चित्र 145. स्विच की रचना और उसके लिये काम में लाया जाने वाला चिन्ह.

व्यवहार में बैन्ड फैलाने के लिए दो उपाय काम में लाये जाते हैं। वे हैं प्रथम यांत्रिक तथा द्वितीय विद्युतीय। यांत्रिक बैन्ड स्प्रैड में ऐसा प्रबन्ध किया जाता है जिसके कारण ट्यून करने की घुण्डी घुमाने पर कन्डेन्सर बहुत धीरे-धीरे घूमे। इस प्रकार स्टेशन दूर दूर ट्यून होते हैं।

विद्युतीय बैन्ड स्प्रैड—इस प्रकार से बैन्ड फैलाने के लिए ट्यूनिंग कन्डेन्सर के श्रेणी में एक और कन्डेन्सर लगाया जाता है। चित्र 146 में इसका सिद्धान्त दिखाया गया है।



चित्र 146. बैन्ड फैलाने का सिद्धांत.

इस चित्र में रिसीवर का वह भाग दिखाया गया है जिसके द्वारा बैन्ड प्राप्त होते हैं। इसमें स्विच के तीन भाग हैं यह तीनों साथ-साथ घूमते हैं। छोटी लहरों के बैन्ड पर लगाने से ट्यूनिंग कन्डेन्सर के श्रेणीबद्ध एक और कन्डेन्सर लग जाता है। उदाहरण के लिए यदि 30 से 300 पिकोफैराड तक की कैपेसिटी के ट्यूनिंग कन्डेन्सर के श्रेणीवद्ध 100 पिकोफैराड का कन्डेन्सर लगा दिया जाये तो निम्न परिणाम होगा।

श्रेणीबद्ध कन्डेन्सर लगाने से पूर्व

कैपेसिटी 30 से 300 पिकोफैराड तक बदलेगी।

5000 से 15,800 स. सा. तक स्टेशन ट्यून किये जा सकते इस प्रकार उस बैन्ड पर 10 स. सा./से. के अन्तर से कुल 1080 स्टेशन ट्यून हो सकते हैं।

श्रेणीबद्ध कन्डेन्सर लगाने के बाद[1] दूसरे कॉइल के साथ कैपेसिटी 23 से 75 पिकोफैराड तक बदलेगी।

5,000 से 8,800 स. सा. तक स्टेशन ट्यून किये जा सकते हैं।

तथा एस प्रकार उस बैन्ड पर कुल 380 स्टेशन ट्यून किये जा सकते हैं।

इस प्रकार यह स्पष्ट हो जायेगा कि इस कन्डेन्सर के प्रयोग से स्टेशनों का अन्तर बढ़ जायेगा परन्तु इसके कारण एक बैन्ड द्वारा अपेक्षाकृत कम स्टेशन ट्यून किये जा सकेंगे। यदि उतने ही स्टेशन ट्यून करने हों तो बैन्ड स्प्रैड के साथ अधिक बैन्ड आवश्यक होंगे।

वाल्यूम कन्ट्रोल (volume control)—वाल्यूम कन्ट्रोल लाउडस्पीकर की आवाज कम अथवा अधिक करने के लिए काम में लाया जाता है। चित्र 147 में इसका सिद्धान्त दिखाया गया है। डिटेक्टर द्वारा समन्वित रेडियो लहर के डिटेक्शन से प्राप्त ध्वनि वोल्टेज बाधक बा. 3 (वैरियेबिल) पर प्राप्त होती है। इस वोल्टेज का एक भाग इसी वाल्व के ट्रायोड भाग की ग्रिड पर दे दिया जाता है। वोल्टेज का यह भाग क तथा ख के बीच की बाधा पर निर्भर करता है। जब क और ख के बीच बाधा अधिक होती है तो अगले वाल्व की ग्रिड पर दी गई ध्वनि की वोल्टेज अधिक

1. श्रेणी में एक और कन्डेन्सर लगाने के बाद कैपेसिटी नियमानुसार होगी।

$$\frac{1}{C}=\frac{1}{C_1}+\frac{1}{C_2}$$

अतः $$\frac{1}{C}=\frac{1}{30}+\frac{1}{100}=\frac{130}{3000}$$

$$C=\frac{3000}{130}=23 \text{ पि. फै.}$$

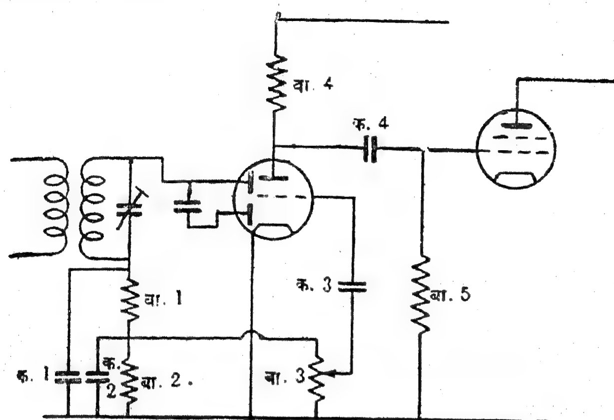
अधिक ट्यूनिंग कैपेसिटी रखने पर

$$\frac{1}{C}=\frac{1}{C_1}+\frac{1}{C_2}$$

अतः कुल कैपेसिटी$$=\frac{1}{\frac{1}{100}+\frac{1}{300}}$$

$$=\frac{30000}{400}=75 \text{ पि. फै.}$$

होती है अतः ध्वनि (वाल्यूम) भी अधिक होती है। जब यह बाधा कम होती है तो ध्वनि की वोल्टेज कम होती है अतः ध्वनि (वाल्यूम) कम होती है।



चित्र 147. वाल्यूम कन्ट्रोल.

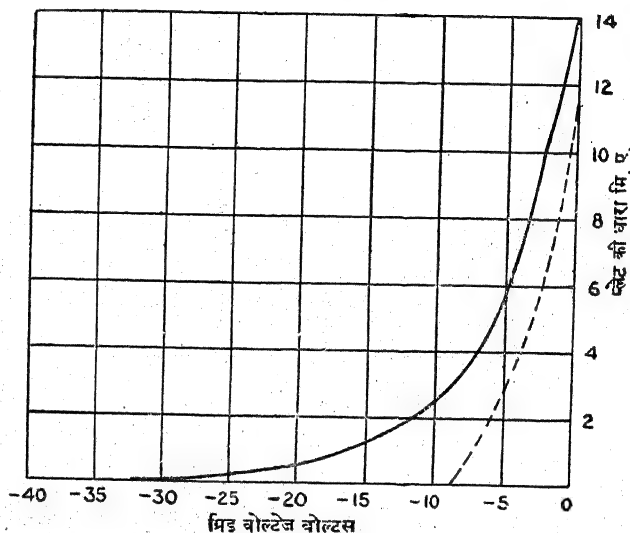
ऑटोमेटिक वाल्यूम कन्ट्रोल[1] (automatic volume control or a. v. c.)—रिसीवर के लाउडस्पीकर पर प्राप्त ध्वनि का परिमाण (volume) उसके एरियल पर प्राप्त लहर के परिमाण पर निर्भर रहता है। ट्रान्समिटर (प्रेषक) से रिसीवर तक यह संदेश ईथर में होकर आते हैं। वायुमण्डल की विभिन्न दशाओं के कारण रिसीवर के एरियल पर प्राप्त लहर का परिमाण घटता-बढ़ता है। (विशेष प्रकरण 20) एरियल पर प्राप्त लहर का इस प्रकार घटना-बढ़ना अंग्रेज़ी में फेडिंग कहलाता है। छोटी लहरों पर फेडिंग अन्य लहरों से अधिक होता है।

फेडिंग के कारण रिसीवर पर प्राप्त लहर की वोल्टेज घटती-बढ़ती रहती है। इस घटने-बढ़ने के कारण लाउडस्पीकर पर प्राप्त ध्वनि भी घटती-बढ़ती है। ध्वनि का इस प्रकार घटना-बढ़ना कार्यक्रमों की रोचकता बहुत कम कर देता है। इस घटने-बढ़ने को रोकने के लिए रिसीवरों में ऑटोमेटिक वाल्यूम कन्ट्रोल (ए वी.सी. a. v c.) का प्रयोग किया जाता है।

रिसीवरों में ए वी. सी. प्राप्त करने के लिए एक विशेष प्रकार के वाल्व जो, कि वैरिएबिल-म्यू-वाल्व कहलाते हैं प्रयोग किये जाते हैं। जैसा कि नाम से ही विदित

1. ऑटोमेटिक (automatic)=स्वचालित।
   वाल्यूम (volume)=ध्वनि।
   कन्ट्रोल (control)=नियंत्रण।

होता है इस वाल्व का म्यू (अथवा वर्धनाश) वैरियेबिल (परिवर्तनशील) होता है। इस प्रकार के वाल्व में ग्रिड की वोल्टज बदलने पर प्लेट की धारा किस प्रकार बदलती है यह चित्र 148 में दिखाया गया है । इसी चित्र में तुलना के लिए एक



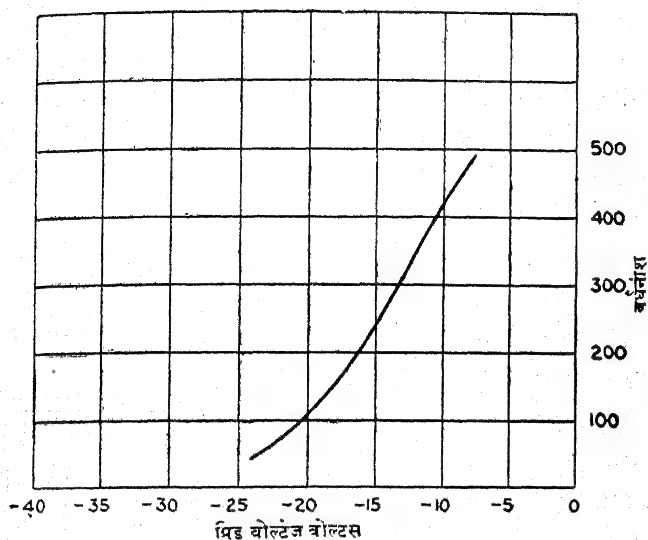
चित्र 148.

वैरियेबिल मयू वाल्व में ग्रिड वोल्टेज और प्लेटकी धारा का सम्बन्ध.

साधारण वाल्व का भी सम्बन्ध दिखाया गया है । जैसा कि इस चित्र से विदित होगा, परिवर्तनशील वर्धनांश वाल्व में कट ऑफ़ बिन्दु बहुत अधिक ऋण वोल्टेज पर होता है और साथ हो धारा बहुत धीरे-धीरे बदलती है । चित्र 149 में इस प्रकार के वाल्व की ग्रिड वोल्टेज और वर्धनांश का सम्बन्ध दिखाया गया है । इस चित्र से यह स्पष्ट हो जावेगा कि इस प्रकार के वाल्व का वर्धनांश ग्रिड वोल्टेज पर निर्भर करता है । ग्रिड वोल्टेज अधिक ऋण होने पर इसका वर्धनांश कम होता है और ग्रिड वोल्टेज कम ऋण होने पर वर्धनांश अधिक होता है ।

परिवर्तनशील वर्धनांश (वैरियेबिल म्यू) वाल्वों में यह प्रभाव प्राप्त करने के लिए ग्रिड की रचना असमान की जाती है । चित्र 150 में एक परिवर्तनशील-वर्धनांश वाल्व, और एक साधारण वाल्व इन दोनों की ग्रिड की रचनाएँ दिखाई गई हैं ।

जिन रेडियो (ग्राहक) में ए वी. सी. (a. v. c.) दिया जाता है, उनमें



चित्र 149.

वैरियेबिल म्यू वाल्व में ग्रिड वोल्टेज और वर्धनांश का सम्बन्ध.



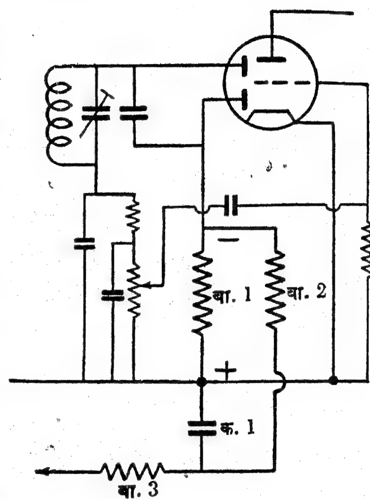


चित्र 150.

वैरियेबिल म्यू और साधारण वाल्व इन दोनों की ग्रिड की रचना में अन्तर.

रेडियो और मध्यम लहर वर्धन के लिए परिवर्तन-शील-वर्धनांश (वेरियेबिल-म्यू) वाल्वों का उपयोग किया जाता है, साथ ही इन वाल्वों की ग्रिड पर दी जाने वाली वोल्टेज एरियल पर प्राप्त वोल्टेज पर निर्भर रहती है। इनमें ऐसा प्रबन्ध किया जाता है कि जिस समय एरियल पर प्राप्त लहर की वोल्टेज अधिक हो उस समय इन वाल्वों की ग्रिड अधिक ऋण हो जावे। प्राप्त लहर की वोल्टेज कम होने पर इन वाल्वों की ग्रिड भी कम ऋण हो जाती है। इस प्रबन्ध के कारण जब एरियल पर प्राप्त लहर की वोल्टेज अधिक होती है उस समय (ग्रिड अधिक ऋण होने के कारण) वाल्वों का वर्धनांश (अतः वर्धन) कम हो जाता है और ध्वनि अधिक नहीं बढ़ती। इसके विपरीत जिस समय एरियल पर प्राप्त लहर की वोल्टेज कम हो जाती है उस समय ग्रिड कम ऋण (—ive) होने के कारण वर्धनांश (अतः वर्धन) बढ़ जाता है और इस प्रकार ध्वनि को कम होने से रोकता है।

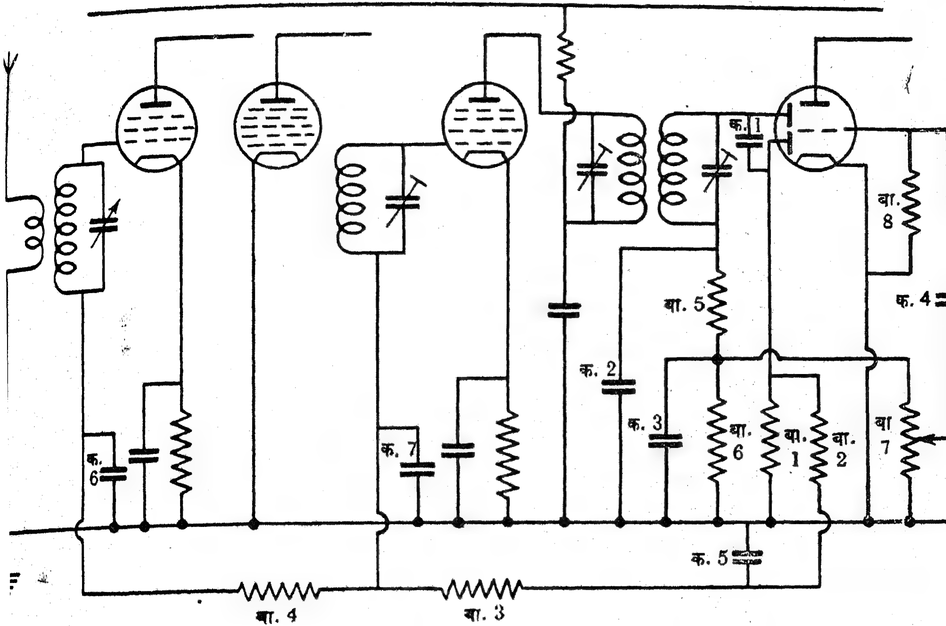
चित्र 151 में ए. वी. सी. के लिए ग्रिड वोल्टेज प्राप्त करने के लिए प्रयुक्त सरकिट दिखाया गया है। इसमें रेडियो लहर के डिक्टेशन से डी. सी. तथा ध्वनि की वोल्टेज प्राप्त होती है। इनमें से ध्वनि की वोल्टेज एक कन्डेन्सर में होकर ध्वनि वर्धक को दे दी जाती है। डी. सी., बा. 3 द्वारा विभिन्न वाल्वों की ग्रिड पर दे दी जाती है। कन्डेन्सर क. 1 का प्रयोग ए. वी. सी. के लिए प्रयुक्त डी. सी. को स्थायी करने के लिए किया गया है। यह वोल्टेज इस प्रकार दी जाती है कि वाल्वों की ग्रिड पर वोल्टेज ऋण हो। यह वोल्टेज डिटेक्टर पर प्राप्त रेडियो लहरों की वोल्टेज पर निर्भर रहती है और डिटेक्टर पर प्राप्त लहरें एरियल पर प्राप्त लहरों पर। अतः जब एरियल पर प्राप्त लहरों की वोल्टेज कम होगी तो ए. वी. सी. के लिए दी जाने वाली डी सी. की वोल्टेज भी कम होगी। जिस समय एरियल पर प्राप्त लहर अधिक होगी उस समय ए. वी. सी. के लिए दी जाने वाली वोल्टेज भी अधिक होगी। इस प्रकार यह प्रबन्ध ध्वनि की घटने-बढ़ने से स्वतः ही रोकेगा।



चित्र 151. ए. वी. सी.

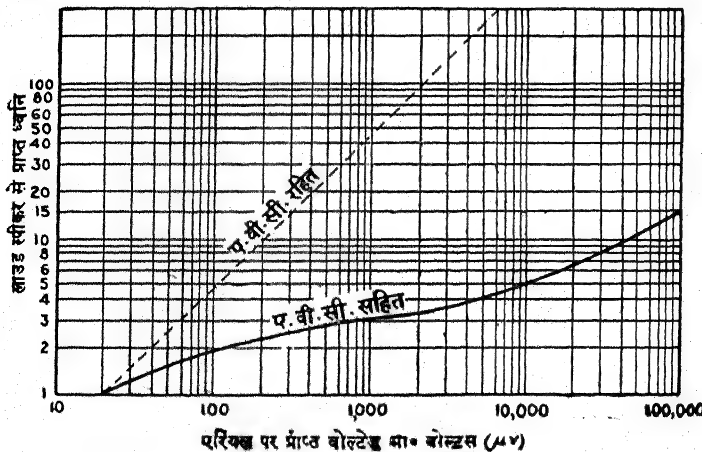
आजकल डिटेक्शन तथा ए. वी. सी. के लिए प्रायः अलग-अलग डायोड काम में लाये जाते हैं। इस काम के लिए अधिकतर डबल डायोड ट्रायोड वाल्व का प्रयोग किया जाता है। इनमें से एक डायोड डिटेक्शन के लिए और दूसरा ए वी. सी के लिए डी. सी. प्राप्त करने के लिए काम में लाया जाता है। ट्रायोड डिटेक्शन से प्राप्त ध्वनि की लहरों का वर्धन करता है। चित्र 152 में एक आधुनिक रेडियो के विभिन्न वाल्वों पर ए. वी. सी. देने का प्रबन्ध दिखाया गया है।

चित्र 153 में ए वी. सी. के कारण ध्वनि किस परिमाण में स्थायी होती है यह दिखाया गया है। बिन्दीदार रेखा बिना ए. वी. सी. के रिसीवर के एरियल पर प्राप्त वोल्टेज और लाउडस्पीकर पर प्राप्त ध्वनि का सम्बन्ध दिखाया गया है। दूसरी रेखा ए. वी. सी. प्रयुक्त रिसीवर में वही सम्बन्ध दिखाती है। इस प्रकार बिना ए. वी. सी. के जब एरियल पर प्राप्त वोल्टेज 20μV से 1000μv (1mv) होती



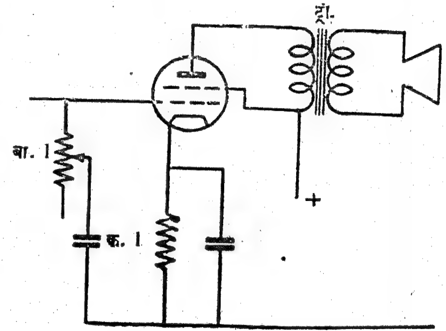
चित्र 152. विभिन्न वाल्वों की ग्रिड पर ए. वी. सी. वोल्टेज देने का प्रबन्ध.

है तो ध्वनि वोल्टेज 1 से 50 हो जाती है और इस प्रकार यह पचास गुनी हो जाती है। ए. वी. सी. के साथ उतनी ही वोल्टेज पर ध्वनि केवल तीन गुनी हो पाती है। इस उदाहरण से ए. वी. सी. का लाभ स्पष्ट हो जावेगा।



चित्र 153. ए. वी. सी. का प्रभाव.

टोन कन्ट्रोल—विभिन्न व्यक्तियों की रुचियाँ भी विभिन्न होती हैं। यही बात स्वर के सम्बन्ध में भी है। कुछ व्यक्तियों को अधिक सुरीला स्वर पसन्द होता है और कुछ को कम। टोन कन्ट्रोन से लाउडस्पीकर पर प्राप्त ध्वनि को कम अथवा अधिक सुरीला किया जा सकता है। टोन कन्ट्रोन अधिकतर आउटपुट वाल्व की ग्रिड अथवा प्लेट पर लगाया जाता है। चित्र 154 में इसका सिद्धान्त दिखाया गया है। इसमें कन्डेन्सर क. 1 तथा बाधक बा. 1 का उपयोग विभिन्न स्वर (टोन) प्राप्त करने के लिए किया गया है। कन्डेन्सर की बाधा कम फ्रीक्वेंसी पर अधिक तथा अधिक फ्रीक्वेंसी पर कम होती है। उपर्युक्त सरकिट में वाल्व की ग्रिड पर प्राप्त फ्रीक्वेंसियों के लिए कुल रुकावट बा (1) तथा कन्डेन्सर क. (1) की सम्मिलित बाधा के बराबर है। जिस समय बाधक की बाधा अधिक होती है उस समय यह रुकावट बहुत होती है और कोई विशेष प्रभाव नहीं डालती। इसके विपरीत जैसे-जैसे यह बाधा घटाई जाती है वैसे-वैसे ही यह कुल रुकावट कम फ्रीक्वेंसियों की अपेक्षा अधिक फ्रीक्वेंसियों के लिए तेजी से घटती है। इस कारण इस बाधक की बाधा कम रखने पर अधिक फ्रीक्वेंसी की धाराओं की वोल्टेज कम होगी और इस प्रकार ध्वनि कम सुरीली[1] होगी इस प्रकार बाधक बा. 1 (वैरियेबिल) की बाधा बदलने से ध्वनि का सुरीलापन भी बदला जा सकता है।



चित्र 154. टोन कन्ट्रोल

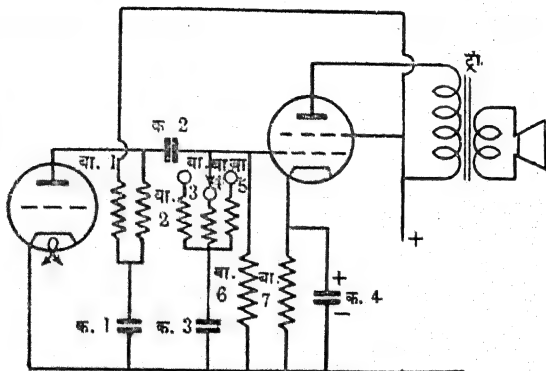
चित्र 155 में टोन कन्ट्रोल के लिए प्रयुक्त एक अन्य प्रबन्ध दिखाया गया है। इसमें वैरियेबिल बाधक के स्थान पर तीन अलग-अलग बाधक प्रयोग किये गये हैं। एक स्विच द्वारा इनमें से कोई एक बाधक सरकिट में लगाया जा सकता है। इस प्रबन्ध में ध्वनि का सुरीलापन बाधक की बाधा पर निर्भर करता है। इस प्रकार इसमें तीन अलग-अलग स्वर की ध्वनियाँ प्राप्त की जा सकती हैं।

मैजिक आई (magic eye)—आधुनिक रिसीवरों में ऑटोमेटिक वाल्यूम

---

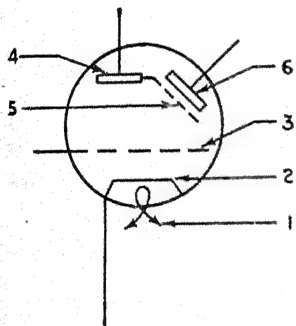
1. यदि ध्वनि में अधिक फ्रीक्वेंसी की धारायें अधिक हों तो वह अधिक सुरीली होगी।

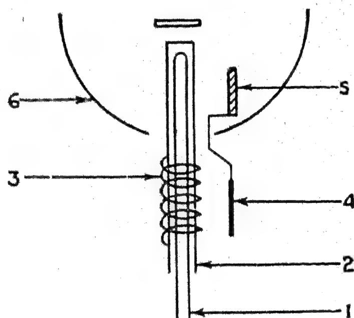
कन्ट्रोल के कारण उसकी ध्वनि द्वारा स्टेशन के ठीक ट्यून होने का पता नहीं चलता। और यदि स्टेशन ठीक ट्यून नहीं हुआ हो तो आवाज ठीक नहीं आती। इस कठिनाई को दूर करने के लिए इस प्रकार की युक्ति काम में लाई जाती है जिसके द्वारा स्टेशन ठीक ट्यून किये जा सकें। इस युक्ति को अंग्रेजी में मैजिक आई (magic eye=जादू का नेत्र) कहते हैं।



चित्र 155. टोन कन्ट्रोल के लिए एक प्रयुक्त अन्य प्रबन्ध.

चित्र 156 में मैजिक आई का सिद्धान्त बताने वाले चित्र और उसका चिन्ह दिखाया गया है। इसमें दो अलग अलग भाग होते हैं। इनमें से एक ट्रायोड होता है तथा दूसरा ट्यूनिंग बताने वाला। इस चित्र में 156 (ii) के नीचे का भाग





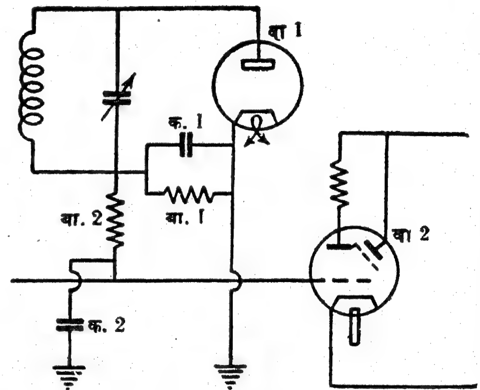
चित्र 156. मैजिक आई के लिए प्रयुक्त चिन्ह (i)
मैजिक आई का सिद्धान्त (ii)

ट्रायोड है तथा ऊपर का भाग ट्यूनिंग बताता है। इस ऊपरी भाग में गोलाई लिए हुए एक इलक्ट्रोड रहता है। यह ट्यूनिंग बताने वाले भाग की प्लेट होती है। इस पर लगाया हुआ पदार्थ इलक्ट्रोन पड़ने पर चमकता है। ट्यूनिंग बताने वाले भाग

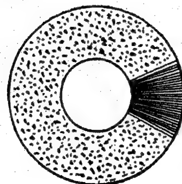
की प्लेट के सामने एक ग्रिड रहती है। इस ग्रड के ऋण होने के कारण इलक्ट्रोन इससे दूर रहते हैं। इस कारण ट्यूनिंग बताने वाली प्लेट के कुछ हिस्से पर इलक्ट्रोन नहीं पहुँचने पाते और वह स्थान नहीं चमकता है। यह स्थान एक प्रकार से ग्रिड की छाया में होता है। यदि ग्रिड अधिक ऋण होगी तो छाया अधिक होगी और कम ऋण होगी तो कम।

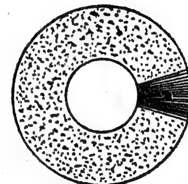
इस युक्ति को अधिक उपयुक्त बनाने के लिए इस वाल्व का ट्रायोग भाग वर्धक के रूप में प्रयुक्त किया जाता है। इसके द्वारा ए. वी. सी. वोल्टेज वर्धित की जाती है। चित्र 157 में मैजिक आई रिसीवर में किस प्रकार लगाई जाती है यह दिखाया गया है।

ट्यून करते समय जैसे-जैसे वांछित स्टेशन ट्यून होता है वैसे-वैसे a. v. c. की ऋण वोल्टेज बढ़ती है। इस वोल्टेज के कारण ट्रायोड भाग की ग्रिड अधिकाधिक ऋण होने लगती है। ऋण होने के कारण बाधक में होकर कम धारा बहती है। धारा कम होने के कारण बाधक के सिरों पर वोल्टेज ड्राप भी कम होता है अतः ट्यूनिंग भाग की ग्रिड अधिक धन (+ive) हो जाती है। जैसे-जैसे वह धन होता है वैसे-वैसे उसकी छाया भी कम होती जाती है। जब स्टेशन बिल्कुल ठीक ट्यून होता है उस समय a. v. c.



चित्र 157. मैजिक आई का सरकिट.

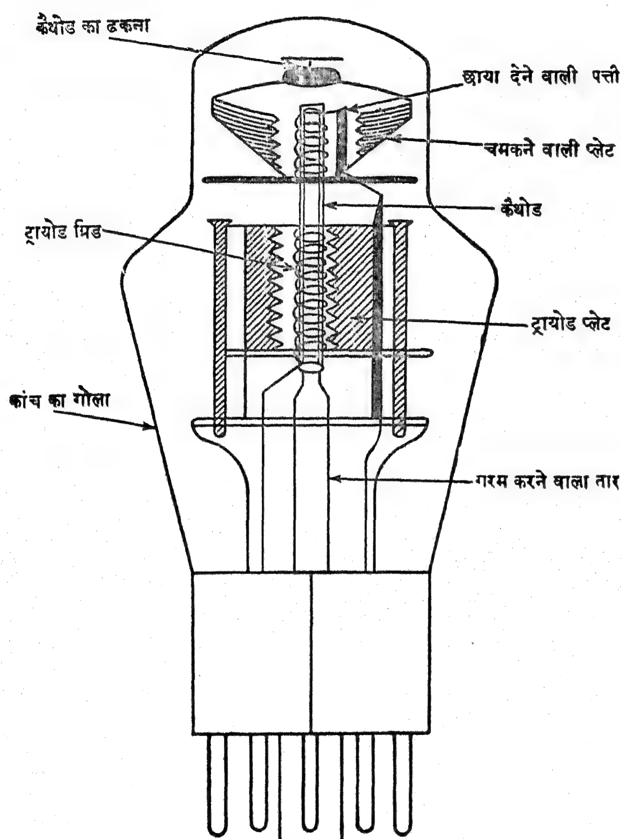

(i)


(ii)

चित्र 158. मैजिक आई की साधारण तथा ट्यून्ड स्थिति.

वोल्टेज सबसे अधिक (maximum) ऋण होती है इसलिए ट्रायोड में हो र

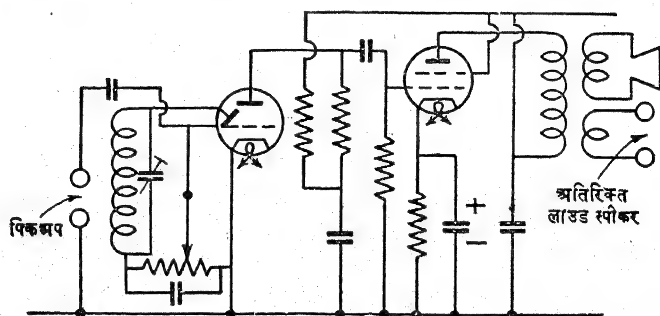
सबसे कम (minimum) धारा बहती है और ट्यूनिंग भाग की ग्रिड अधिक धन होने के कारण छाया कम होती है । इस प्रकार जब छाया सबसे कम (minimum) होती है। उस समय ट्यूनिंग बिल्कुल ठीक होती है। चित्र 158 में यह दिखाया गया है। चित्र 159 में एक ट्यूनिंग बताने वाले बाल्व की रचना दिखाई गई है ।



चित्र 159. मैजिक आई की रचना.

पिक अप लगाने का प्रबन्ध (Connection for pick up)—साधारणतः ग्रामोफोन से ध्वनि साउन्ड बॉक्स में लगाई हुई एक सूई से प्राप्त की जाती है। इस प्रबन्ध से ग्रामोफोन से ध्वनि प्राप्त होती है परन्तु यदि उस ध्वनि के वर्धन की आवश्यकता हो तो उसका विद्युत की लहरों के रूप में होना आवश्यक है । साउन्ड

बॉक्स (sound box) के स्थान पर पिक अप लगाने से ध्वनि विद्युत लहरों के रूप में प्राप्त हो जाती है। यह ध्वनि रिसीवर के ध्वनि वर्धक द्वारा वर्धित की जा सकती है। पिक अप को इस प्रकार लगाने में सुविधा की दृष्टि से प्रायः रिसीवर के पीछे दो तारों के लिए स्थान होता है। चित्र 160 में यह प्रबन्ध दिखाया गया है।



चित्र 160. पिक अप तथा अतिरिक्त लाउडस्पीकर लगाने का प्रबन्ध.

इसमें पिक अप से प्राप्त लहरें प्रथम ध्वनि वर्धक की ग्रिड पर दे दी जाती है।

अलग लाउडस्पीकर लगाने का प्रबन्ध—चित्र 160 में अलग लाउडस्पीकर किस प्रकार लगाया जा सकता है यह भी दिखाया गया है। प्रायः अलग स्पीकर लगाने के लिए आउटपुट ट्रान्सफार्मर पर दो अलग सैकन्डरी बँधी होती हैं। इनमें से एक रिसीवर के अन्दर के लाउडस्पीकर पर जोड़ दी जाती है दूसरी से दो तार अलग स्पीकर लगाने के लिए रिसीवर में लगा दिये जाते हैं।

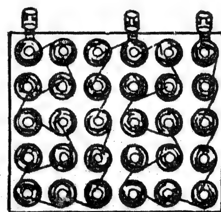
सत्रहवाँ प्रकरण

शक्ति स्रोत

(Power Supplies)

क्रस्टल डिटेक्टर के अतिरिक्त अन्य सभी रिसीवरों में वाल्वों के फिलामेंट गरम करने तथा विभिन्न इलेक्ट्रोडों पर देने के लिए उपयुक्त वोल्टेज आवश्यक है। इस विद्युत को प्राप्त करने का सबसे सरल साधन शुष्क बैटरियाँ हैं । रेडियो में दो बैटरियाँ आवश्यक होती हैं। एक कम वोल्टेज' की, वाल्वों के फिलामेंट गरम करने के लिए, दूसरी अधिक वोल्टेज की अन्य इलेक्ट्रोडों पर वोल्टेज देने के लिए । चित्र 161 में अधिक वोल्टेज प्राप्त करने के लिए प्रयुक्त बैटरी और उसकी रचना दिखाई गई





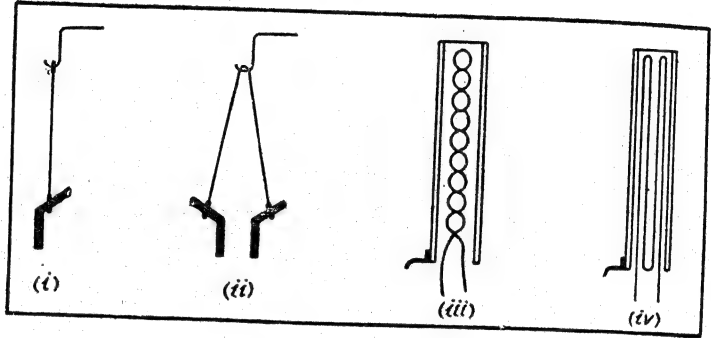
चित्र 161.

अधिक वोल्टेज प्राप्त करने के लिए प्रयुक्त बैटरी और इसकी रचना.

है। प्रायः यह दोनों बैटरियाँ एक ही बक्से में बनाई जाती हैं ।

इस कार्य के लिए शुष्क बैटरियाँ बहुत महँगी होती हैं। इनकी अपेक्षा मेन्स द्वारा प्राप्त बिजली बहुत सस्ती होती है । परन्तु इसके उपयोग में अनेक कठिनाइयाँ रहती हैं। मेन्स से प्राप्त बिजली प्रायः ए. सी. होती है जब कि रेडियो के लिए डी. सी. की आवश्यकता होती है। यदि फिलामेंट गरम करने के लिए ए. सी. प्रयोग की जाय तो—ए. सी. में विद्युतधारा बदलते रहने के कारण—फिलामेंट कई बार ठंडा होगा और

इसकी वोल्टेज भी बदलेगी। इस कारण वाल्व के फिलामेंट से निकलने वाले ऋण विद्युत-कणों की संख्या में परिवर्तन होगा। वाल्व में इस परिवर्तन से भुनभुनाहट (hum) उत्पन्न हो जाती है। इसे दूर करने के लिए ए. सी. से गरम किये जाने वाले वाल्वों में—गरम करने वाला तार कैथोड से अलग रहता है। इस प्रकार के वाल्वों में कैथोड, फिलामेंट

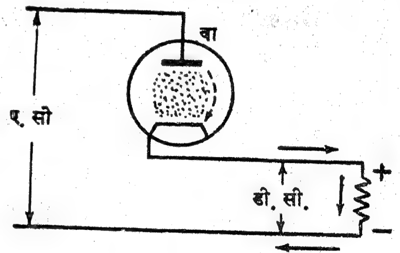


चित्र. 162.

वाल्वों के फिलामेंट (i, ii) और कैथोड (iii और iv) की रचना.

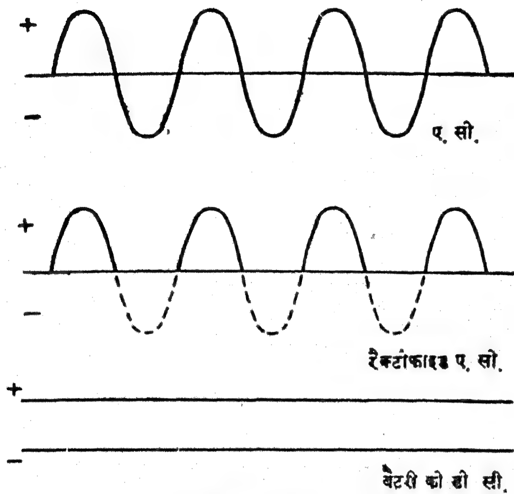
से भारी होते हैं अतः शीघ्र ठंडे नहीं होते अतः इस प्रकार के वाल्व ए. सी. से भी गरम किये जा सकते हैं। चित्र 162 में दोनों प्रकार के वाल्वों के फिलामेंट तथा कैथोड की रचना दिखाई गई है।

प्लेट तथा अन्य इलक्ट्रोडों के लिए ए. सी. से डी. सी.—विभिन्न इलक्ट्रोडों पर, देने के लिए डी. सी. मेन्स से प्राप्त ए. सी. का रैक्टीफिकेशन करके प्राप्त की जा सकती है। चित्र 163 में दिखाया गया सरकिट इस कार्य के लिए प्रयोग में लाया जा सकता है। इस सरकिट में डायोड वाल्व का प्रयोग किया जाता है। डायोड वाल्व में होकर विद्युतधारा एक ही दिशा में जा सकती है अतः यह डी. सी. में बदल जाती है। चित्र 164 में ए. सी., इससे प्राप्त डी. सी. (ख) तथा बैटरी से प्राप्त डी. सी. (ग) दिखाई गई है। इस चित्र से ज्ञात होगा कि ऊपर के सरकिट से प्राप्त डी. सी की वोल्टेज बदलती रहती है। रेडियो पर कार्यमें लाने



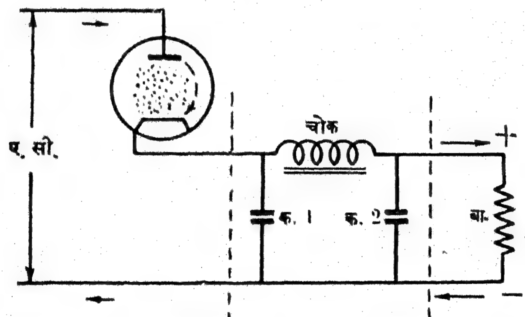
चित्र 163. डायोड का ए. सी. को डी. सी. बनाने के लिए प्रयोग.

के लिए इसको स्थायी करना आवश्यक है । स्थायी करने के लिए कन्डेन्सर तथा इन्डक्टेंस का प्रयोग किया जाता है। चित्र 165 में कन्डेन्सर तथा इन्डक्टेन्स का इस कार्य के लिए प्रयोग दिखाया गया है ।



चित्र 164.

जिस समय रैक्टीफॉयर पर प्राप्त वोल्टेज अधिक होती है उस समय कन्डेन्सर कउस. 1 वोल्टेज तक चार्ज हो जाता है । जिस समय यह वोल्टेज कम होती है उस समय कन्डेन्सर विद्युत देता रहता है। इस प्रकार वोल्टेज कुछ स्थायी हो जाती है। चोक इस वोल्टेज को और अधिक स्थ:यी करती है।

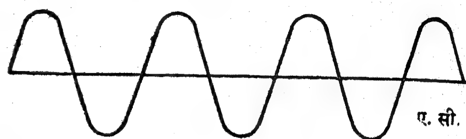


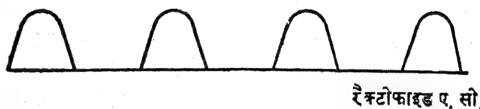
चित्र 165. रैक्टीफाइड ए. सी. को स्थायी करने के लिए कन्डेन्सर और इन्डक्टेंस का प्रयोग.

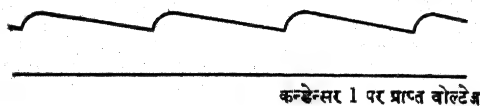
कन्डेन्सर क. 2 इस प्रभाव को और भी बढ़ा देता है । इस प्रकार स्थायी डी.सी.

प्राप्त हो जाती है। चित्र 166 में इन्डक्टेंस तथा कन्डेन्सर का यह कार्य समझाया गया है।

ट्रान्सफॉर्मर तथा डबल डायोड वाल्व का प्रयोग—ऊपर वर्णित सरकिट में ए. सी. का केवल आधा भाग ही कार्य में आता है। ए. सी. के पूरे भाग को काम में लाने के लिए चित्र 167 में दिखाया गया सरकिट आवश्यक है। इसमें डबल डायोड वाल्व का उपयोग किया गया है। ट्रान्सफॉर्मर मेन्स की वोल्टेज को आवश्यक वोल्टेज में बदल देता है। इस ट्रान्स-फॉर्मर के सैकन्डरी में तीन अलग-अलग कॉइल होते हैं। इनमें से एक डायोड वाल्व का फिलामेंट गरम करने के लिए, दूसरा अन्य वाल्वों के फिलामेंट गरम करने के लिए तथा तीसरा वाल्वों के इलक्ट्रोडों पर देने के लिए डी. सी. प्राप्त करने के लिए प्रयुक्त किया जाता है। इस तीसरे कॉइल के दोनों सिरे रैक्टीफायर वाल्व की प्लेटों से जुड़े रहते हैं। इस तीसरे कॉइल के बीच में से एक तार निकाला रहता है। डी. सी. वोल्टेज, वाल्व के कैथोड तथा बीच के तार इन दोनों के सिरों पर प्राप्त होती है। इस सरकिट में ट्रान्सफॉर्मर पर वांछित डी. सी. से लगभग दूनी वोल्टेज प्राप्त होती है। जिस समय ट्रान्सफार्मर का ऊपर का हिस्सा धन होता है उस समय धारा एक प्लेट में होकर जाती है। जिस समय नीचे का सिरा धन होता है उस समय धारा दूसरी प्लेट में होकर जाती है। इस प्रकार ट्रान्सफॉर्मर





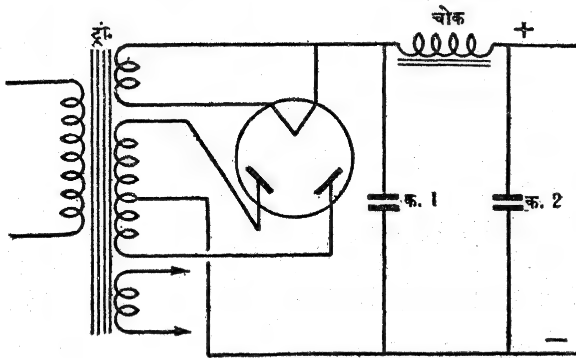






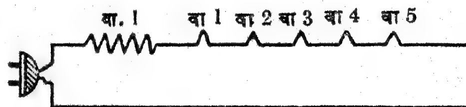
चित्र 166. कन्डेन्सर और इन्डक्टेंस का रैक्टीफाइड ए. सी. का स्थायी करना.

के बीच में से लिया गया तार ऋण और वाल्व का फिलामेंट धन रहता है। कन्डेन्सर तथा इन्डक्टेंस का प्रयोग डी. सी. को स्थायी करने के लिए किया गया है। इस सरकिट से पूरी ए. सी काम में आती है।



चित्र 167. डबल डायोड प्रयुक्त शक्ति स्रोत.

डी. सी. प्रयुक्त स्रोत—यदि ए. सी. के स्थान पर डी. सी. मेन्स का प्रयोग किया जाये तो वाल्वों की प्लेट पर देने के लिए वोल्टेज मेन्स से ही मिल जाती है। परन्तु इस वोल्टेज के अधिक होने के कारण इससे वाल्वों के फिलामेंट गरम नहीं किये जा सकते। इस प्रकार के रेडियो में प्रयुक्त वाल्वों के फिलामेंट इस प्रकार के बनाये जाते हैं कि प्रत्येक वाल्व समान धारा लें। उदाहरण के लिए यदि एक वाल्व ·15 एम्पीयर धारा लेता है तो यह आवश्यक है कि शेष सब वाल्व भी इतनी ही धारा लें। यह वाल्व गरम करने के लिए श्रेणीबद्ध लगाये जाते हैं। चित्र 168 में डी. सी. से गरम करने का प्रबन्ध दिखाया गया है। इस सरकिट में प्रयुक्त बाधक वाल्वों की धारा सीमित करता है। वाल्वों को गरम करने के इस प्रबन्ध में एक कठिनाई यह रहती है कि वाल्वों की बाधा गरम होने पर ठंडे की अपेक्षा कई गुनी हो जाती है अतः जब वाल्वों में धारा प्रारम्भ की जाती है तो आवश्यक धारा से कई गुनी अधिक धारा प्रवाहित होती है। इस कारण वाल्व जल्दी खराब हो जाते हैं। इस कठिनाई को दूर करने के लिए एक विशेष

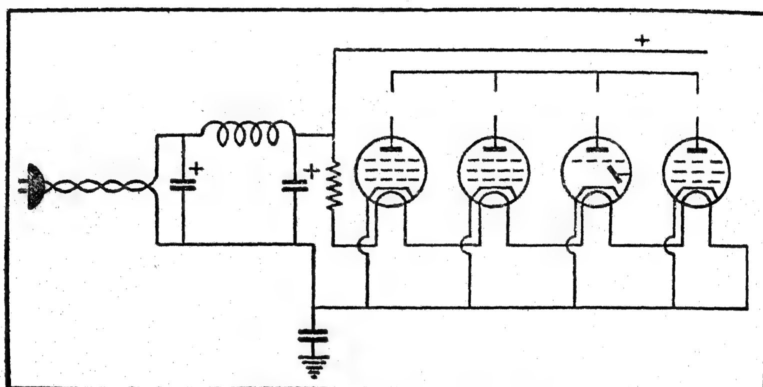


चित्र 168.

डी. सी. ए. सी., डी. सी. रेडियो में वाल्व गरम करने का प्रबन्ध.

प्रकार के बाधक श्रेणी में प्रयोग किये जाते हैं । इस प्रकार के बाधक में ठंडे होने पर बाधा गरम की अपेक्षा कई गुना अधिक होती है अतः प्रारम्भ में धारा अधिक नहीं होने पाती । यह बाधक अंग्रेजी में प्रायः बैरेटर कहलाते हैं ।

चित्र 169 में एक डी. सी. प्रयुक्त शक्ति स्रोत का चित्र दिखाया गया है। इसमें कन्डेन्सर और इन्डक्टेंस के प्रयोग से प्राप्त वोल्टेज स्थायी की जाती है । यह

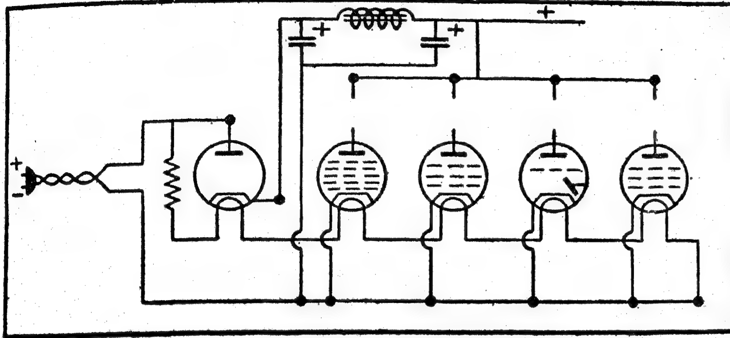


चित्र 169. डी. सी. प्रयुक्त शक्ति स्रोत.

वोल्टेज वाल्व की प्लेटों पर दे दी जाती है । गरम करने का प्रबन्ध पिछले चित्र में दिखाया जा चुका है । आजकल केवल डी. सी. पर काम दे सकने वाले रेडियो नहीं बनाये जाते । इनके स्थान पर ए. सी. और डी. सी. दोनों द्वारा ही शक्ति प्राप्त कर सकने वाले रेडियो बनाये जाते हैं ।

ए. सी. डी. सी. दोनों के लिए उपयुक्त शक्ति स्रोत—ए. सी. और डी. सी. दोनों से शक्ति प्राप्त कर सकने वाले रेडियो में गरम करने का प्रबन्ध डी. सी. का जैसा ही रहता है । वाल्वों की प्लेट तथा अन्य इलक्ट्रोडों पर देने के लिए डी. सी. डायोड वाल्व के प्रयोग से प्राप्त की जाती है । चित्र 170 में ए. सी तथा डी. सी. दोनों में शक्ति प्राप्त कर सकने वाले रेडियो का शक्ति स्रोत दिखाया गया है। डी. सी. पर भी प्रयुक्त होने के कारण इसमें ट्रान्सफॉर्मर का प्रयोग नहीं किया जा सकता । जब यह सरकिट ए. सी. पर काम में लाया जाता है उस समय वाल्व ए. सी. को रैक्टीफाई करता है और कन्डेन्सर व इन्डक्टेंस इसको स्थायी कर देते हैं । इसमें ए. सी. की केवल आधी लहर ही काम में आती है । डी. सी. पर प्रयोग करते समय

वाल्व में होकर धारा उसी समय बहेगी जब कि प्लेट धन होगी । अतः डी. सी. पर प्रयोग करते समय यह आवश्यक है कि प्लग इस प्रकार लगाया जाये कि डायोड वाल्व



चित्र 170. ए. सी. व डी. सी. दोनों के लिए प्रयुक्त शक्ति स्रोत.

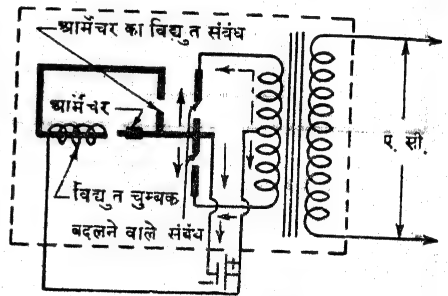
की प्लेट धन हो । यदि यह प्लग उल्टा लगा गया तो रेडियो काम नहीं करेगा ।

स्टोरेज बैटरी प्रयुक्त शक्ति स्रोत—मोटर वायुयान तथा अन्य कई स्थानों पर स्टोरेज बैटरियों से ही विद्युत प्राप्त की जा सकती है । स्टोरेज बैटरियाँ प्रायः 6 या 12 वोल्ट देती है । वाल्वों के फिलामेंट गरम करने के लिए यह वोल्टेज बिना किसी परिवर्तन के काम में लाई जा सकती है परन्तु प्लेट तथा अन्य इलक्ट्रोडों पर देने के लिए यह वोल्टेज बहुत कम है । डी. सी. होने के कारण यह वोल्टेज ट्रान्सफॉर्मर द्वारा बढ़ाई भी नहीं जा सकती । यदि यह वोल्टेज किसी प्रकार ए. सी. में बदल दी जाये तो इसके बढ़ाने के लिए ट्रान्सफॉर्मर का प्रयोग किया जा सकता है। इस प्रकार स्टोरेज बैटरियों से अधिक से अधिक वोल्टेज प्राप्त करने के लिए निम्न बातों की आवश्यकता होती है—

1. डी. सी. का ए. सी. में बदलना ।
2. ए. सी को आवश्यक वोल्टेज तक बढ़ाना ।
3. ए. सी. को स्थायी डी. सी. में बदलना ।

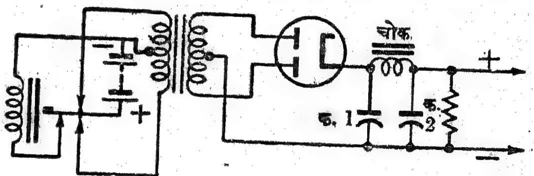
दूसरी तथा तीसरी आवश्यकताओं के साधनों (ट्रान्सफॉर्मर तथा रैक्टीफायर) का वर्णन ऊपर किया जा चुका है । पहली के लिए डी. सी. को ए. सी. में बदलने के युक्ति आवश्यक होती है । यह युक्ति वाइब्रेटर कहलाती है । चित्र 171 में वाइब्रेटर

का सिद्धान्त दिखाया गया है। बाइब्रेटर में लोहे के टुकड़े पर कुछ तार लिपटा रहता है। इस तार में होकर धारा बहती है। जब इस तार में होकर धारा बहती है तो वह लोहे का टुकड़ा चुम्बकीय हो जाता है और लोहे के आर्मेचर (armature) को खींचता है। जैसे ही यह खिचता है वैसे ही आर्मेचर के विद्युत सम्बन्ध अलग हो जाते हैं और चुम्बकीय कॉइल में होकर धारा बहना बन्द हो जाता है। धारा बन्द होने पर लोहे का चुम्बकत्व समाप्त हो जाता है और स्प्रिंग के कारण आर्मेचर अपने स्थान पर वापिस आ जाता है। वापिस आने पर आर्मेचर के विद्युत सम्बन्ध फिर मिल जाते हैं और कॉइल में होकर धारा फिर बहने लगती है। इस प्रकार ऊपर वर्णित क्रिया बार-बार दोहराई जाती है। जब आर्मेचर बार-बार आगे-पीछे आता-जाता है तो इस पर लगे हुए दो अन्य विद्युत सम्बन्ध 'बदलने वाले सम्बन्ध' बार-बार बदलते हैं। इनके बदलने के कारण ट्रान्सफार्मर के प्राइमरी में धारा की दिशा भी बार-बार बदलती है। इस प्रकार डी. सी. ए. सी. में बदल जाती है।



चित्र 171. वाइब्रेटर का सिद्धान्त.

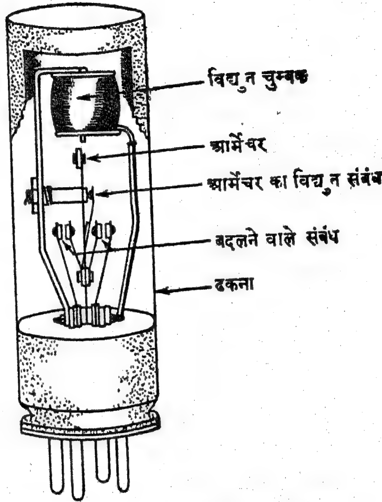
इस प्रकार प्राप्त ए. सी. ट्रान्सफॉर्मर द्वारा वांछित वोल्टेज तक बढ़ाई जाती है। इस कार्य के लिए स्टैप अप ट्रान्सफॉर्मर (step up transformer) प्रयुक्त किया जाता है। ए. सी. से डी. सी. प्राप्त करने के लिए प्रयुक्त सरकिट मेन्स के सरकिट का जैसा ही होता है। चित्र 172 में स्टोरेज बैटरी से शक्ति प्राप्त करने के लिए काम में लाये जाने वाला सरकिट दिखाया गया है। चित्र 173 में बाइब्रेटर की रचना दिखाई गई है।



चित्र 172. वाइब्रेटर प्रयुक्त शक्ति स्रोत.

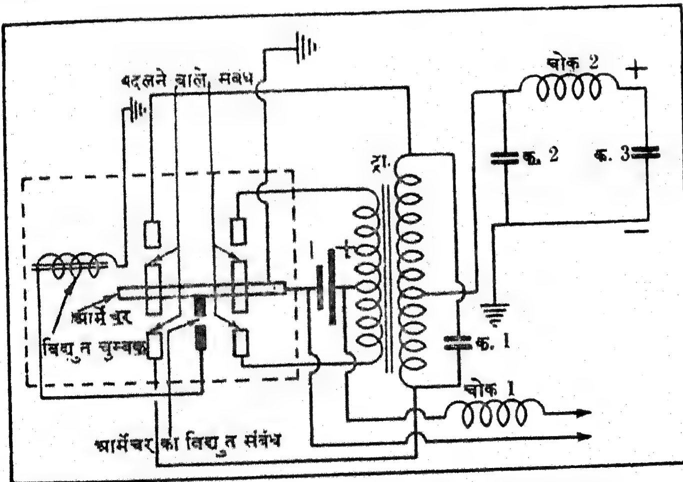
सिनक्रोनस वाइब्रेटर—ऊपर वर्णित वाइब्रेटर केवल डी. सी. को ए. सी. में

बदल सकता है । यदि इस वाइब्रेटर में एक के स्थान पर दो अलग विद्युत सम्बन्ध बदले जा सकें तो इसके दूसरे भाग द्वारा ए. सी., डी. सी. में भी बदली जा सकती है । इस प्रकार का यह नया वाइब्रेटर दो कार्य करेगा । इसका एक भाग डी. सी. को ए. सी. में बदलेगा तथा दूसरा भाग ए. सी. को डी. सी. में बदल देगा । इस प्रकार के वाइब्रेटर के साथ रैक्टीफायर की आवश्यकता नहीं रहती । यह सिनक्रोनस वाइब्रटर (Synchronus vibrator) कहलाता है ।



चित्र 173. वाइब्रेटर का रचना.

चित्र 174 में एक सिनक्रोनस वाइब्रेटर प्रयुक्त पावर सप्लाई का सरकिट दिखाया गया है । इस सप्लाई में वाइब्रेटर नीचे लिखी हुई तरह से काम करता है । वाइब्रेटर के दायें हाथ के सम्बन्ध



चित्र 174. सिनक्रोनस वाइब्रेटर प्रयुक्त शक्ति स्रोत.

(contacts) डी. सी. को ए. सी. में बदलते हैं । इसका कारण साधारण वाइब्रेटर

जैसा ही है । जब बीच का आर्मेचर आगे-पीछे आता है तो आर्मेचर पर लगे हुए दूसरे विद्युत सम्बन्ध भी साथ-साथ बदलते हैं । यह दोनों सम्बन्ध सामंजस्य (synchronisation) में होने के कारण ट्रान्सफॉर्मर की सैकेन्डरी पर प्राप्त वोल्टेज डी. सी. में बदल जाती है । कन्डेन्सर और इन्डक्टेंस मिलकर इस डी. सी. को स्थायी कर देते हैं और इस प्रकार स्थायी डी. सी. प्राप्त हो जाती है ।

साधारणतः वाइब्रेटर प्रयुक्त शक्ति स्रोत रेडियो फ्रीक्वेंसी पर शोर उत्पन्न करते हैं । अतः शोर को दूर करने के लिए वाइब्रेटर तथा ट्रान्सफॉर्मर पूर्ण रूप से आवरण में रखे जाते हैं और सरकिट में चोक और कन्डेन्सर लगा दिये जाते हैं । चित्र (174) में प्रयुक्त चोक 1 इसी कार्य के लिए प्रयुक्त किया गया है ।

अठारहवाँ प्रकरण

व्यवहारिक रेडियो

पिछले प्रकरणों में रेडियो के विभिन्न भागों के सिद्धान्त और कार्य का वर्णन किया जा चुका है। प्रस्तुत प्रकरण में व्यवहारिक रेडियो के वर्णन से वे सिद्धान्त स्पष्ट किये गये हैं।

रेडियो के विभाग—रेडियो के प्रमुखतः तीन विभाग किये जा सकते हैं—

1. आधार (chasis)
2. ढ़कना (cabinet)
3. विद्युतीय भाग (electrical part)

आधार chasis—यह प्रायः टीन अथवा अल्मूनियम की चद्दर (sheet) से बनायेजाते हैं। चद्दर को आकार को काटकर उसमें वाल्व तथा अन्य भाग, यथा ट्रान्स-फॉर्मर इत्यादि लगाने के लिए स्थान काट लिये जाते हैं। रेडियो का विद्युतीय भाग इसी आधार पर बनाया जाता है। सरकिट में रेडियो का केवल विद्युतीय भाग ही दिखाया जाता है।

ढ़कना (cabinet)—यह लकड़ी अथवा प्लास्टिक की बनाई जाती है। रेडियो का विद्युतीय भाग इसके अन्दर सुरक्षित बन्द रहता है। सुरक्षा के साथ-साथ इसके कारण रेडियो सुन्दर दिखाई देता है। टयूनिंग बताने वाला डायल प्रायः इसी में लगा रहता है और सुई इस डायल के पीछे घूमती है। यांत्रिक प्रबन्ध से यह सुई गेंग कन्डेन्सर के साथ-साथ घूमती है।

विद्युतीय भाग—रेडियो के सरकिटों में केवल विद्युतीय भाग ही दिखाया जाता है। पिछले प्रकरण में इनके सिद्धान्तों का वर्णन किया जा चुका है। रेडियो में प्रयुक्त विभिन्न भागों का अर्घ निश्चित होना आवश्यक है। इन भागों के अर्घ वाल्वों तथा रेडियो की आवश्यकताओं पर निर्भर करते हैं। विद्युतीय सिद्धान्तों और गणित के प्रयोग से विभिन्न भागों के अर्घ निकाले जा सकते हैं। इनके अर्घ (values) निकालने के उपाय जटिल होने के कारण यहाँ उनका वर्णन नहीं किया गया है। साथ ही रेडियो ठीक करते समय इनको निकालने की आवश्यकता बहुत ही कम होती है। यदि कोई भाग खराब हो जावे तो उसके स्थान पर उतने ही अर्घ का दूसरा भाग लगाकर वह खराबी दूर की जा सकती है। विभिन्न भागों के अर्घ का अनुमान

देने के लिए यहाँ विडोर माडल CN 358 का वर्णन दिया गया है। इसके वर्णन में सरकिट तथा इसमें प्रयुक्त विभिन्न भागों के अर्थ भी दिये गये हैं।

विडोर मॉडल CN 358—यह एक छः वाल्व का ए. सी. (A. C.) से शक्ति लेने वाला रेडियो है। चित्र 175 में इसका सरकिट दिखाया गया है। आगे दी हुई तालिका में प्रत्येक भाग का अर्थ दिखाया गया है। इसमें छः वाल्वों का उपयोग भिन्न भागों में किया गया है। इस रिसीवर में 3 बैन्ड हैं। स्विच द्वारा इनमें से कोई एक छाँटा जा सकता है।

विभिन्न भाग

फ्रीक्वेंसी चेंजर—फ्रीक्वेंसी चेंजर में एक ट्रायोड हैक्सोड (ECH 35) का प्रयोग किया गया है। यह वाल्व एरियल पर प्राप्त फ्रीक्वेंसी (जिस पर के रिसीवर ट्यून किया गया है) को मध्यम फ्रीक्वेंसी 456 सहस्र सा. (456kc/s) में बदल देता है। इसका ट्रायोड भाग ऑस्सिलेटर है। यह प्राप्त फ्रीक्वेंसी से 456 सहस्र सा. अधिक पर ऑस्सिलेट करता है।

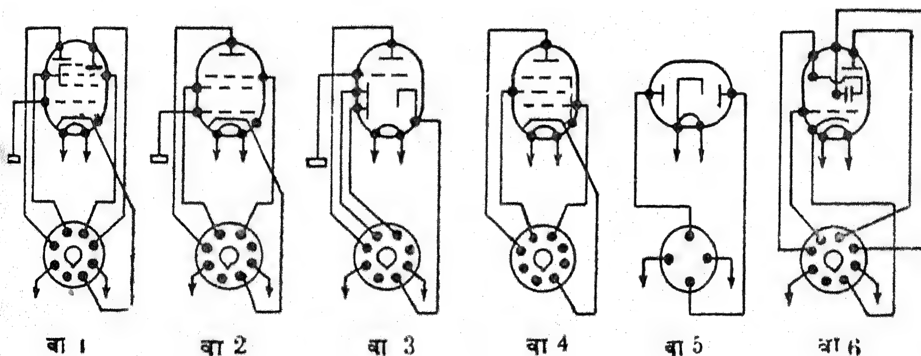
मध्यम फ्रीक्वेंसी वर्धक—फ्रीक्वेंसी चेंजर पर प्राप्त मध्यम फ्रीक्वेंसी मध्यम फ्रीक्वेंसी वर्धक को दे दी जाती है। मध्यम फ्रीक्वेंसी वर्धन के लिए पैंटोड (EF39) वाल्व का प्रयोग किया गया है।

डिटेक्टर तथा ध्वनिवर्धक—मध्यम फ्रीक्वेंसी वर्धक द्वारा वर्धित लहर डायोड की प्लेट पर दे दी जाती है। यहाँ पर डबल डायोड ट्रायोड (EBC 33) वाल्व का प्रयोग किया गया है। दो डायोडों में से एक डिटेक्शन तथा दूसरा ए. वी. सी. (a. v. c.) के लिए प्रयोग किया गया है। डिटेक्टर द्वारा प्राप्त लहर बाधक 16 के द्वारा ट्रायोड भाग की ग्रिड पर दे दी जाती है। यह ट्रायोड भाग बाधक संयुक्त वर्धक है तथा ध्वनि की लहरों का वर्धन करता है।

आउटपुट भाग—डबल डायोड ट्रायोड वाल्व के ट्रायोड भाग द्वारा वर्धित लहर आउटपुट वाल्व की ग्रिड पर दे दी जाती है। यहाँ पर एक पैंटोड (RL 33) का प्रयोग किया गया है। इस पर वर्धित सन्देश एक ट्रान्सफॉर्मर द्वारा लाउडस्पीकर को दे दिये जाते हैं।

पावर सप्लाई—जैसा कि प्रारम्भ में ही बताया जा चुका है यह रिसीवर ए. सी. पर कार्य करता है। इसके ट्रान्सफॉर्मर में प्राइमरी पर तीन अलग-अलग स्थानों पर ए. सी विद्युत दी जा सकती है। इस प्रकार 210 से 250 वोल्ट तक प्रयोग में लाया जा सकता है। रैक्टीफिकेशन के लिए एक डबल डायोड वाल्व

वा. 1
वा. 2
वा. 7
क. 4
ई. 7
क. 7
क. 8
ई. 8
क. 19
क. 20
वा 1
वा 2
वा. 6
क 22
ई. 1
क. 1
ई. 2
क. 2
ई. 3
क. 3
क. 5
क. 6
वा. 3
वा. 4
वा. 5
क. 9
क. 10
ई. 4
क. 12
क. 15
ई. 5
क. 16
क. 13
ई. 6
क. 17
क. 14
क 6
क. 18
क. 21
वा. 8
वा. 9
वा. 10
क. 11



चित्र 175.
विडोर माडल C N 358

(R2) का प्रयोग किया गया है । इस रैक्टीफायर द्वारा प्राप्त डी. सी. कन्डेन्सर क. 32 तथा 33 एवं इन्डक्टेंस इ. 10 द्वारा स्थायी कर दी जाती है ।

ट्यूनिंग बताने वाला भाग—इस रेडियो का छठा वाल्व ट्यूनिंग बताता है। ट्यूनिंग बताने के लिए ट्यूनिंग इन्डीकेटर (EM 34) का उपयोग किया गया है।

अन्य सुविधाएँ—इस सैट में पिक अप लगाने का, अलग लाउडस्पीकर लगाने का तथा टोन कन्ट्रोल का प्रबन्ध दिया हुआ है। पिक अप द्वारा प्राप्त वोल्टेज डबल ट्रायोड वाल्व (EBC 33) की ग्रिड पर दे दी जाती है । वहाँ से वह वर्धित हो जाती है । इस रेडियो में पिक अप लगाने से पहले बैन्डस्विच को ऊपर रखना पड़ता है। G पर रखने पर ही पिक अप सरकिट में आ सकता है।

अलग से लगाने वाला लाउडस्पीकर पहले स्पीकर के समानान्तर लगाया जा सकता है। टोन कंट्रोल के लिए कन्डेन्सर क. 31 तथा बाधक बा. 25 का उपयोग किया गया है। बाधक की अर्घ बदलने से विभिन्न टोन प्राप्त की जा सकती हैं।

प्लेट क्रमांक 5 तथा 6 में इस रिसीवर का सामने का, ढकना हटाकर सामने का ऊपर का एवं नीचे के दृश्य दिखाये गये हैं।

तालिका विडोर माडल CN 358

वाल्व क्र.		
1. ECH 35	ट्रायोड हैक्सोड	फ्रीक्वेंसी चेंजर
2. EF 33	पेंटोड	मध्यम फ्रीक्वेंसी वर्धक
3. EBC 33	डबल डायोड ट्रायोड	ड़िटेक्टर ए. वी. सी एवं ध्वनि-वर्धक
4. RL 33	पेंटोड	आउटपुट वाल्व
5. R2	डबल डायोड	रैक्टीफातर
6. EM 34	मैजिक आई	ट्यूनिंग बताने वाला

कन्डेन्सर क्र.	अर्घ
1.	3–30PF
2.	3–30PF
3.	3–30PF
4.	1MF
5.	6·511PF
6.	100PF

7.	150PF
8.	150PF
9.	·1μF
10.	100PF
11.	·1μF
12.	·005μF
13.	1420PF
14.	565PF
15.	3–30PF
16.	3–30PF
17.	3–30PF
18.	100PF
19.	150PF
20.	300PF
21.	·1μF
22.	100PF
23.	100PF
24.	100PF
25.	·01μF
26.	·01μF
27.	4μF विद्युतीय
28.	50μF विद्युतीय
29.	·1μE
30.	50μF विद्युतीय
31.	·05μF
32.	16μF } विद्युतीय एक ही कन्डेन्सर के दो भाग
33.	24μF }

इंडक्टेंस क्र. 1	SW2 एरियल कॉइल
2	SW1 ,,
3	मीडियम वेव ,,

4	SW2 ऑस्सिलेटर कॉइल
5	SW1 ,,
6	मीडियम वेव ,, ,,
7	प्रथम मध्यम फ्रीक्वेंसी ट्यून्ड ट्रान्सफॉर्मर
8	द्वितीय ,, ,, ,, ,,
9	आउटपुट ट्रान्सफॉर्मर
10	मेन्स ट्रान्सफॉर्मर

बाधक क्र.

1.	100,000	ओह्म
2.	33,000	,,
3.	470,000	,,
4.	220,000	,,
5.	47,000	,,
6.	100	,,
7.	33,000	,,
8.	330	,,
9.	470,000	,,
10.	1 मैगा	,,
11.	47,000	,,
12.	3·3 मैगा	,,
13.	2·2 मैगा	,,
14.	220,000	,,
15.	1 मैगा	,,
16.	1 मैगा	,, वैरियेबिल
17.	22,000	,,
18.	47,000	,,
19.	680	,,
20.	100,000	,,
21.	100,000	,,
22.	47,000	,,
23.	100,000	,,
24.	150	,,
25.	50,000	ओह्म वैरियेबिल
26.	1 मैगा	ओह्म

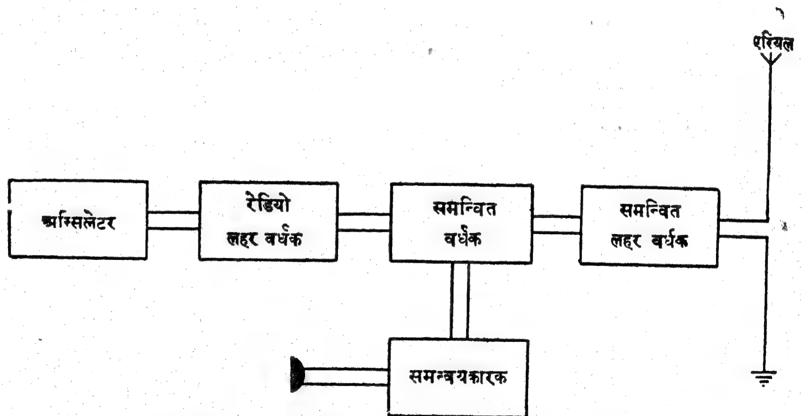
उन्नीसवाँ प्रकरण

प्रेषक (ट्रान्समिटर)

पहले प्रकरण में प्रेषक के सिद्धान्त का वर्णन किया जा चुका है। चित्र (176) में इसका ब्लाक चित्र दिखाया गया है । इसके अनुसार प्रेषक के प्रमुख भाग निम्नलिखित हैं—

1. रेडियो लहर उत्पादक ।
2. रेडियो लहर वर्धक ।
3. सूक्ष्म ध्वनि ग्राहक ।
4. समन्वय कारक (modulator)
5. समन्वित वर्धक (modulated amplifier)
6. एरियल ।

आगे इनमें से प्रत्येक का वर्णन किया गया है ।



चित्र 176. (प्रेषक ट्रान्समिटर) का ब्लाक चित्र.

रेडियो लहर उत्पादक—किसी भी प्रेषक की प्रमुख आवश्यकता रेडियो लहर उत्पादक है। प्रकरण 13 में ऑस्सिलेटर का वर्णन किया जा चुका है। रेडियो लहर उत्पन्न करने के लिए अत्यन्त उपयुक्त होने के कारण आज-कल प्रेषकों में यही काम में लाये जाते हैं। प्रेषक में प्रयुक्त ऑस्सिलेटर की फीक्वेंसी (कम्पनांक) का स्थायी

होना अत्यन्त आवश्यक है । इसलिए प्रेषकों में इस प्रकार के ऑस्सिलेटर काम में लाये जाते हैं जिनकी फ्रीक्वेंसी में कम-से-कम परिवर्तन हो ।

किसी भी ऑस्सिलेटर की फ्रीक्वेंसी प्रमुखतः टयून्ड सरकिटों की फ्रीक्वेंसी पर निर्भर करती है । अतः प्रेषकों के ऑस्सिलेटरों में ऐसे कॉइल और कन्डेन्सर काम में लाये जाने चाहिएँ जिनकी रेजोनेन्ट फ्रीक्वेंसी तापक्रम बदलने पर बहुत कम बदले ।

जिन स्थानों पर किसी एक फ्रीक्वेंसी अथवा कुछ निश्चित फ्रीक्वेंसियों की आवश्यकता होती है वहाँ टयून्ड सरकिटों के स्थान पर क्रस्टलों का भी उपयोग किया जा सकता है । क्रस्टल प्रयुक्त ऑस्सिलेटरों की फ्रीक्वेंसी बहुत स्थायी होने के कारण प्रायः सभी अधिक शक्ति के प्रेषकों पर इनका उपयोग किया जाता है ।

ऑस्सिलेटर की फ्रीक्वेंसी स्थायी होने के लिए यह भी आवश्यक है कि इससे बहुत कम शक्ति ली जावे । अधिक शक्ति की आवश्यकता होने पर ऑस्सिलेटर से प्राप्त शक्ति का वर्धन किया जा सकता है ।

रेडियो लहर वर्धक—ऊपर बताया जा चुका है कि फ्रीक्वेंसी स्थायी रखने के लिए ऑस्सिलेटर से बहुत कम शक्ति ली जानी चाहिए । प्रेषक (ट्रान्समिटर) के लिए आवश्यक शक्ति इसके वर्धन से प्राप्त की जाती है । वर्धन के लिए टयून्ड सरकिट प्रयुक्त रेडियो लहर वर्धक प्रयुक्त किये जाते हैं ।

सभी परिप्रेषण (ब्राडकास्ट) करने वाले प्रेषक अधिक शक्ति के होते हैं अतः यह आवश्यक है कि वर्धक पर विद्युत शक्ति के अधिक भाग का उपयोग किया जा सके । उदाहरण के लिए यदि किसी स्थान पर 50,000 वाट शक्ति की लहरें पैदा की जाती हैं और दी हुई शक्ति (डी. सी.) का केवल 25 प्रतिशत रेडियो की लहरों में बदला जाता है तो इतनी शक्ति उत्पन्न करने के लिए 200,000 वाट विद्युत शक्ति की आवश्यकता होगी और इसमें से 150,000 वाट बेकार जायेगी ।

यदि किसी प्रकार दी हुई शक्ति का अधिक भाग, उदाहरण के लिए 75 प्रतिशत उपयोग में लाया जा सके तो उतनी ही शक्ति की रेडियो लहरें उत्पन्न करके के लिए केवल 66,600 वाट शक्ति डी. सी. की आवश्यकता होगी । इस प्रकार न केवल बहुत अधिक विद्युत शक्ति में ही बचत होगी वरन् साथ ही साथ वाल्व इत्यादि साधन भी छोटे ही काम में लाये जा सकते हैं ।

ऊपर वर्णित कारणों से प्रेषकों में इस प्रकार के वर्धकों की आवश्यकता है जो शक्ति के अधिकाधिक भाग का उपयोग कर सकें । [इस सम्बन्ध में यहाँ केवल इतना जान लेना आवश्यक है कि रेडियो रिसीवर में प्रयुक्त वर्धकों में प्रायः 5 से 15 प्रतिशत तक शक्ति का उपयोग हो पाता है ।] दी हुई शक्ति के अधिक

भाग का उपयोग करने के लिए वाल्वों के उपयोगों का वर्णन नीचे किया गया है।

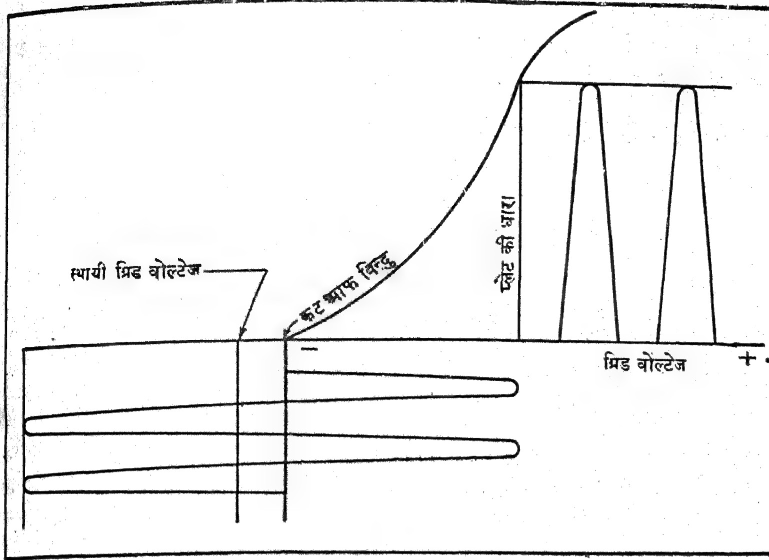
अधिक उपयोगी शक्ति के वर्धक—प्रकरण ग्यारह में वर्धकों का वर्णन किया जा चुका है। वहाँ वर्धकों का वर्गीकरण, जोड़ने वाले भाग के आधार पर किया गया है। नीचे के वर्णन में वर्धकों का वर्गीकरण उपयोगी शक्ति के आधार पर किया गया है।

उपयोगी शक्ति के आधार पर वर्धकों के तीन वर्ग किये जा सकते हैं—अ (A), ब (B) तथा (C)।

वर्ग अ (Class A)—वे वर्धक जो कि इस प्रकार कार्य करते हैं कि उनके द्वारा प्राप्त वर्धित लहर ठीक वैसी ही हो जैसी कि ग्रिड पर दी गई थी, वर्ग अ के वर्धक कहलाते हैं।' यह प्राप्त करने के लिए वर्धक वाल्व की ग्रिड पर सदैव एक निश्चित ऋण वोल्टेज दी जाती है और ग्रिड पर वर्धित की जाने वाली वोल्टेज इतनी ही दी जाती है कि वाल्व के ग्रिड की वोल्टेज कभी भी निश्चित सीमाओं के बाहर न जावे। इस प्रकार के वर्धक में उपयोगी शक्ति (efficiency) कम होती है परन्तु वर्धन अधिक किया जा सकता है।

वर्ग ब (Class B)—वर्ग अ के वर्धक में ग्रिड वोल्टेज इतनी दी जाती है जिससे वाल्व में होकर हर समय धारा बहती रहे। यदि ग्रिड की वोल्टेज अधिक ऋण की जावे तो वाल्व में उपयोगी शक्ति बढ़ सकती है। वर्ग ब में उपयोगी शक्ति बढ़ाने के लिए वाल्व की ग्रिड कट ऑफ़ बिन्दु तक ऋण कर दी जाती है। इसमें जब तक वाल्व की ग्रिड पर वोल्टेज न दी जावे धारा नहीं बहेगी और वोल्टेज देने पर धारा उसी समय बहेगी जब कि ग्रिड पर दी गई वोल्टेज धन होगी। इस प्रकार इस वर्धक में केवल आधी लहर का ही वर्धन किया जा सकता है। प्रकरण चौदह में वर्ग ब वर्धक के कार्य का विस्तृत वर्णन किया जा चुका है।

वर्ग स (Class C)—वर्ग ब वर्धक में वाल्व की उपयोगी शक्ति का अंश बढ़ाने के लिए वाल्व की ग्रिड 'कट ऑफ़ बिन्दु' तक ऋण कर दी जाती है। यदि वाल्व की ग्रिड 'कट ऑफ़ बिन्दु से भी अधिक ऋण कर दी जावे तो उपयोगी शक्ति का अंश और भी बढ़ जावेगा। ऐसा करने से वाल्व में होकर धारा आधी से भी कम देर बहेगी। चित्र 177 में वर्ग स वर्धक का कार्य दिखाया गया है। यद्यपि वर्धक आधी से भी कम लहर का वर्धन करता है परन्तु प्लेट पर टयून्ड सरकिटों के प्रयोग के कारण पूरी लहर प्राप्त हो जाती है। वर्ग स के वर्धक प्रेषकों के शक्ति देने वाले भागों में प्रयोग किये जाते हैं। नीचे दी गई तालिका में तीनों प्रकारों के वर्धकों की तुलना की गई है।



चित्र 177. वर्ग स वर्धक का कार्य.

वर्ग अ वर्धक	वर्ग ब वर्धक	वर्ग स वर्धक
इसमें वर्धन की जाने वाली लहर तथा वर्धित लहर एक जैसी ही होती हैं।	इसमें केवल आधी लहर का वर्धन होता है।	इसमें आधी से भी कम लहर का वर्धन होता है।
इसके द्वारा अधिक वर्धन प्राप्त होता है।	इसके द्वारा प्राप्त वर्धन वर्ग अ से कम तथा वर्ग स से अधिक होता है।	इसके द्वारा प्राप्त वर्धन कम होता है।
इसमें विद्युत शक्ति का थोड़ा सा ही अंश उपयोग में आ पाता है। (low efficiency)	इसमें वर्ग अ की अपेक्षा विद्युत शक्ति का अधिक अंश उपयोग में आता है। (higher efficiency)	इसमें वर्ग ब की भी अपेक्षा विद्युत शक्ति का अंश उपयोग में आता है। (highest efficiency)

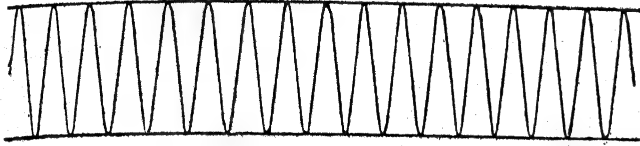
इस प्रकार के वर्धक रिसीवर में रेडियो तथा ध्वनि की लहरों के वर्धन के लिए प्रयुक्त होते हैं।	इस प्रकार के वर्धक रेडियो लहरों के वर्धन के लिए तथा पुश-पुल में ध्वनि और समन्वित लहरों के वर्धन के लिए प्रयुक्त होते हैं।	इस प्रकार के वर्धक रेडियो लहरों के वर्धन के लिए प्रयुक्त होते हैं।

समन्वय—प्रेषक द्वारा समाचार दो प्रकार से भेजे जा सकते हैं। पहली प्रकार में तार द्वारा भेजे जाने वाले समाचारों के अनुसार कम अथवा अधिक समय के लिए रेडियो लहरें भेजी जाती हैं। इनमें, कम समय की लहर से (डाट) एवं अधिक समय की लहर से — (डैश) बनता है। डाट एवं डैश द्वारा प्रत्येक अक्षर भेजा जा सकता है और इस प्रकार सारे समाचार भेजे जा सकते हैं। दूसरी प्रकार में रेडियो और ध्वनि की लहरों को समन्वित किया जाता है तथा समन्वित लहरें भेजी जाती हैं। प्रेषक (ट्रांसमीटर) द्वारा प्रसारित सभी कार्यक्रम समन्वित लहरों के रूप में प्रसारित (ब्राडकास्ट) किये जाते हैं। समन्वय के लिए समन्वयकारक एवं समन्वितवर्धक की आवश्यकता होती है।

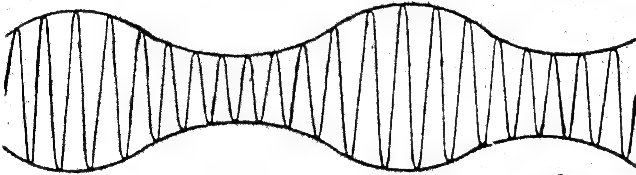
प्रथम प्रकरण में बताया जा चुका है कि रेडियो की लहरें सुनाई नहीं देतीं और ध्वनि की लहरें ईथर में भेजी नहीं जा सकतीं, अतः ध्वनि और रेडियो की लहरों का समन्वय आवश्यक होता है। यदि रेडियो और ध्वनि की लहरें मिला दी जावें तो उससे कोई लाभ न होगा। इन मिली हुई लहरों में से केवल रेडियो की लहरें ही प्रसारित होंगी। समन्वय के लिए यह आवश्यक है कि रेडियो लहरें इस प्रकार से बदली जावें कि उन्हें प्राप्त करके उनके द्वारा भेजे जाने वाले समाचार प्राप्त किये जा सकें। व्यवहार में अधिकतर रेडियो लहरों के परिमाण को ध्वनि की लहरों के अनुसार घटाया-बढ़ाया जाता है। इस प्रकार प्राप्त समन्वय परिमाण समन्वय (एम्पलीट्यूड माडूलेशन) कहलाता है। चित्र 178 में ध्वनि की लहर रेडियो की लहर और परिमाण समन्वित लहर ये तीनों दिखाई गई हैं।

परिमाण के अतिरिक्त ध्वनि की लहरों के अनुसार रेडियो लहरों का कंपनांक (फ्रीक्वेंसी) बदलकर भी समन्वय किया जा सकता है। इस प्रकार का समन्वय कंपनांक समन्वय (फ्रीक्वेंसी माड्यूलेशन) कहलाता है। चित्र 179 में कंपनांक समन्वित लहर दिखाई गई है। फ्रीक्वेंसी समन्वय का उपयोग टेलीविज़न एवं फ़ौजी कार्यों तक

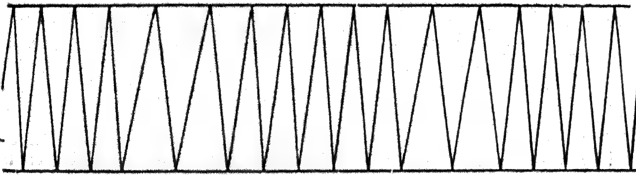
सीमित होने के कारण यहाँ उसका विस्तृत वर्णन नहीं किया गया है।







चित्र 178.

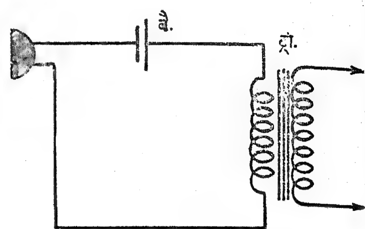


चित्र 179. फ्रीक्वेंसी समन्वित लहर.

समन्वयकारक (माड्यूलेटर)—रेडियो की लहरों को समन्वित करने के लिए ध्वनि की लहरें आवश्यक होती हैं। यह ध्वनि की लहरें सूक्ष्म ध्वनि ग्राहक द्वारा प्राप्त की जाती हैं। सूक्ष्म ध्वनि ग्राहक सरकिट में किस प्रकार लगाया जाता है यह चित्र 180 में दिखाया गया है।

सूक्ष्म ध्वनि ग्राहक द्वारा प्राप्त लहरें आवश्यकता होने पर वर्धित करके अथवा

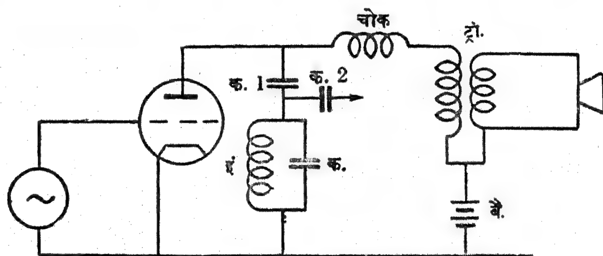
बिना वर्धित किये हुए ही रेडियोलहरों को समन्वित करने के काम में ली जाती हैं । प्रेषक में जो भाग ध्वनि की लहरों का वर्धन करके समन्वय के लिए देता है 'समन्वयकारक' (माड्यूलेटर) कहलाता है । इस प्रकार माड्यूलेटर परिप्रेषण के लिए ध्वनि की लहरों को वर्धित करके समन्वित वर्धकों को देता है ।



चित्र 180. सूक्ष्म ध्वनि ग्राहक (माइक्रोफोन) का सरकिट.

समन्वित वर्धक (माड्यूलेटडएम्पलीफायर)—समन्वित वर्धक में ध्वनि की लहरें कई प्रकार से रेडियो की लहरों के साथ समन्वित की जा सकती हैं । इन प्रकारों में से प्लेट समन्वित वर्धक तथा ग्रिड समन्वित वर्धक प्रमुख हैं ।

चित्र 181 में एक प्लेट समन्वित वर्धक का सरकिट दिखाया गया है । इसमें ध्वनि की वोल्टेज वाल्व की प्लेट पर दी जाने वाली डी. सी. के साथ श्रेणीबद्ध दी

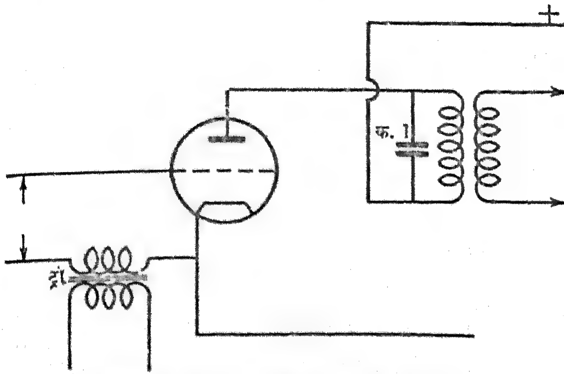


चित्र 181. प्लेट समन्वित वर्धक.

जाती है । इस कारण इस वाल्व की प्लेट की वोल्टेज ध्वनि की लहरों के अनुसार घटती-बढ़ती है । यह वाल्व इस प्रकार काम में लाया जाता है कि इसका वर्धन प्लेट वोल्टेज पर निर्भर करे । इस कारण इसकी प्लेट पर प्राप्त वर्धित वोल्टेज का परिमाण ध्वनि की लहरों के अनुसार घटता-बढ़ता है और इस प्रकार समन्वित लहरें प्राप्त हो जाती है ।

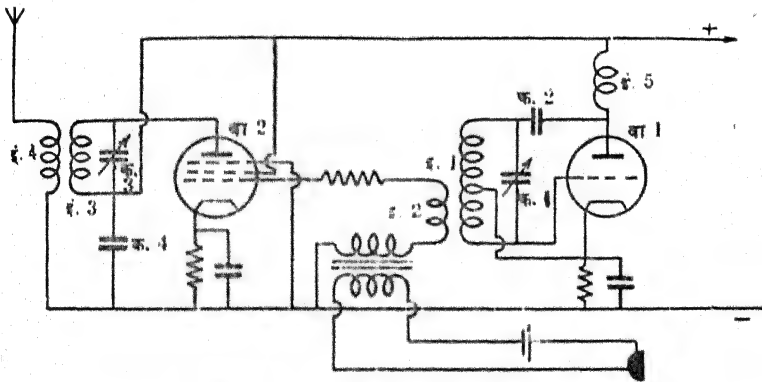
चित्र 182 में एक ग्रिड समन्वित वर्धक का सरकिट दिखाया गया है । इसमें ध्वनि की लहरें वाल्व की प्लेट पर न दी जाकर उस वाल्व की ग्रिड पर दी जाती हैं । यहाँ वाल्व का इस प्रकार उपयोग किया जाता है कि इसका वर्धन ग्रिड वोल्टेज

पर निर्भर करे । इस कारण वाल्व की प्लेट पर प्राप्त वर्धित लहर का परिमाण भी



चित्र 182. ग्रिड समन्वित वर्धक.

ग्रिड पर दी गई ध्वनि की लहरों के अनुसार घटता-बढ़ता है और इस प्रकार समन्वित लहरें प्राप्त हो जाती है ।



चित्र 183. ग्रिड समन्वित प्रेषक.

प्रेषक (ट्रांसमीटर)—सभी अधिक शक्ति के प्रेपकों में रेडियो लहर वर्धन एवं ध्वनि वर्धन के लिए कई वाल्व प्रयुक्त किये जाते हैं । इसके अतिरिक्त सभी बड़े प्रसारित करने वाले स्टेशनों पर कुछ विशेष कमरे (स्टुडियो) रहते हैं जहाँ पर कि कार्यक्रम (भाषण, गायन, वादन इत्यादि) होते हैं । इन स्थानों पर सूक्ष्म ध्वनि ग्राहक पर उत्पन्न ध्वनि कुछ वर्धन के बाद प्रेषक तक ले जाई जाती है जहाँ से कि वह

प्रसारित की जाती है। नीचे दिये गए वर्णन में दो वाल्व प्रयुक्त प्रेषक का यह कार्य समझाया गया है।

चित्र 183 में एक ग्रिड समन्वित प्रेषक का सरकिट दिखाया गया है। इस सरकिट में वाल्व वा. 1 हार्टले ऑस्सिलेटर है। कन्डेन्सर क. 1 के द्वारा इसकी फ्रीक्वेंसी बदली जा सकती है। इस ऑस्सिलेटर पर उत्पन्न रेडियो लहर इ. 1 और इ. 2 के पारस्परिक उपपादन द्वारा इ. 2 को दे दी जाती है। यह वोल्टेज वाल्व वा. 2 की ग्रिड पर दे दी जाती है तथा साथ ही इसके श्रेणी में सूक्ष्म ध्वनि ग्राहक से प्राप्त ध्वनि वोल्टेज भी दे दी जाती है। इस प्रकार वाल्व वा. 2 ग्रिड समन्वित वर्धक का कार्य करता है। इन्डक्टेंस इ. 3 और कन्डेन्सर क. 2 मिलकर ट्यून्ड सरकिट बनाते हैं। वा. 2 की प्लेट पर प्राप्त लहरें इस ट्यून्ड सरकिट में होकर इ. 4 द्वारा एरियल को दे दी जाती हैं। एरियल से यह लहरें चारों ओर फैल जाती हैं।

बीसवाँ प्रकरण

रेडियो लहरों का गमन तथा एरियल

(Propagation of Waves and Aerials)

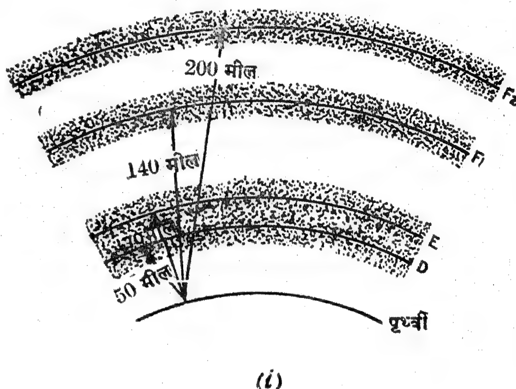
लहरों का वर्गीकरण (classification of waves)—पिछले प्रकरणों में बताया जा चुका है प्रसारित (broadcast) करने वाले स्टेशन पर संदेश विद्युत की लहरों में बदलकर एरियल को दे दिये जाते हैं । यह एरियल ठीक उसी प्रकार की लहरें ईथर में उत्पन्न कर देता है । ईथर में उत्पन्न लहरें प्रकाश की गति—(186,000 मील प्रति सैकिण्ड) से चारों ओर जाती हैं । रेडियो की लहरें प्रसारित करने वाले स्टेशन से किसी स्थान तक कई प्रकार पहुंच सकती हैं । जिस प्रकार यह लहरें एक स्थान से दूसरे स्थान तक पहुंचती हैं वह लहरों की लम्बाई पर निर्भर करता है । इसके साथ ही कितनी दूरी तक सन्देश भेजने के लिए कौनसी लहरें उपयुक्त होंगी यह भी उनकी लम्बाई पर निर्भर करता है । नीचे की तालिका में विभिन्न लम्बाई की लहरों का वर्गीकरण किया गया है और साथ ही प्रत्येक वर्ग का उपयोग बताया गया है ।

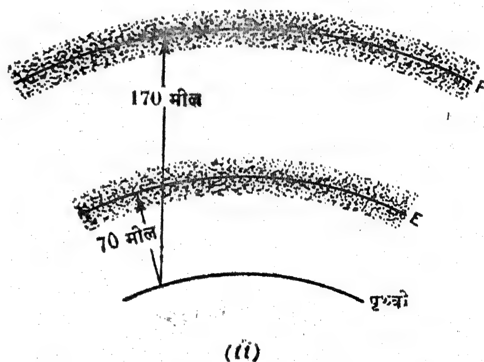
लहरों का वर्गीकरण—

वर्ग	लहर लम्बाई	कम्पनांक	उपयोगिता
लम्बी लहरें	10000 से 1000 मीटर तक	30 से 300 कि.सा. प्रति सैकिण्ड तक	अधिक दूर सन्देश भेजने के लिए तथा दूर देशों के बीच निरन्तर सम्बन्ध बनाये रखने के लिए ।
मध्यम ल	1,000 से 100 मीटर तक	300 से 3000 कि. सा. प्रति सैकिण्ड तक	अन्तर्देशीय परिप्रेषण (broadcasting) तथा अन्य ऐसे कार्यों के लिए जिनमें बहुत अधिक दूर सन्देश नहीं भेजने पड़ते । जैसे पुलिस इत्यादि ।
छोटी लहरें	100 से 10 मीटर तक	3000 से 30000 कि. सा. प्रति सैकिण्ड तक	सभी प्रकार के साधारण दूरी तथा अधिक दूरी तक सन्देश भेजने के लिए ।
अति छोटी लहरें	10 से 1 मीटर तक	30000 से 300000 कि. सा. प्रति सैकिण्ड तक	थोड़ी दूर समाचार भेजने, पुलिस, फ्रीक्वेंसी माड्यूलेशन तथा टेलीविजन के लिए ।

विभिन्न लम्बाई की लहरें एक स्थान से दूसरे स्थान तक अलग-अलग तरह से पहुँचाती हैं और इसलिए कुछ लहरें अधिक दूर तक सन्देश भेजने तथा कुछ लहरें कम दूर सन्देश भेजने के लिए प्रयोग में लाई जा सकती हैं। नीचे के वर्णन में लहरें एक स्थान से दूसरे स्थान तक किस प्रकार पहुँचती हैं यह बताया गया है।

विभिन्न वर्गों की लहरें एक स्थान से दूसरे स्थान तक भिन्न-भिन्न प्रकार से पहुँचती हैं। इस विभिन्नता का कारण वायुमण्डल में विद्युन्मय (ionised) तहों (layers) का होना है। दिन में सूर्य की गरमी तथा अन्य किरणों, कास्मिक किरण आदि के कारण वायुमण्डल की ऊपरी तहें विद्युन्मय हो जाती हैं। वायुमण्डल में प्रत्येक समय कई विभिन्न विद्युन्मय तहें होती हैं। चित्र 184 में रात्रि तथा दिन में रहने वाली विद्युन्मय तहें तथा उनकी ऊँचाई दिखाई गई है। रात्रि में इन तहों की ऊँचाई कम हो जाती है और इस समय यह कम हो जाती है। साथ ही इस समय ये कम विद्युन्मय भी हो जाती हैं।

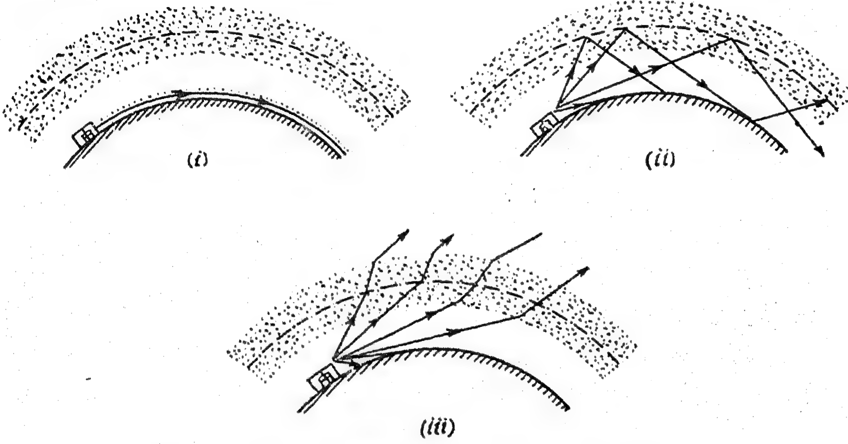




चित्र 184. वायुमण्डल में विद्युन्मय सतहों की ऊँचाई (i) दिन (ii) रात्रि.

अलग-अलग विद्युन्मय सतहें (ionised layers) अलग-अलग वर्ग की लहरों को परावृत (reflect) करती हैं तथा अति छोटी लहरें विद्युन्मय सतहों द्वारा परावृत्त नहीं होती। इन कारणों से रेडियो की लहरें एक स्थान से दूसरे

स्थान तक तीन प्रकार से पहुँचती हैं, सीधी, पृथ्वी के साथ मुड़कर और वायुमण्डल की विभिन्न तहों से परावृत्त होकर। चित्र 185 में विभिन्न वर्ग की लहरें एक स्थान से दूसरे स्थान तक किस प्रकार पहुँचती हैं यह दिखाया गया है इसका वर्णन नीचे किया गया है।



चित्र 185.

रेडियो लहरों का एक स्थान से दूसरे स्थान तक पहुँचना.

(i) **पृथ्वी के साथ मुड़कर लम्बी लहरें।**

(ii) **वायुमण्डल की विद्युन्मय सतहों से परावृत्त होकर; मध्यम व छोटी लहरें।**

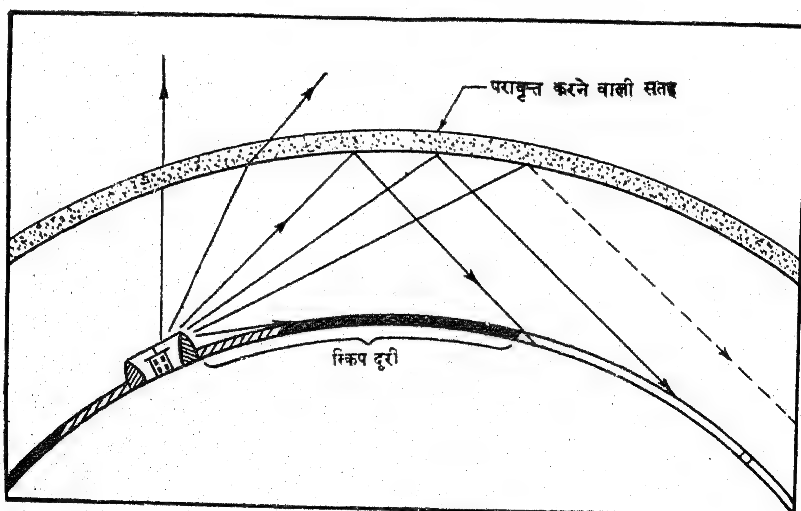
(iii) **सीधी (बहुत छोटी लहरें)**

लम्बी लहरें (long waves) [30 कि. सा./से. 300 कि. सा./तक 30Kc/s to 300Kc/s] इस वर्ग की लहरें एक स्थान से दूसरे स्थान तक मुख्यत: ज़मीन के साथ-साथ चलकर पहुँचती हैं । इस प्रकार पहुँचती हुई लहरें ज़मीन की लहरें (ground waves) कहलाती हैं । जैसे-जैसे इनकी फ्रीक्वेंसी बढ़ने लगती है वैसे-वैसे ही ज़मीन इन लहरों की शक्ति कम करने लगती है । अत: इनमें से कम फ्रीक्वेंसी की लहरें अधिक दूर जा सकती हैं। यह लहरें अधिक दूर तक पहुँच सकती हैं और इस कारण इनके द्वारा सारे संसार से सम्बन्ध रखा जा सकता है । इन लहरों के प्रयोग में दो प्रमुख कठिनाइयाँ हैं । प्रथम तो यह कि भेजने वाला एरियल बहुत बड़ा होना चाहिए । भेजी जाने वाली लहरें जितनी बड़ी होंगी उतने ही बड़े एरियल की भी आवश्यकता होती है। इसलिए स्टेशन की कीमत बढ़ जाती है। दूसरे

लम्बी लहरों पर बहुत थोड़े स्टेशन कार्य कर सकते हैं। इन दोनों कारणों से यह लहरें बहुत कम प्रयोग में आती हैं।

मध्यम लहरें (Medium waves) [(550 कि. सा. से 2000 कि. सा. तक) (550 Kcs to 2000 Kcs)] यह लहरें एक स्थान से दूसरे स्थान तक जमीन की लहर तथा परावृत्त लहर दोनों प्रकार से पहुँचती हैं। दिन में यह लहरें परावृत्त नहीं होतीं अतः उस समय केवल जमीन के साथ चलने वाली लहर का ही उपयोग होता है। रात्रि में यह लहरें परावृत्त होती हैं और उस समय इनके द्वारा अधिक दूरी तक सन्देश भेजे जा सकते हैं। इन लहरों का विशेष उपयोग अर्न्तदेशीय कार्यक्रम प्रसारित (broadcasting) करने के लिए होता है।

छोटी लहरें (Short waves) [(3000 से 30000 कि. सा. तक)] यह लहरें एक स्थान से दूसरे स्थान तक जमीन के साथ-साथ तथा वायुमण्डल की विद्युन्मय सतहों द्वारा परावृत्त होकर पहुँचती हैं। इन लहरों का जमीन के साथ-साथ चलने वाला भाग कुछ दूरी तक ही जाता है तथा वहाँ से आगे कुछ दूर तक कार्यक्रम नहीं सुना जा सकता। प्रसारित करने वाले स्थान से कुछ दूर और जाने पर फिर यह लहरें



चित्र 186. स्किप दूरी.

परावृत्त होकर आने लगती हैं और कार्यक्रम सुना जा सकता है। जिस बीच में कार्यक्रम नहीं सुना जा सकता वहाँ जमीन के साथ-साथ चलने वाली लहरें बहुत कमजोर

हो जाती हैं तथा ऊपर होकर जाने वाली उससे आगे परावृत्त होकर आती हैं। ट्रान्स-मिटर से जितनी दूरी पर परावृत्त लहरें पहुँचती हैं वह स्किप दूरी (skip distance) कहलाती है चित्र 186। यह लहरें परावृत्त होकर बहुत दूर तक पहुँच सकती हैं और इसलिए इनके द्वारा सारे संसार से सम्बन्ध स्थापित किया जा सकता है। आज कल अधिक दूरी तक सन्देश भेजने तथा पाने के लिए अधिकतर छोटी लहरों का ही प्रयोग किया जाता है।

अति छोटी लहरें (Very short waves)—इस प्रकार की लहरें एक स्थान से दूसरे स्थान तक सीधी पहुँचती हैं। यह जमीन के साथ-साथ नहीं चलतीं। ये वायुमण्डल की तहों द्वारा परावृत्त भी नहीं होती हैं। सीधी रेखाओं में चलने के कारण इन लहरों द्वारा थोड़ी ही दूर तक सन्देश भेजा जा सकता है।

फ्रीक्वेंसी माड्यूलेशन टेलीविज़न एवं पुलिस तथा अन्य विभागों द्वारा थोड़ी दूर सन्देश भेजने के लिए इन्हीं लहरों का प्रयोग किया जाता है।

एरियल (aerial)—ट्रान्समिटर द्वारा प्रसारित सन्देश ईथर की लहरों के रूप में चारों ओर फैलते हैं। रिसीवर पर यह सन्देश प्राप्त करने के लिए ईथर में से इन लहरों को प्राप्त करना आवश्यक है। रेडियो की लहरों में एक विशेष गुण तो यह है कि वे प्रत्येक परिचालक (conductor) में जोकि उनके मार्ग में पड़ता है ठीक वैसी ही लहरें पैदा करती हैं और इसीलिए रेडियो पर सन्देश प्राप्त किये जा सकते हैं। कोई भी फैलाया हुआ परिचालक जोकि जमीन से किसी अपरिचालक (insulator) द्वारा अलग किया हुआ है रिसीवर के लिए सन्देश प्राप्त कर सकता है। इस प्रकार लगाया हुआ परिचालक एरियल कहलाता है।

अच्छे एरियल की आवश्यकता—रिसीवर पर सन्देश एरियल द्वारा ही प्राप्त होते हैं। रिसीवर इनको वर्धित एवं डिटेक्ट करके सुनने योग्य बना देता है। यदि एरियल पर सन्देश के साथ-साथ कुछ शोर (electricnoise) भी पहुँच जाय तो रेडियो उसे अलग नहीं कर सकता। इसलिए एरियल ऐसे स्थान पर लगाना चाहिए जहाँ इस प्रकार का शोर कम-से-कम हो। प्रायः प्रत्येक विद्युत-यन्त्र जैसे टेलीफोन, ट्यूब लाइट, विद्युत मोटरें इत्यादि कुछ परिमाण में विद्युत-लहरें उत्पन्न करते हैं। ये लहरें यदि एरियल पर आ जायें तो खड़-खड़ (interference) उत्पन्न करती हैं। यदि कोई एरियल इस प्रकार के किसी यन्त्र के पास हो तो उसके द्वारा सन्देश के साथ-साथ शोर भी रिसीवर पर आ जायेगा।

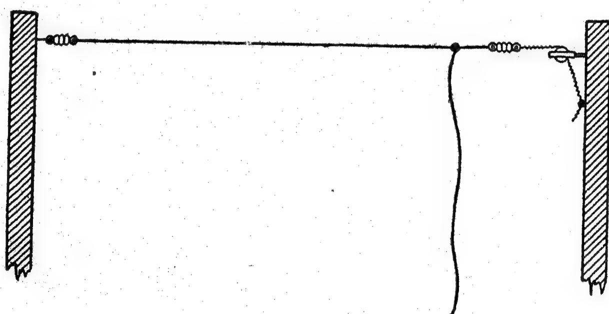
उपर्युक्त वर्णन से यह स्पष्ट हो जाता है कि एरियल का अच्छा तथा शोर के क्षेत्र से यथासम्भव दूर होना आवश्यक है। एरियल यदि अच्छा न रहा तो एक अच्छा

रेडियो भी अच्छा काम नहीं देगा । इसके विपरीत एक अच्छे एरियल द्वारा साधारण रेडियो भी बहुत अच्छा काम दे सकता है । वास्तव में प्रत्येक रेडियो के साथ अच्छा एरियल होना आवश्यक है ।

एरियल—साधारणत: एक तार को फैलाकर एरियल के काम में लिया जाता है । यह एरियल घर के अन्दर अथवा बाहर लगाया जा सकता है । घर के अन्दर लगाये गये एरियल, इनडोर (indoor=दरवाज़े के अन्दर) एरियल तथा घर के बाहर लगाये गये आउटडोर (outdoor=दरवाज़े के बाहर) एरियल कहलाते हैं ।

घर के अन्दर लगाये गये एरियल की अपेक्षा बाहर लगाये गये एरियल अधिक उपयुक्त होते हैं । यद्यपि आजकल के अच्छे रिसीवर घर के अन्दर लगाये गये एरियल से अथवा बिना एरियल के भी काम दे सकते हैं परन्तु फिर भी एक अच्छा एरियल आवश्यक है । घर के अन्दर के एरियल की अपेक्षा बाहर का एरियल प्राय: शोर के क्षेत्र से दूर रहता है तथा सन्देश अच्छी प्रकार प्राप्त कर सकता है । यदि घर के अन्दर ही एरियल लगाना हो तो जहाँ तक हो सके उस एरियल को बिजली के तारों से दूर रखना चाहिए । घर के अन्दर एरियल लगाने के लिए तार की जाली (gauze) को दो कोनों के बीच में फैलाने से अन्य उपायों की अपेक्षा अच्छा एरियल बनता है ।

घर के बाहर के एरियल—साधारणत: दो बाँसों के बीच में तार फैलाने से एरियल बन जाता है । यह एरियल T तथा ˥ प्रकार के बीच में बनाये जाते हैं । चित्र 187 में इनमें से दूसरे प्रकार का एरियल दिखाया गया है । इस प्रकार के

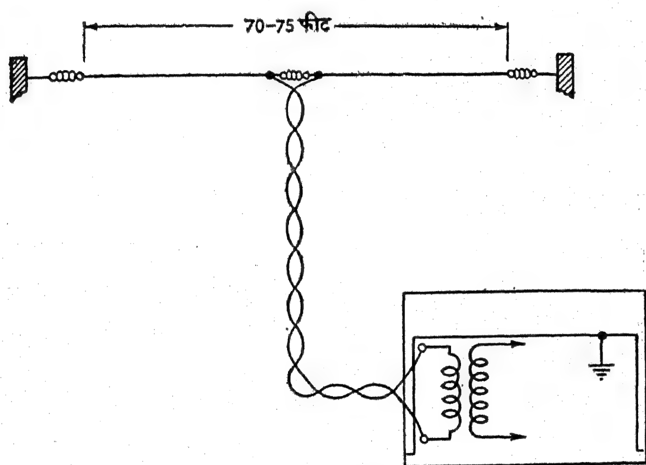


चित्र 187. एरियल.

एरियल अंग्रेज़ी के वर्ण T (टी) तथा उल्टे L (एल) के समान होने के कारण टी तथा उल्टे (इनवर्टेड) एल नामों से जाने जाते हैं । इनमें से पहली प्रकार का एरियल सब दिशाओं से एक-सा सन्देश प्राप्त करता है परन्तु दूसरी प्रकार का एरियल इससे

भिन्न होता है । इस प्रकार का एरियल अपनी लम्बाई की दिशा से अधिक सन्देश प्राप्त करता है ।

डबलट एरियल—उपर्युक्त एरियलों के अतिरिक्त डबलट (doublet) मुख्य है। डबलट एरियल छोटी लहरों के लिए विशेष उपयुक्त हैं । डबलट एरियल में, जैसा कि नाम से ही विदित होता है (doulle=दुहरा), दो अलग-अलग तार जोकि एक अपरिचालक द्वारा अलग किये हुए होते हैं फैलाये रहते हैं । इन दोनों तारों के बीच में से दो तार रेडियो में लगाये जाते हैं। प्रायः यह दोनों तार समान लम्बाई के होते हैं परन्तु असमान लम्बाई के तारों का भी प्रयोग किया जाता है। इस प्रकार का एरियल लम्बाई की दिशा में स्थित स्टेशन से अधिक सन्देश प्राप्त करता है। चित्र 188 में एक समान लम्बाई के तारों का डबलट एरियल दिखाया गया है।

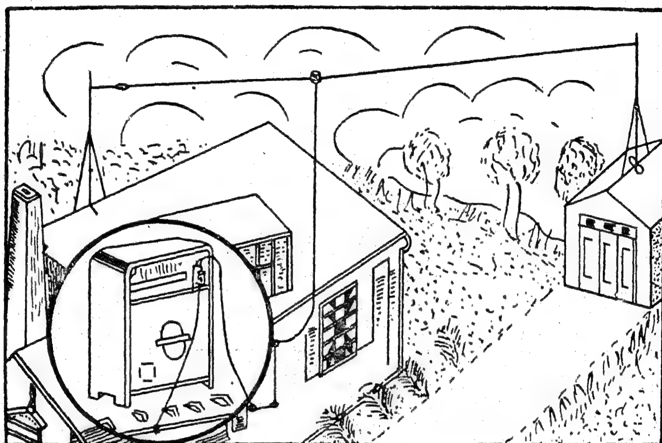


चित्र 188. डबलट एरियल.

यदि डबलट एरियल के दोनों भागों की लम्बाई बराबर हो तो यह एक निश्चित फ्रीक्वेंसी पर जोकि उसकी लम्बाई पर निर्भर रहती है अधिक उपयुक्त रहता है । यदि दोनों भागों की लम्बाई असमान हो तो यह एरियल सब फ्रीक्वेंसियों की लहरों को प्राप्त कर सकता है । चित्र 189 में सब फ्रीक्वसियों के लिए उपयुक्त डबलट एरियल दिखाया गया है।

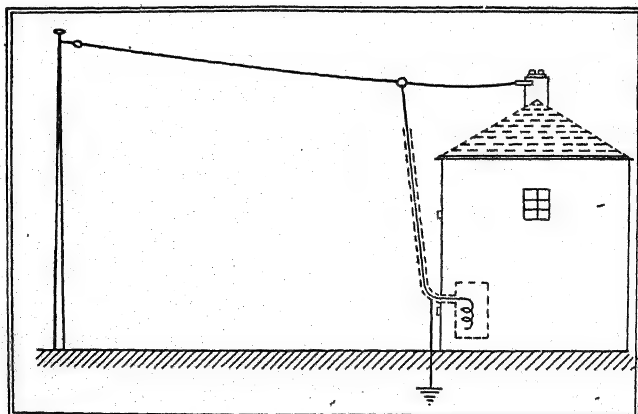
ऊपर बताया जा चुका है कि किसी भी रिसीवर से अच्छा काम लेने के लिए एक अच्छा एरियल आवश्यक है । एरियल की अन्य आवश्यकताओं का वर्णन ऊपर

किया जा चुका है। इन सब के साथ यह ध्यान रखना आवश्यक है कि एरियल बहुत लम्बा न हो । बहुत लम्बा एरियल प्रायः रिसीवर की चुनने की शक्ति (selecti-



चित्र 189. सब फ्रीक्वेंसियों के लिए उपयुक्त डबलट.

vity) कम कर देता है । यदि एरियल को जोड़ने वाला तार किसी ऐसे क्षेत्र में



चित्र 190.

शोर कम करने के लिए आवरण-युक्त तार का प्रयोग.

होकर आता हो जहाँ शोर रहता है तो कभी-कभी आवरण-युक्त तार (sheilded) का प्रयोग उपयोगी रहता है । ऐसे तार में तार के ऊपर अपरिचालक देकर ताम्बे के

महीन तार की जाली द्वारा चारों ओर से घेर दिया जाता है । यदि इस तार के आवरण को एक सिरे पर जमीन से जोड़ दिया जाय तो वह तार शोर नहीं लेता। परन्तु ऐसा करने से सन्देश कुछ कम हो जाता है। चित्र 190 इस प्रकार का एरियल दिखाया गया है।

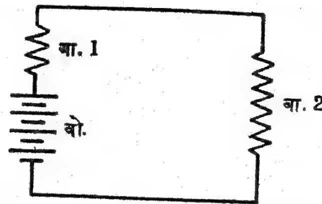
डबलट एरियलों में शोर कम करने के किए ट्रान्सफॉर्मर तथा कई अन्य पद्धतियों का भी उपयोग किया जाता है । परन्तु स्थानाभाव के कारण यहाँ उनका वर्णन नहीं किया गया है।

प्रथम परिशिष्ट

मैचिंग

(Matching)

चित्र 191 में एक बैटरी से एक बाधक लगाया गया है। इसमें बैटरी की बाधा (internal resistance) बा. 1 ओह्म है और बैटरी के सिरों पर लगाई



चित्र 191· मैचिंग का सिद्धान्त.

गई बाधा बा. 2 ओह्म। यह प्रमाणित किया जा सकता कि बाहर की बाधा पर सर्वाधिक (maximum) शक्ति प्राप्त करने के लिए बैटरी पर लगाये गये बाधक की बाधा बैटरी की बाधा बा. 1 के बराबर होनी चाहिए।[1]

अथवा सर्वाधिक शक्ति प्राप्त करने के लिए

बा. 1=बा. 2

यह नियम यहाँ पर ही नहीं वरन् उन सभी स्थानों पर जहाँ किसी विद्युत-स्रोत के साथ कोई बाधक अथवा रुकावट लगाई जावे समान रूप से प्रभावी है।

---

१. उपर्युक्त वर्णन निम्न उदाहरण से पुष्ट किया जा सकता है :—

माना कि बैटरी की वोल्टेज 6 वोल्ट है।

बैटरी की बाधा 2 ओह्म है।

बैटरी के सिरों पर लगाये बाधा के भिन्न अर्घों पर उस बाधक पर प्राप्त शक्ति निम्नानुसार होगी :—

शक्ति=IE लेकिन E=IR अत:

शक्ति=I^2R

यदि बाधक की बाधा 1 ओह्म हो तो धारा$=\frac{6}{2+1}=2$ एम्पीयर

अत: शक्ति=$2\times2\times1=4$ वाट।

व्यवहार में वाल्व प्राय: अधिक बाधा के स्रोत होते हैं और जब कभी कम रुकावट के लाउडस्पीकर को वाल्व (आउटपुट भाग) से शक्ति देनी होती है तो कुछ कठिनाई होती है । प्राय: वाल्वों की रुकावट (R_p) 3000 से 5000 ओह्म तक होती है और मूविंग कॉइल लाउडस्पीकर की रुकावट 2 से 6 ओह्म तक । अगर लाउडस्पीकर वाल्व की श्रेणी में लगा दिया जाय तो लाउडस्पीकर पर प्राप्त शक्ति (ध्वनि) वाल्व द्वारा मिलने वाली शक्ति का बहुत छोटा अंश होगी । लाउडस्पीकर पर अधिक से अधिक शक्ति प्राप्त करने के लिए वाल्व तथा लाउडस्पीकर की रुकावट बराबर होना आवश्यक हैं । इस कठिनाई को दूर करने के लिए कि ऐसी युक्ति की आवश्यकता है जो वाल्व की रुकावट को कम कर सके अथवा लाउडस्पीकर की रुकावट बढ़ा सके ।

उपर्युक्त कार्य के लिए सबसे सरल तथा उपयुक्त साधन ट्रान्सफॉर्मर है। वाल्व पर प्राप्त ध्वनि ए. सी. की लहर होती है तथा ट्रान्सफॉर्मर के प्राथमिक (primary) और द्वितीय (secondary) के लपेटों का अनुपात कम अथवा अधिक करके वोल्टेज कम अथवा अधिक की जा सकती है। इस परिवर्तन से शक्ति में कोई विशेष अन्तर नहीं पड़ता है। यदि वोल्टेज बढ़ेगी तो धारा कम होगी और यदि वोल्टेज कम होगी तो धारा बढ़ेगी । जब वोल्टेज कम होकर धारा बढ़ती है तो स्रोत की प्रभावी (effective) रुकावट भी कम होती है । इसका अर्थ यह है कि एक स्टेप डाउन ट्रान्सफॉर्मर द्वारा कम रुकावट भी अधिक रुकावट के स्रोत से जोड़ी जा सकती है तथा उस रुकावट पर सर्वाधिक शक्ति प्राप्त की जा सकती है ।

बाहर का बाधक 2 ओह्म होने पर

$$\text{धारा} = \frac{6}{2+2} = 1\cdot5 \text{ एम्पीयर ।}$$

$$\text{शक्ति} = 1\cdot5 \times 1\cdot5 \times 2 = 4\cdot5 \text{ वाट}$$

बाहर का बाधक 3 ओह्म होने पर

$$\text{धारा} = \frac{6}{2+3} = 1\cdot2$$

$$\text{शक्ति} = 1\cdot2 \times 1\cdot2 \times 3 = 4\cdot3 \text{ वाट}$$

इस प्रकार यदि बाधक की बाधा और बढ़ाई जावे तो शक्ति कम होती जावेगी । अत: सर्वाधिक शक्ति प्राप्त करने के लिए बाहर की बाधा अन्दर की बाधा के बराबर (2 ओह्म) होनी चाहिए ।

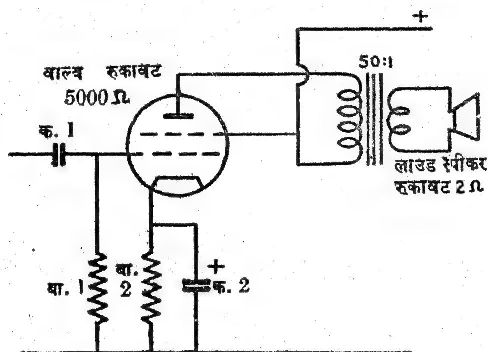
साधारणतः यदि स्रोत की रुकावट r ओह्म है और लगाई गई रुकावट R ओह्म है तथा ट्रान्सफार्मर के प्राथमिक और द्वितीय के लपेटों की संख्या क्रमशः N_1 और N_2 हैं तो रुकावट पर सर्वाधिक शक्ति प्राप्त करने के लिए

$$\frac{r}{R} = \frac{N_1^2}{N_2^2}$$

अथवा $$\sqrt{\frac{r}{R}} = \frac{N_1}{N_2}.$$

नीचे के उदाहरण में यह सिद्धान्त समझाया गया है। अंग्रेज़ी में यह मैचिंग (matching) कहलाता है।

उदाहरण—2 ओह्म का लाउडस्पीकर 5000 ओह्म रुकावट वाले आउटपुट वाल्व के सरकिट में लगाना है तो इस कार्य के लिए प्रयुक्त ट्रान्सफॉर्मर के प्राथमिक और द्वितीय के लपेटों का अनुपात निम्नानुसार निकाला जा सकता है।



चित्र 192.

आउटपुट भाग में ट्रान्सफार्मर का मैचिंग के लिए प्रयोग.

ऊपर लिखित गुर के अनुसार

$$\sqrt{\frac{r}{R}} = \frac{N_1}{N_2}$$

अथवा $$\sqrt{\frac{5000}{2}} = \frac{N_1}{N_2}$$

$$\sqrt{2500} = \frac{N_1}{N_2}$$

$$50 = \frac{N_1}{N_2}$$

इस प्रकार प्राथमिक और द्वितीय के लपेटों का अनुपात 50 होगा। चित्र 192 में यह दिखाया गया है।

द्वितीय परिशिष्ठ

कम्पनांक का लहर लम्बाई में तथा लहर लम्बाई का कम्पनांक में परिवर्तन

(Conversion of frequency into wave-length and vice versa)

रेडियो के लिए काम में आने वाली लहरों को कभी लहर लम्बाई द्वारा तथा कभी कम्पनांक द्वारा प्रदर्शित किया जाता है। कम्पनांक तथा लहर लम्बाई यह दोनों आपस में सम्बन्धित हैं। इनका यह सम्बन्ध प्रकरण दो में दिया जा चुका है।

गति = लहर लम्बाई × कम्पनांक

$$(V = n\lambda)$$

अथवा कम्पनांक = $\frac{\text{गति}}{\text{लहर लम्बाई}}$

रेडियो की लहरों की गति 300,000,000 मीटर प्रति सैकिण्ड (186,000 मील प्रति सैकिण्ड) है।

अतः

कम्पनांक (साईकिल प्रति सैकिण्ड) = $\frac{300,000,000}{\text{लहर लम्बाई (मीटरों में)}}$

इस प्रकार प्राप्त कम्पनांक साइकिल प्रति सैकिण्ड में होता है। यह साइकिल प्रति सैकिण्ड (स. सा./अथवा Kc/s) में

लहर लम्बाई (मीटरों में) = $\frac{3000,000}{\text{कम्पनांक (स. सा./से.)}}$

कम्पनांक का प्रयोग लहर लम्बाई की अपेक्षा अधिक वैज्ञानिक है। आगे के पृष्ठों पर दी गई तालिका द्वारा कम्पनांक लहर लम्बाई में अथवा लहर लम्बाई कम्ननांक में बदली जा सकती है।

तालिका

सहस्र साईकिल से मीटर अथवा मीटर से सहस्र साईकिल

(Kc/s to meter or meter to Kc/s)

स. सा. अथवा मीटर	मीटर अथवा स. सा.	स. सा. अथवा मीटर	मीटर अथवा स. सा.	स. सा. अथवा मीटर	मीटर अथवा स. सा.	स. सा. अथवा मीटर	मीटर अथवा स. सा.
10	30,000	500	600	1080	277·8	1700	176·5
20	15,000	520	577	1100	272·7	1720	174·4
30	1,000	540	555·6	1120	267·8	1740	172·4
40	7,500	560	535·8	1140	263·1	1760	170·5
50	6 000	580	516·3	1160	258·6	1780	168·5
60	5,000	600	500·0	1180	254·2	1800	166·6
70	4,285	620	483·9	1200	250·0	1820	164·7
80	3,750	640	468·8	1220	245·9	1840	162·9
90	3,333	660	454·6	1240	241·9	1860	161·2
100	3,000	680	441·2	1260	238·1	1880	159·5
120	2,500	700	428·5	1280	234·3	1900	157·8
140	2,143	720.	416·6	1300	230·7	1920	156·2
160	1,875	740	405·4	1320	227 2		
180	1,660	760	394·7	1340	223·7	1940	154·5
200	1,499	780	384·6	1360	220·5	1960	153·0
220	1,363	800	375·0	1380	217·4	1980	151·4
240	1,249	820	365·8	1400	214·3	2000	150·0
260	1,153	840	357·1	1420	211·2	2020	148·4
280	1,110	860	348·8	1440	208·3	2040	147·0
300	1,000	880	340·9	1460	205·5	2060	145·5
320	968·4	900	333·3	1480	202·7	2080	144·1
340	882·3	920	326·1	1500	200·0	2100	142·8
360	883·3	940	319·2	1520	197·3	2120	141·4
380	789·3	960	312·5	1540	194·8	2140	140·1
400	750·0	980	303·9	1560	192·3	2160	138·8
420	714·3	1000	300·0	1580	189·4	2180	137·5
440	681·8	1020	294·1	1600	187·5	2200	136·3
460	651·2	1040	288·5	1620	185·2	2220	135·1
480	625	1060	283	1680	178·5	2240	133·8

स. सा. अथवा मीटर	मीटर अथवा स. सा.	स. सा. अथवा मीटर	मीटर अथवा स. सा.	स. सा. अथवा मीटर	मीटर अथवा स. सा.	स. सा. अथवा मीटर	मीटर अथवा स. सा.
2260	132·7	2860	104·8	3460	96·70	4060	73·89
2280	131·5	2880	104·1	3480	86·21	4080	73·53
2300	130·4	2900	103·4	3500	85·71	4100	73·17
2320	129·2	2920	102·7	3520	85·23	4120	72·81
2340	128·1	2940	102·0	3540	84·75	4140	72·46
2360	127·0	2960	101·3	3560	84·27	4160	72·07
2380	126·0	2980	100·6	3580	83·80	4180	71·77
2400	124·9	3000	100·0	3600	83·33	5200	71·35
2420	123·9	3020	99·34	3620	82·87	4220	71·09
2440	122·9	3040	98·69	3640	82·42	4240	70·78
2460	121·9	3060	98·04	3660	81·97	4260	70·42
2480	120·9	3080	97·40	3680	81·52	4280	70·09
2500	119·9	3100	96·78	3700	81·08	4300	69·77
2520	119·0	3120	96·16	3720	80·65	4320	69·44
2540	118·0	3140	95·54	3740	80·22	4340	69·12
2560	117·1	3160	94·94	3760	79·79	4360	68·81
2580	116·2	3180	94·34	3780	79·37	4380	68·48
2600	115·3	3200	93·75	3800	78·94	4400	68·18
2620	114·4	3220	93·17	3820	78·53	4420	67·87
2640	113·6	3240	92·60	3840	78·12	4440	67·57
2660	112·7	3260	92·03	3860	77·71	4460	67·26
2680	111·9	3280	91·47	3880	77·31	4480	66·96
2700	111·0	3300	90·92	3900	76·92	4500	66·77
2720	110·2	3320	90·37	3920	79·52	4520	64·37
2740	109·4	3340	89·83	3940	76·14	4540	66·08
2760	108·6	3360	89·29	3960	75·55	4560	65·79
2780	107·8	3380	88·76	3980	75·33	4580	65·5
2800	107·1	3400	88·23	4000	75·00	4600	65·12
2820	106·3	3420	87·72	4020	74·62	4620	64·94
2840	105·6	3440	87·21	4040	74·25	4640	64·66